राष्ट्रीय सहारा
नई दिल्ली • बुधवार • 12 जून • 2024
www.rashtriyasahara.com

अनमोल वचन

दूसरों के मामलों में न्याय हो यह सभी को भाता है।
-इटली की कहावत

परिवर्तन एवं निरंतरता

सोमवार को प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपने सहयोगियों के काम-काज का बंटवारा जिस तरह से किया उससे परिवर्तन, निरंतरता और स्थायित्व के सवाल सामने आए हैं। 2024 के लोक सभा चुनाव में जनादेश का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया जाए तो उसके दो निष्कर्ष सामने आते हैं कि इस जनादेश के बाद कुछ चीजें बदलतीं दिखाई देती हैं जबकि अन्य अपेक्षाकृत निरंतर बने रहें। भाजपा अपने बल सर स्पष्ट बहुमत लाने में असफल रही। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र में उसे विशेष रूप से सीटों का नुकसान हुआ। लेकिन केंद्र में मोदी के नेतृत्व में ही सरकार बनी और सरकार के स्वरूप में ज्यादा बदलाव नहीं हुआ। यह बताता है कि पिछली सरकार के कार्यों को ही आगे बढ़ाया जाएगा। एनडीए सरकार में भी राजनाथ सिंह रक्षा, अमित शाह गृह, निर्मला सीतारमण वित्त और एस. जयशंकर विदेश मंत्रालय का कार्यभार संभालेंगे। ये चारों वरिष्ठ मंत्री प्रधानमंत्री के नेतृत्व वाले सुरक्षा मामलों की कैबिनेट कमेटी (सीसीएस) का पिछली सरकार की तरह हिस्सा रहेंगे। सीसीएस अति महत्त्वपूर्ण समूह है जिस पर बड़े फैसले लेने की जिम्मेदारी होती है। प्रधानमंत्री ने सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए आवश्यक आधारभूत संरचनाओं से संबंधित विभागों में भी निरंतरता बनाए रखी। नितिन गडकरी सड़क परिवहन और हाईवे की जिम्मेदारी संभालते रहेंगे। सर्वानंद सोनोवाल ने बंदरगाह, जहाजरानी और जलमार्ग विभाग संभालते रहेंगे। ज्योतिरादित्य सिंधिया से नागरिक उड्डयन मंत्रालय लेकर टीडीपी के राममोहन नायडू को भले दे दिया गया लेकिन सिंधिया को आधारभूत संरचना से जुड़े विभाग संचार और पूर्वोत्तर क्षेत्र के विकास का दायित्व सौंपा गया है। मोदी ने अपने मंत्रिमंडल में शिवराज सिंह चौहान, मनोहर लाल खट्टर जैसे कुछ नये चेहरों को शामिल करके उनके अनुभव का इस्तेमाल करने का प्रयास किया है। हालांकि मोदी ने चिराग पासवान जैसे कुछ युवा नेताओं पर भी भरोसा जताया है। भाजपा के दो सहयोगी दलों शिवसेना और अजित पवार की एनसीपी ने विभागों के बंटवारे को लेकर नाराजगी जाहिर की है। प्रधानमंत्री मोदी को अटलबिहारी वाजपेयी से राजनीतिक विरासत मिली है। गठबंधन धर्म शब्द का सृजन वाजपेयी ने ही किया था। उन्होंने सहयोगियों के साथ हमेशा गठबंधन धर्म का पालन किया था। मोदी भी रूठे हुए सहयोगियों को मनाने में वाजपेयी का अनुसरण करेंगे।

संकट पानी का

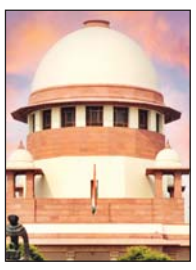

देश में भीषण गरमी पड़ रही है। राजधानी गरमी से तप रही है। इसके साथ ही जल संकट भी बढ़ता जा रहा है। दिल्ली सरकार ने पानी की किल्लत के चलते सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया। अदालत ने दिल्ली सरकार की याचिका में खामियों को दूर न करने पर दिल्ली सरकार को फटकार लगाई है। गौरतलब है कि सुप्रीम कोर्ट दिल्ली सरकार की पिछली याचिका के दौरान ही इसमें जो भी त्रुटियां थीं, उस बाबत बता चुका था। उन त्रुटियों को दूर न करने के कारण याचिका खारिज करने की बात भी अदालत ने कही। अदालत ने कहा कि मामला जितना भी महत्त्वपूर्ण क्यों न हो, अदालत की कार्रवाई के मामले में कोई पूर्व राय न बताएं। दिल्ली सरकार द्वारा सीधा दस्तावज का पुलिंदा अदालत के समक्ष रखे जाने पर नाराजगी व्यक्त करते हुए अखबारों में आ रहीं खबरों का हवाला भी दिया। दिल्ली में पानी का संकट अचानक नहीं आया है। प्रति वर्ष गरमियों के दौरान पानी की किल्लत को लेकर रहवासियों को परेशान होना पड़ता है। दिल्ली के मुख्यमंत्री हरियाणा और उप्र की भाजपा सरकारों को पानी की कमी के लिए सीधा दोषी ठहरा रहे हैं। हालांकि खबरें ऐसी भी हैं कि जल बोर्ड की नाकामी के चलते पाइप लाइनों की लीकेज के कारण कई इलाकों में पानी बेकार बहकर बर्बाद हो रहा है। मौजूदा हालात में पानी की मांग मौजूदा उत्पादन क्षमता से काफी बढ़ चुकी है। विभिन्न इलाकों में सप्लाई की पूर्ति न होने के कारण टैंकरों से आपूर्ति की जाती है। निजी टैंकरों से बेचा जाने वाले पानी की मनचाही कीमत वसूली जाती है जिसे लेकर कई बार विवाद भी हो चुका है। मगर इसका कोई ठोस समाधान नहीं ढूंढा जाता। राजधानी में लाखों लोग बूंद-बूंद पानी के लिए तरस रहे हैं। राज्य सरकार की जिम्मेदारी है कि वह गरमियों की शुरुआत में ही जल संकट से निपटने की तैयारियां चालू कर दे। आम जनता को पानी मुहैया कराना सरकार की जिम्मेदारी है। कोरी राजनीति और दोषारोपण के भरोसे सरकार नहीं चलती। केंद्र को भी ऐसी नीतियां बनानी होंगी, जिनसे पानी के संकट से आम लोगों को कम से कम जूझना पड़े। कहना न होगा कि अपनी पीठ थपथपाने से हमेशा वाहवाही नहीं होती। जल भंडारण और पानी की बर्बादी रोकने के काम हमें बेहद गंभीरतापूर्वक और फौरन करने होंगे। स्यापा करने या दोष मढ़ने से पानी की किल्लत समाप्त नहीं की जा सकती।

नक्सलवाद/अमित बैजनाथ गर्ग

सख्त फैसलों से टूटेगी कमर

केंद्र और राज्य सरकारों का दावा है कि उनके कठोर रुख अपनाने के बाद नक्सलवाद की समस्या में लगातार कमी आ रही है। आंकड़े बताते हैं कि 2017 से लेकर आज तक नक्सल प्रभावित जिलों की संख्या लगातार घटी है। नक्सली हिंसा में कमी की बात करें तो 2008 में 223 जिले नक्सल प्रभावित थे, लेकिन सरकार के प्रयासों से इनमें कमी आई और 2014 में यह संख्या 161 रह गई। वहीं 2017 में नक्सल प्रभावित जिलों की संख्या और घटकर 126 रह गई। छत्तीसगढ़, झारखंड, ओडिशा और बिहार को सबसे ज्यादा नक्सल प्रभावित राज्यों की श्रेणी में रखा गया है।

साल 1967 में शुरू हुई इस समस्या को जड़ से मिटाने में अब तक कोई भी सरकार पूरी तरह सफल नहीं हो पाई है। नक्सलवाद यानी नक्सलवादी विचारधारा एक आंदोलन से जुड़ी हुई है। 1960 के दशक में कम्युनिस्टों यानी साम्यवादी विचारों के समर्थकों ने इस आंदोलन का आरंभ किया था। इस आंदोलन की शुरुआत पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के गांव नक्सलबाड़ी से हुई थी, इसलिए यह नक्सलवादी आंदोलन के रूप में चर्चित हो गया। इसमें शामिल लोगों को नक्सली कहा जाता है। नक्सलवाद बंगाल के नक्सलबाड़ी में विकास के अभाव और गरीबी का नतीजा है। इस आंदोलन के समर्थक भुखमरी, गरीबी और बेरोजगारी से आजादी की मांग करते रहे हैं। आजादी के बाद भूमि सुधार की पहल हुई थी, लेकिन यह कामयाब नहीं रही। नक्सलबाड़ी किसानों पर जमींदारों का अत्याचार बढ़ता चला गया। इसके बाद किसान और जमींदारों के बीच जमीन विवाद पैदा हो गया। 1967 में कम्युनिस्टों ने सत्ता के खिलाफ सशस्त्र आंदोलन की शुरु आत की, जो आज तक जारी है। इतिहासकारों का मानना है कि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के नेता चारू मजूमदार ने कानू सान्याल और जंगल संथाल के साथ मिलकर सत्ता के खिलाफ किसान विद्रोह कर दिया था। 60 के दशक के आखिर और 70 के दशक के शुरुआती दौर में इस विद्रोह ने शहरी युवा और ग्रामीण, दोनों के दिलों में आग लगा दी थी।

सच कुछ और भी हैं

चुनाव परिणाम

अवधेश कुमार

अठारहवीं लोक सभा का चुनाव परिणाम ऐसा है जिसमें ज्यादातर पार्टियों को सार्वजनिक स्तर पर संतोष और प्रसन्नता व्यक्त करने के अनेक आधार हैं। हालांकि कोई भी विश्लेषण करने के साथ ध्यान रखना चाहिए कि लगातार दो बार सरकार में रहते हुए तीसरी बार गठबंधन के साथ सरकार बनाना साधारण परिघटना नहीं है। दूसरी ओर, विपक्ष की सम्मिलित सीटों का भाजपा के पीछे रहना भी परिणाम का एक बड़ा पहलू है। लेकिन सच यह भी है कि भाजपा की पिछले लोक सभा चुनाव से 63 सीटें और 80% मत घटे लेकिन राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के साथ उसे बहुमत प्राप्त हुआ।

कांग्रेस की सीटें 52 से बढ़कर 99 हो गई, मत प्रतिशत में भी लगभग 1.7% की वृद्धि हुई। तृणमूल कांग्रेस ने 29 और सपा ने 37 सीटों के साथ अपेक्षा से बेहतर प्रदर्शन किया। महाराष्ट्र में उद्धव ठाकरे को नौ एवं शरद पवार को आठ सीटें ऐसी हैं कि वे भी दुखी नहीं। विपक्ष की ओर से उम्मीद से बुरा प्रदर्शन बिहार में राजद का चार सीटें पाना है। जगनमोहन रेड्डी की वाईएसआर कांग्रेस चार सीटों के साथ बुरी पराजय को प्राप्त हुई। विपक्ष में निराशाजनक प्रदर्शन अरविंद केजरीवाल की आम आदमी पार्टी का भी है जो कांग्रेस से गठबंधन करने के बावजूद दिल्ली में फिर शून्य पर रही और पंजाब ने भी उसे निराश किया। वह केवल तीन सीटों तक सीमित रही है।

वास्तव में इस चुनाव परिणाम के साथ जिस ढंग से विश्लेषण आने शुरू हुए उनमें ज्यादातर एकपक्षीय थे। कांग्रेस, सपा या दूसरी पार्टियां भले कहें कि जनता ने भाजपा को हरा दिया लेकिन आरंभिक विजय उल्लास का शोर मचाने के दो-तीन दिनों बाद उन्हें भी भान हुआ कि इस परिणाम से उनके लिए सत्ता तक पहुंचना मुश्किल है। इसलिए आईएनडीआईए की बैठक में सरकार गठित करने के प्रयासों का फैसला नहीं हुआ। यह इस चुनाव परिणाम पर बड़ी टिप्पणी है। दूसरी ओर, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में राजग तथा भाजपा संसदीय दल की बैठक हुई और सबमें सार्वजनिक तौर पर उम्मीद और उत्साह का वातावरण देखा गया। मतों के हिसाब से देखें तो भाजपा अभी भी 36.5 प्रतिशत के साथ सबसे ऊपर है और कांग्रेस 21.19% के साथ दूसरे स्थान पर लेकिन दोनों के बीच लगभग 15% का अंतर बताता है कि भारत की राजनीति मोदी के 10 वर्षों के शासन के बावजूद अभी भी दोनों पार्टियों के लिए कहां-कहां है।

भाजपा के लिए निश्चित रूप से उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र तीन बड़े आघात हैं। अगर उत्तर प्रदेश में ही उसे 32 स्थान और मिल गए होते तो उसे बहुमत प्राप्त हो जाता। उसे 41.37 प्रतिशत वोट मिले हैं जो पिछली बार से करीब 8 प्रतिशत कम है। इस पर गहराई से

विचार करने की आवश्यकता है कि ऐसा क्यों हुआ। सपा को 33.59 प्रतिशत मत मिले जो अब तक का उसका सबसे बेहतर प्रदर्शन है। कांग्रेस का वोट 6.4 प्रतिशत से बढ़कर 9.46 प्रतिशत हो गया और बसपा का मत 12.8 प्रतिशत से घटकर 9.39 हो गया। पश्चिम बंगाल में तृणमूल कांग्रेस को 45.76% तो भाजपा के 38.7% मत हैं। दोनों के मतों में पिछले लोक सभा चुनाव की तुलना में यह बड़ा अंतर है। कम्युनिस्ट पार्टियों ने भी कुल मिलाकर 6.5% के आसपास मत प्राप्त किया है जिसमें माकपा 5.67% है। कांग्रेस का मत घटकर 4.68% रह गया है। महाराष्ट्र में 13 सीटों के साथ कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी है लेकिन वोट के मामले में भाजपा को 26.18% तो कांग्रेस को 16.92% वोट मिले हैं। राकांपा शरद को 10.27% वोट मिला है तो शिवसेना उद्धव ठाकरे को 16.7% मिले हैं। अजीत पवार की राकांपा को 3.60% वोट तथा शिवसेना शिंदे को 12.95% वोट मिले हैं। इन मतों का हम अपने अनुसार विश्लेषण कर सकते हैं। सच यह है कि इस चुनाव में तीन चार पहलू बहुत साफ दिख रहे थे। एक मोदी सरकार के विरुद्ध व्यापक असंतोष कहीं नहीं दिखता था। 500 वर्षों के बाद अयोध्या में श्रीराम मंदिर का निर्माण हुआ, रामलला की प्राण-प्रतिष्ठा हुई, पूरे देश में अभूतपूर्व वातावरण बना, दुनिया भर में भारत विरोधी आतंकवादी मारे जा रहे हैं, भारत विश्व स्तर पर प्रभावशाली भूमिका में है, अर्थव्यवस्था विश्व में सबसे तेज गति से बढ़ रही है, भविष्य की तस्वीरें शानदार हैं। बावजूद अगर भाजपा के लोगों और समर्थकों में सरकार को पूरे देश में हर जगह भारी बहुमत से जीतने के लिए उत्साह से काम करने की प्रेरणा नहीं है और अनेक जगह वे विरोध में हैं तो बड़ी बीमारी का परिणाम हो सकता है जिसकी गहराई से समीक्षा नहीं करने पर भाजपा के लिए आगे संकट हो सकता है।

गठबंधन सरकार चलाने की मजबूरी में पार्टी का जनाधार घटने का जोखिम रहता है खासकर भाजपा जैसी विचारधारा और बहुमत में भावुकता से काम करने वाले कार्यकर्ताओं वाली पार्टी को। वैसे प्रधानमंत्री मोदी एवं गठबंधन नेताओं के भाषणों से संतुलन और समन्वय का संदेश निकला है। बावजूद ओडिशा, मप्र, गुजरात, दिल्ली, हिमाचल, उत्तराखंड, तेलंगाना आदि में भाजपा का शानदार प्रदर्शन बताता है कि मोदी नाम, विचार और कार्य व्यवहार का प्रभाव काफी हद तक कायम है। हालांकि कांग्रेस के लिए यह चुनाव विजय उत्सव जैसा नहीं है क्योंकि लगातार तीन चुनावों में भी वह 100 सीटों के नीचे है। यह भी ध्यान रखिए कि भाजपा के साथ जिन 215 सीटों पर उसका सीधा मुकाबला हुआ उनमें 153 पर वह पराजित हुई। पिछली बार 190 सीटों की सीधी टक्कर में भाजपा ने 175 सीट हासिल की थीं। भाजपा ने 441 सीटों पर उम्मीदवार उतारे और उसकी जीत की दर 55% से ज्यादा रही जबकि कांग्रेस ने 328 में केवल 30% उम्मीदवारों को सफलता दिलाई।

इस चुनाव परिणाम के डरावने पक्ष भी हैं। पंजाब से इंदिरा गांधी की हत्या करने वाले सुरक्षाकर्मी बेअंत सिंह के बेटे सरबजीत सिंह, आतंकवाद के आरोपों में जेल में बंद अमृतपाल सिंह और कश्मीर से शेख अब्दुल रशीद उर्फ इंजीनियर रशीद का चुनाव जीतना क्या हमें डराता नहीं है? सरबजीत सिंह खालसा पूरे चुनाव में यही कहता रहा कि जिस प्रधानमंत्री ने श्रीअकाल तख्त साहब को उठाया यदि उसका पोता सांसद बन सकता है तो इस अपमान का बदला लेने वाले बेअंत सिंह का बेटा संसद में क्यों नहीं जा सकता। इसके अनुसार लोगों ने मतदान किया तो यह मतदाताओं के सामान्य मनोविज्ञान का परिचायक नहीं है। इसी तरह चुनाव में जाति का बोलबाला और उसके अनुसार आए परिणाम भी बहुत कुछ सोचने को विवश करता है।

> चुनाव परिणाम के डरावने पक्ष भी हैं। पंजाब से इंदिरा गांधी की हत्या करने वाले सुरक्षाकर्मी बेअंत सिंह के बेटे सरबजीत सिंह, आतंकवाद के आरोपों में जेल में बंद अमृतपाल सिंह और कश्मीर से शेख अब्दुल रशीद उर्फ इंजीनियर रशीद का चुनाव जीतना क्या हमें डराता नहीं है? सरबजीत चुनाव में यही कहता रहा कि जिस प्रधानमंत्री ने श्रीअकाल तख्त साहब को उठाया यदि उसका पोता सांसद बन सकता है तो इस अपमान का बदला लेने वाले बेअंत सिंह का बेटा क्यों नहीं

चांदी बन रही भविष्य का सोना

- कभी गरीबों की गोल्ड कही जाने वाली सिल्वर भविष्य का गोल्ड होने जा रही है। चांदी की बढ़ रही मांग और कीमतों ने निवेशकों से लेकर खुदरा खरीदारों तक में चांदी की पूछ बढ़ा दी है
- मिलेनियल्स में चांदी की लाइटवेट जूलरी की मांग तेजी से बढ़ रही है। चांदी की जूलरी पहनने का पश्चिमी कांसेप्ट अब भारत में रंग जमाने लगा है

मीडिया इनपुट

जम्मू-कश्मीर में हिन्दू तीर्थयात्रियों पर पाकिस्तानी आतंकियों के विचलित करने वाले हमले का पूरी दुनिया संज्ञान ले। आर्थिक बदहाली का शिकार होने के बावजूद पाकिस्तान भारत के विरुद्ध छद्म युद्ध से बाज नहीं आ रहा है। आतंकवादियों की बेहद शर्मनाक हरकत!

शेहला राशिद, टिप्पणीकार
@Shehla-Rashid

मधुर संबंधों के गवाह बने पड़ोसी देश

मुद्दा | **प्रमोद भार्गव**

नरेन्द्र मोदी ने जवाहरलाल नेहरू की बराबरी करते हुए तीसरी बार प्रधानमंत्री पद की शपथ ले ली है। इस बार भाजपा की सरकार राजग गठबंधन पर निर्भर रहेगी क्योंकि भाजपा स्पष्ट बहुमत के 272 के आंकड़े से बहुत पीछे रह गई है। हालांकि शपथ के साथ ही मोदी ने न केवल समझौतावादी जनादेश स्वीकार किया बल्कि पड़ोसी देशों के राष्ट्र प्रमुखों को शपथ के अवसर पर आमंत्रित कर उनके साथ मधुर संबंध बनाए रखने का उदार संदेश भी दे दिया है।

गणतंत्र के इस समारोह में बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना, मॉरिशस के प्रधानमंत्री प्रविंद्र जगननाथ, मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मोइज्जु, श्रीलंका के राष्ट्रपति रानिल विक्रमसिंघे, सेशेल्स के उपराष्ट्रपति अहमद अफीफ, नेपाल के प्रधानमंत्री पुष्पकमल दहल 'प्रचंड' और भूटान के प्रधानमंत्री शेरिंग तोबगे शामिल हुए। भारत की ओर से यह पहल 'पड़ोसी पहले और सागर दृष्टिकोण' की नीतियों को कारगर बनाने की दृष्टि से की गई है। साफ है, पड़ोसी और समुद्र मोदी के तीसरे कार्यकाल में सर्वोच्च प्राथमिकता में रहेंगे। 2014 में मोदी ने सार्क यानी दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन के देशों और 2019 में बिम्सटेक यानी बंगाल की खाड़ी की पहल से जुड़े देशों के प्रमुखों को आमंत्रित किया था। इस संगठन का मुख्य उद्देश्य बंगाल की खाड़ी के किनारे बसे देशों के बीच परस्पर आर्थिक सहयोग बढ़ाना है। इन देशों में भारत, बांग्लादेश, म्यांमार, श्रीलंका और थाईलैंड शामिल हैं। इन देशों में भारत क्षेत्रफल, आबादी और अर्थव्यवस्था की दृष्टि से सबसे बड़ा देश है। दस साल पहले मनमोहन सिंह की संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार में भारतीय अर्थव्यवस्था का विश्व में 11वां स्थान था, जो मोदी के 10 साला कार्यकाल में 3.70 लाख करोड़ अमेरिकी डॉलर के सकल घरेलू उत्पाद के आकार के साथ विश्व में पांचवें स्थान पर है। अर्थव्यवस्था के जानकार उम्मीद जता रहे हैं कि 2026 में भारतीय अर्थव्यवस्था जर्मन की आर्थिकी से आगे निकल कर वैश्विक स्तर पर चौथे स्थान पर होगी और 2027 में दुनिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था।

भारत ने उदारता दिखाते हुए मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मोइज्जु को आमंत्रित किया जबकि 2023 में जबसे मोइज्जु मालदीव के राष्ट्र प्रमुख बने हैं तभी से मालदीव और भारत के संबंधों में तनाव बना हुआ है। अपने चुनाव अभियान के दौरान मोइज्जु ने भारत के 88 सैनिकों

को देश से निकालने का आह्वान किया था। किंतु अब मोइज्जू ने कहा है कि उनके लिए इस ऐतिहासिक अवसर में भागीदारी सम्मान की बात है। उम्मीद है कि अब दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय संबंध सकारात्मक दिशा में बढ़ेंगे। दक्षेस मसलन हमारे वे पड़ोसी देश जो हमारी जमीनी अथवा समुद्री सीमा से जुड़े हैं। इन देशों की संख्या 8 है। ये देश हैं पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, मालदीव और श्रीलंका। हालांकि चीन भी हमारी सीमा से जुड़ा है, लेकिन दक्षेस का सदस्य नहीं है। इस समूह में यदि मॉरिशस, ईरान, म्यांमार और मध्य एशिया के पांच गणराज्य भी शामिल हो जाएं तो इसकी ताकत वैश्विक मुद्दों में हस्तक्षेप के लायक बन सकती है। दक्षेस देश दुनिया के तीन फीसद भूगोल में फैले हैं। दुनिया की मौजूदा आबादी की 21 प्रतिशत जनसंख्या इन्हीं देशों में है। इन देशों में कुल क्षेत्रफल और जनसंख्या में भारत की हिस्सेदारी 70 फीसद से ज्यादा है। 80 फीसद आर्थिकी पर भी भारत काबिज है। हालांकि वैश्विक कारोबार की तुलना में इन देशों का परस्पर कुल व्यापार 5 फीसद ही है। इस लिहाज से ये देश न तो व्यापार के क्षेत्र में सफल रहे और न ही शांति बरकरार रखने में कामयाब हुए। इस नाते इस संगठन का ज्यादा महत्त्व नहीं रह गया है। पाक निर्यातित आतंक कालांतर में युद्ध का कारण बनता है तो दक्षेस का भंग होना तय है। मोदी न केवल दक्षेस, बल्कि आसियान देशों के बीच मुक्त व्यापार के पक्षधर हैं लेकिन पाक बाधाएं पैदा करने से बाज नहीं आता।

मोदी आतंकवाद के प्रखर विरोधी रहे हैं। आतंकवाद के खिलाफ उनकी मुखरता के चलते आज भारत समेत दुनिया में आतंकवाद कमजोर हुआ है। गौरतलब है कि दक्षेस के गठन में पाकिस्तान की अहम भूमिका थी। पाक के पूर्व राष्ट्रपति जियाउर रहमान ने इस परिकल्पना को अंजाम तक पहुंचाया था। 1981 में भारत समेत अन्य दक्षेस देशों के विदेश सचिवों की पहली बैठक बांग्लादेश में हुई थी। बाद में 1983 में विदेश मंत्रियों की बैठक नई दिल्ली में हुई और इसी बैठक में 'दक्षिण एशियाई सहयोग संगठन' वजूद में आया किंतु अब पाकिस्तान चीन के कर्ज में फंसकर उसके इशारों पर नाचने को मजबूर है। भारत-पाक के संबंध आजादी के बाद से ही नरम-गरम बने रहे हैं। जम्मू-कश्मीर के 78,000 वर्ग किमी. भूभाग पर पाकिस्तान का अतिक्रमण है। नियंत्रण रेखा के उल्लंघन और सीमा पार से गोलीबारी और आतंकी गतिविधियां जारी हैं। बार-बार इन गतिविधियों पर अंकुश लगाने की मांगों को पाकिस्तान अनदेखा करता रहा है। जाहिर है, रिश्तों को मधुर बनाने में दिलचस्पी नहीं ले रहा। अतएव पाकिस्तान को छोड़ अन्य पड़ोसियों को शपथ समारोह में आमंत्रित किया जाना साफ संदेश है कि नरेन्द्र मोदी उदार तो हैं, लेकिन आतंकवाद की सरपरस्ती करने वाले देश के प्रति कठोर भी हैं।

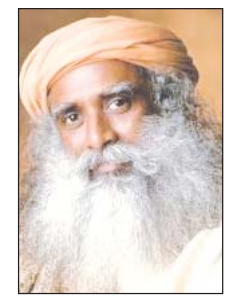

पर्यावरण और मिट्टी | **सद्गुरु**

इस ग्रह पर 87 प्रतिशत जीवन रूप-सूक्ष्म जीव, कृमि, कीट, पक्षी, पशु, मनुष्य, पौधे, पेड़ और ग्रह पर मौजूद हर दूसरी वनस्पति औसतन 39 इंच ऊपरी मिट्टी पर निर्भर है। पिछले चालीस वर्षों में दुनिया की 40 प्रतिशत ऊपरी मिट्टी नष्ट हो चुकी है। संयुक्त राष्ट्र का कहना है कि हमारे पास 80 से 100 फसलों के लिए ही मिट्टी बची है। इसका मतलब है कि हमें 45 से 60 साल तक खेती करनी होगी। उसके बाद, हमारे पास भोजन पैदा करने के लिए मिट्टी नहीं बचेगी। आप कल्पना कर सकते हैं कि दुनिया में कितनी पीड़ा होगी। भारत की दो तिहाई मिट्टी लगभग रेगिस्तान बन चुकी है। इसका मतलब है कि वहां कुछ भी उगाया नहीं जा सकता। इसलिए, इस भावी पीढ़ियों के लिए मिट्टी की रक्षा करना सबसे महत्त्वपूर्ण बात है। मृदा पुनरोद्धार पर्यावरण के लिए किस प्रकार सहायक हो सकता है? मैं जर्मनी में संयुक्त राष्ट्र की एक एजेंसी में बोल रहा था, और उन्होंने मुझसे पूछा, 'पारिस्थितिक आपदा को रोकने के लिए हमें कौन सी तीन चीजें करनी चाहिए?' मैंने कहा, 'ये तीन चीजे हैं, 'मिट्टी, मिट्टी और मिट्टी।' यह एक ऐसी चीज है जिस पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है क्योंकि शहरों में वायु प्रदूषण के बारे में बात करना फैशन बन गया है। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि यह चिंता का विषय नहीं है, लेकिन अगर आप मिट्टी को ठीक करने के लिए जरूरी कदम उठाते हैं, तो वह कदम पानी का भी ख्याल रखेगा। वायु प्रदूषण को कुछ ही समय में ठीक किया जा सकता है, अगर हम अपनी आर्थिक समृद्धि का थोड़ा त्याग करने को तैयार हों। लेकिन अगर आप उस मिट्टी को ठीक करना चाहते हैं जिसे आपने नष्ट कर दिया है, तो अगर आप आक्रामक तरीके से आगे बढ़ते हैं, तो इसमें 15-25 साल लगेंगे। अगर आप इसे बिना ज्यादा दिलचस्पी के करते हैं, तो मिट्टी को एक निश्चित स्तर तक लाने में 40-50 साल लग जाएंगे। यदि मिट्टी लंबे समय तक खराब स्थिति में रही तो इसका मतलब है कि दो से तीन पीढ़ियां जीवन की भयानक स्थिति से गुजरेंगी। भारत में लोग हजारों पीढ़ियों से एक ही जमीन पर खेती करते आ रहे हैं। लेकिन पिछली पीढ़ी में मिट्टी की गुणवत्ता इतनी खराब हो गई है कि यह रेगिस्तान बनने की कगार पर है।

रीडर्स मेल

सही में अब है एनडीए सरकार

मतदाता के हाथों में सचमुच में शक्ति है जो किसी भी तानाशाही सोच वाले महल को मत के जरिए जमींदोज कर सकती है। इस बार वही हुआ। सत्ता के हाथों में जो असीमित शक्तियां आ गई थीं, उन्हें कुछ दूसरे दलों के हाथों में भी दे दिया गया है ताकि एक आदमी की मर्जी एवं हठधर्मिता से देश को बचाया जा सके। कैबिनेट का गठन हो गया है। मगर क्या नरेन्द्र मोदी को पूर्व अनुभव है कि कैसे गठबंधन सरकार को चलाया जाएगा? वे एक दशक से अधिक तक गुजरात में सीएम रहे और उसके बाद पिछले 10 वर्षों से अधिक समय से देश के पीएम हैं, तो उन्हें विरासत में न सिर्फ पूर्ण बहुमत मिला, बल्कि कई दफा तो सहयोगियों को मिलाकर उन्हें तीन चौथाई सदस्यों के समर्थन के साथ काम करने का भी मौका मिला। इससे वे एकतरफा तरीके से अपने एजेंडे को लागू करते रहे। मगर आज सही मायने में एनडीए सरकार है। क्या अब यूसीसी, एनआरसी तथा एक देश एक चुनाव वाले बिल को मेज थपथपा कर पास करवा लेंगे? क्या अपने हिन्दुत्वादी एजेंडे को बाकी जरूरी कार्यों के साथ बढ़ा पाएंगे? मुझे तो लगता है 'अब आया है ऊंट पहाड़ के नीचे'।

जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

जीवन का साझा तत्व

जीवन असीम और अनंत यात्रा है, जिसमें उतार-चढ़ाव, खुशियों और दुखों के पल शामिल होते हैं। जीवन का अर्थ हर किसी के लिए अलग होता है, लेकिन एक साझा तत्व जो इसे जोड़ता है वह है प्यार। प्यार हमें दर्द और पीड़ा से उबरने में मदद करता है और मजबूती देता है। हालांकि, हर शुरुआत की तरह ही, हर अंत भी होता है। जीवन का चक्र पूरा होने पर मौत अनिवार्य है। मौत सच्चाई है जिससे कोई बच नहीं सकता। यह निश्चित अंत है, जिसके बारे में सोचना कई लोगों को डराता है। लेकिन मृत्यु भी जीवन का एक अभिन्न अंग है। यह नई शुरुआत की ओर ले जाती है, चाहे वह पुनर्जन्म का विश्वास हो या आध्यात्मिक रूप से जीवन के अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करना हो। हम जीवन का आनंद लेते हैं, प्यार करते हैं, और मौत का सम्मान करते हैं, क्योंकि तीनों एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। हम तभी वास्तव में जीवित हैं जब हम प्यार करते हैं, और प्यार ही है जो हमें मृत्यु के डर से मुक्त कराता है। यही जीवन का सार है-प्यार करना, जीना और यह भी स्वीकार करना कि सभी चीजों का एक अंत होता है।

चंदन कुमार नाथ, बरपेटा, असम

रियासी जिले के हमले ने झकझोरा

रियासी जिले के आतंकी हमले ने हम सबको झकझोर दिया है। आतंकियों की गोली से जब बस ड्राइवर ने नियंत्रण खोया और खाई में बस जा गिरी उसके बाद भी आतंकियों ने गोलियों की बौछार जारी रखी जब तक कि चीखों की आवाज रुकी नहीं। लश्कर-ए-तैयबा ने हमले की जिम्मेदारी ले ली है। हमारी सेना से हमें आशा है कि जल्द ही इन आतंकियों को पकड़ के मौत की नींद सुलाएगी। पिछले एक साल में लगभग 16 करोड़ टूरिस्ट कश्मीर गए हैं। इससे यह भी संदेश गया कि कश्मीर में सब शांत हो गया है जबकि पिछले कुछ महीनों में हुए आतंकी हमले साफ बता रहे हैं कि आतंकियों का साया अभी भी मंडरा रहा है। राज्य में बढ़ रहे पर्यटन से हमें इस गलतफहमी में बिल्कुल नहीं रहना है कि वहां सब कुछ सामान्य हो गया है।

बाल गोविंद, नोएडा

letter.editorsahara@gmail.com

हमें गर्व है हम भारतीय हैं

राष्ट्रीय सहारा • राष्ट्रीयता • कर्तव्य • समर्पण
वर्ष-33, अंक 299

सहारा इण्डिया मास कम्युनिकेशन के लिए प्रकाशक एवं मुद्रक जिया कादरी द्वारा सहारा इंडिया मास कम्युनिकेशन प्रेस, सी-2,3,4, सेक्टर-11, नोएडा में मुद्रित तथा 705-706, सातवां तल, नवरंग हाउस, 21 के.जी. मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित।
। समूह संपादक - डॉ. विजय राय। स्थानीय संपादक - रत्नेश मिश्र* ।
दूरभाष - दिल्ली कार्यालय - 23352368, 23352369, 23352371, 23352372, फैक्स - 23352370, दूरभाष - नोएडा प्रेस 0120-2444755, 2444756 फैक्स - 2550750
आर.एन.आई. सं. 53469/91, पंजीकरण संख्या UP/BR /GZB- 38/2024-2026
*इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन तथा कानूनी मामलों के लिए उत्तरदायी

संपादकीय

विभागों के बंटवारे से संदेश है कि नीतियां यथावत रहेंगी

मंत्रिपरिषद में विभागों के बंटवारे से मोदी-3 सरकार के इरादे स्पष्ट हैं। अहम चार मंत्रालयों- रक्षा, गृह, वित्त और विदेश में कोई बदलाव नहीं है। ये मंत्रालय योजनाओं और सुरक्षा की दशा व दिशा तय करते हैं। दूसरा अहम मंत्रालय कृषि एक ऐसे पूर्व सीएम को देना, जिसके अपने राज्य में कृषि पर लिए गए निर्णय सही रहे हैं, अच्छा कदम है। ग्रामीण क्षेत्र की नाराजगी इस चुनाव में साफ दिखी। लेकिन कृषि मंत्रालय को हर कदम पर वित्त मंत्रालय की सहमति चाहिए, जो व्यापक नीतिगत फैसले के आधार पर ही होगा। नई सरकार में अगर वही सोच रही तो मूल समस्या का निदान मुश्किल होगा। उदाहरण के लिए गरीब-अमीर की बढ़ती खाई इस मॉडल की कमजोरी है, जो सामाजिक असंतोष पैदा कर सकती है। लेकिन सरकार इस बढ़ती खाई को मानने के लिए भी तैयार नहीं है। दूसरा, इस खाई का अंजाम है गिरता एलएफपीआर (लेबर फोर्स पार्टिसिपेशन रेट) यानी कुल काम की आयु वाले लोगों का काम की मांग से भी हट जाना। यह खतरनाक स्थिति तब आती है जब लगातार काम न मिलने के कारण काम चाहने वाले वापस गांव लौट जाते हैं। देश में सबसे ज्यादा संगठित और असंगठित क्षेत्र की नियमित नौकरियां (करीब 12 करोड़) एमएसएमई सेक्टर देता है। उसका मंत्रालय आज के संकट को देखते हुए बेहद अहम होना चाहिए था। लेकिन यह मंत्रालय एक-सांसद वाले सहयोगी दल 'हम' के नेता और पूर्व सीएम को दिया गया, जो पहली बार राष्ट्रीय स्तर पर गवर्नेंस की जटिलताओं से दो-चार होंगे। किसान सम्मान निधि की किस्त देना या पांच किलो फ्री अनाज जारी रखना ग्रामीण भारत की मौलिक समस्या का समाधान नहीं हो सकता। यह कोरोना जैसे संकट के समय आकस्मिक बंदोबस्त तो हो सकता है, पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर बढ़ते असाधारण बोझ को वहन नहीं कर सकता।

प्रेरणा

आत्मा तुम्हारी है, शरीर प्रकृति का है और मन समाज का है। - ओशो

बाय इन्विटेशन • हम यह नहीं सोच सकते कि यूक्रेन में लड़ाई चल रही है, इससे हमें क्या?

युद्ध अगर जारी रहे तो पूरी दुनिया भुगतेगी

युवाल नोआ हरारी
चिंतक, इतिहासकार और लेखक

हमें अपने घुटनों की अहमियत तभी पता चलती है, जब वो काम करना बंद कर देते हैं। दुनिया के बारे में भी यही सच है। पुराने दिनों की खूबियां तभी साफ होती हैं, जब हालात बदल जाते हैं। 15 जून को स्विट्जरलैंड में होने जा रहे यूक्रेन शांति शिखर सम्मेलन से पहले दुनिया के नेताओं को इतिहास के इस नियम को ध्यान में रखना चाहिए। अगर शांति बहाल नहीं हुई, तो दुनिया भर में इसके विनाशकारी परिणाम महसूस किए जाएंगे। क्योंकि जब भी अंतरराष्ट्रीय नियम बेकार साबित होने लगते हैं, दुनिया के देश हथियारों के जखीरों और फौजी-गठजोड़ में अपनी सुरक्षा की तलाश करने लगते हैं। यूक्रेन की घटनाओं के मद्देनजर क्या कोई पोलैंड को अपने सैन्य-बजट को दोगुना करने, फिनलैंड को नाटो में शामिल होने या सऊदी अरब को अमेरिका से रक्षा-संधि करने के लिए दोषी ठहरा सकता है?

लेकिन दुर्भाग्य से, सैन्य-बजट में वृद्धि समाज के सबसे कमजोर सदस्यों की कीमत पर होती है, क्योंकि स्कूलों और अस्पतालों के हिस्से का पैसा टैंकों और मिसाइलों को चला जाता है। सैन्य-गठबंधनों के सुरक्षा-कवच से बाहर रह गए कमजोर देश आसान शिकार साबित होते हैं। जैसे-जैसे सैन्य-गुट दुनिया भर में फैलते हैं, व्यापारिक-मार्ग तनावपूर्ण होते जाते हैं और कारोबार में गिरावट आती है। इसकी सबसे बड़ी कीमत भी गरीबों को ही चुकानी पड़ती है। और जैसे-जैसे सैन्य-गुटों के बीच तनाव बढ़ता है, साथ ही इस बात का अंदेशा भी बढ़ने लगता है कि दुनिया के किसी सुदूर कोने में एक छोटी-सी चिंगारी भी पूरी दुनिया में आग को भड़का देगी।

हालांकि इस तरह के दृश्य हम मनुष्यों के लिए नए नहीं हैं। 2,000 से भी ज्यादा साल पहले सुन त्सु, कौटिल्य और थ्यूसीडाइड्स ने बताया था कि कैसे एक अराजक दुनिया में सुरक्षा की तलाश हर किसी को पहले से कम सुरक्षित बनाती चलती है। दूसरे विश्व युद्ध और शीत युद्ध जैसे पिछले अनुभवों ने हमें बार-बार सिखाया है कि वैश्विक-संघर्ष में कमजोर लोग ही सबसे ज्यादा पीड़ित होते हैं। उदाहरण के लिए, दूसरे विश्व युद्ध के दौरान हताहतों की सबसे ज्यादा दर डच ईस्ट इंडीज यानी आज के इंडोनेशिया में थी। जब 1939 में पूर्वी यूरोप में युद्ध छिड़ा तो ऐसा लगा कि यह जावा के चावल उगाने वाले किसानों से बहुत दूर हो रही कोई अलग-थलग घटना है, लेकिन पोलैंड में हुई घटनाओं ने एक ऐसी शृंखलाबद्ध प्रतिक्रिया को जन्म दिया, जिसमें लगभग 35 से 40 लाख इंडोनेशियाई मारे गए, ज्यादातर भुखमरी या जापानी कब्जेदारों के हाथों जबरन मजदूरी कराने के कारण। यह इंडोनेशियाई आबादी का 5% था, जो अमेरिका (0.3%), ब्रिटेन (0.9%) और जापान (3.9%) सहित कई प्रमुख युद्धरत देशों की तुलना में मरने वालों की अधिक दर थी। शीत युद्ध ने भी जकार्ता में भयंकर आग लगाई। 1965-66 में कम्युनिस्ट विरोधी हिंसा में 5 से 10 लाख इंडोनेशियाई मारे गए थे।

लेकिन आज हालात और बदतर हैं। बात केवल इतनी भर नहीं है कि एक परमाणु-युद्ध तटस्थ देशों के भी करोड़ों लोगों को खतरे में डाल देगा। इसके साथ ही, मानवता को जलवायु-परिवर्तन और बेकाबू एआई के अलावा अनेक अन्य अस्तित्वगत खतरों का भी सामना करना पड़ रहा है।

जैसे-जैसे सैन्य-बजट बढ़ता है, वैसे-वैसे वह पैसा- जो ग्लोबल वार्मिंग को हल करने में मदद कर सकता था- वह

लड़ाई शुरू करना आसान है, पर खत्म करना कठिन...

अमन कायम करना आसान नहीं होता। कहते हैं कि दुनिया के देश खलिहान के दरवाजे से युद्ध में प्रवेश करते हैं, लेकिन उससे निकलने का रास्ता चूहे के बिल से होता है। परस्पर विरोधी हितों के चलते समझौता करना मुश्किल हो जाता है।

हथियारों की होड़ में खर्च होने लगता है। जैसे-जैसे सैन्य-प्रतिस्पर्धा बढ़ती है, जलवायु परिवर्तन पर समझौतों के लिए आवश्यक सद्भावना लुप्त होती जाती है। बढ़ता तनाव एआई-हथियारों की दौड़ को सीमित करने के लिए समझौते तक पहुंचने की संभावना भी खत्म कर देता है। दुनिया जल्द ही यूक्रेन के आकाश में पूरी तरह से ऑटोनोमस ड्रोन के झुंड को एक-दूसरे से लड़ते हुए और जमीन पर हजारों लोगों को मारते हुए देख सकती है। हत्यारे रोबोट सामने आ रहे हैं, लेकिन मनुष्य हैं कि आपसी-सहमति निर्मित कर पाने को लेकर पंगु हो चुके हैं। यदि यूक्रेन में जल्द ही शांति नहीं लाई गई, तो सभी को नुकसान होगा, फिर भले ही वह कीव से हजारों किलोमीटर दूर ही क्यों ना रहते हों और सोचते हों कि वहां की लड़ाई का उनसे कोई लेना-देना नहीं है।

इतिहास में साम्राज्यवाद शब्द का प्रयोग रोम, ब्रिटेन या जारशाही वाले रूस जैसे शक्तिशाली साम्राज्यों द्वारा विदेशी भूमि पर विजय प्राप्त कर उन्हें अपना प्रांत बना लेने के बारे में किया जाता है। हालांकि 20वीं सदी के अंत और 21वीं सदी की शुरुआत में युद्धों की कमी नहीं रही है- फिलिस्तीन और इजराइल में और सूडान, म्यांमार और अन्य जगहों पर भयानक संघर्ष जारी रहे हैं- लेकिन ऐसा कोई मामला नहीं आया था, जब किसी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त देश का किसी शक्तिशाली विजेता द्वारा अपने में विलय करके उसके अस्तित्व को मानचित्र से मिटा दिया गया हो। जब इराक ने 1990-91 में कुवैत के साथ ऐसा करने की कोशिश की, तो एक अंतरराष्ट्रीय गठबंधन ने कुवैती स्वतंत्रता और क्षेत्रीय अखंडता को बहाल किया। और जब अमेरिका ने 2003 में इराक पर आक्रमण किया, तब भी इराक के किसी हिस्से का अमेरिका में विलय करने का कोई सवाल नहीं था। लेकिन रूस न केवल पहले ही क्रीमिया का अपने में विलय कर चुका है, बल्कि उसकी फौजें आज यूक्रेन के बड़े हिस्से पर काबिज हो चुकी हैं। अगर व्लादीमीर पुतिन को यूक्रेन पर जीत दर्ज करने का अवसर दिया जाता है तो दुनिया में साम्राज्यवाद की वापसी हो जाएगी। **(द इकोनॉमिस्ट से)**

इस आलेख पर सुझाव एवं प्रतिक्रिया देने के लिए इस क्यूआर कोड को स्कैन करें

जीने की राह

पं. विजयशंकर मेहता
ptvijayshankarmehta.com

गठबंधन शब्द के सांसारिक आध्यात्मिक आयाम में फर्क

गठबंधन शब्द बड़ा सात्विक और शास्त्रीय है। ऋषि-मुनियों ने इस शब्द को विवाह के समय भी उपयोग में लिया है। जब वर-वधू फेरे लेते हैं तो उसके पहले उनका गठबंधन होता है। गठबंधन किया था श्रीराम ने सुग्रीव से। विभीषण और श्रीराम का गठबंधन भी विख्यात है। और इन दोनों के परिणाम बहुत अच्छे आए। लेकिन उसका भी एक कारण था। दोनों ही गठबंधन के बीच में हनुमान जी थे और हनुमान जी का मतलब है निस्वार्थ सेवा, सरलता, निरहंकारिता। गठबंधन में एक-दूसरे पर संदेह होना स्वाभाविक है। असहमति भी हो सकती है। जब विभीषण पहली बार आए और सबने उन पर संदेह किया, तब हनुमान जी ने राम जी से कहा कि जब विभीषण बात करें, तो उनके शब्दों के बीच में से आप सत्य ढूंढ सकते हैं। ये बड़ा गहरा दर्शन है। मनुष्य के मस्तिष्क में क्या चल रहा है, उसको पढ़ा जा सकता है। और जब एआई का युग आया तो एआई ने कहा कि मनुष्य के मस्तिष्क में जो चल रहा है, उसको निकाला भी जा सकता है। जिन्होंने इसी सिद्धांत पर एआई की खोज की, उसके जनक जैफरी हिंटन ने वही बात बोली थी, जो हनुमान जी ने उस दिन राम जी से बोली। आज राजनीति के गठबंधन को देखकर लोग अलग-अलग टिप्पणियां करते हैं। इसे आध्यात्मिक दृष्टि से देखेंगे, तो टिप्पणियां अलग होंगी। और सांसारिक दृष्टि से देखेंगे, तो लगेगा अच्छे और बुरे स्वार्थ साथ में हो जाते हैं।

• Facebook: Pt. Vijayshankar Mehta

दूरदृष्टि • प्रधानमंत्री के शपथ-ग्रहण समारोह के लिए पड़ोसी देशों के सात नेताओं को न्योता एक अच्छा निर्णय

अपने पड़ोसियों से रिश्ते सुधारना हमारे लिए जरूरी है

मनोज जोशी
'अंडरस्टैंडिंग द इंडिया चाइना बॉर्डर' के लेखक
manoj1951@gmail.com

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपने शपथ ग्रहण समारोह में पड़ोसी देशों के नेताओं को आमंत्रित करके अच्छा संकेत दिया। सात देशों के नेता- मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद मुइज्जू, बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना, श्रीलंका के प्रधानमंत्री रानिल विक्रमसिंघे, नेपाल के प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहल 'प्रचंड', भूटान के प्रधानमंत्री शेरिंग तोबगे, मॉरीशस के प्रधानमंत्री प्रविंद कुमार जगन्नाथ और सेशेल्स के उपराष्ट्रपति अहमद अफीफ इस कार्यक्रम में मौजूद रहे।

पाकिस्तान का नाम मेहमानों की फेहरिस्त में नहीं था, हालांकि याद रहे कि प्रधानमंत्री नवाज शरीफ ने 2014 में मोदी के पहले शपथ ग्रहण समारोह में हिस्सा लिया था। तब से भारत-पाकिस्तान के बीच बहुत सारे रिश्ते खत्म हो चुके हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि इस बार पाकिस्तान के प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ को आमंत्रित करने की कोई योजना थी या नहीं, लेकिन वैसे भी वे शनिवार शाम को ही चीन की अपनी पांच दिवसीय यात्रा से लौटे थे।

पिछले नवंबर में पदभार संभालने के बाद चीन-समर्थक मुइज्जू की यह पहली भारत यात्रा थी। अपने पूर्ववर्तियों के विपरीत- जिन्होंने नई दिल्ली को अपना पहला पड़ाव बनाया था- मुइज्जू भारत से पहले तुर्किये और फिर चीन की यात्रा पर गए थे। मालदीव के साथ भारत के संबंधों में तब खटास आ गई थी, जब मुइज्जू ने 88 या उससे ज्यादा भारतीय सैन्यकर्मियों को वापस बुलाने के लिए कहा था, जो भारत द्वारा मालदीव को उपहार में दिए तीन हेलीकॉप्टरों की देखभाल कर रहे थे।

2014 में मोदी के पहले शपथ ग्रहण समारोह में पाकिस्तान सहित सभी सार्क (SAARC) देशों के नेता शामिल हुए थे। 2019 में दूसरी बार शपथ ग्रहण करने तक भारत के पाकिस्तान से रिश्ते बहुत खराब हो गए थे और सार्क भी निष्क्रिय हो गया था, इसलिए बिम्सटेक (BIMSTEC या बहु-क्षेत्रीय और आर्थिक सहयोग के लिए बंगाल की खाड़ी में की गई पहल) में शामिल देशों पर जोर दिया गया था। भारत का कहना है कि वह हिंद महासागर क्षेत्र के लिए अपने पड़ोसियों को पहले रखने की नीति के साथ-साथ सागर (SAGAR) क्षेत्र में सभी के लिए सुरक्षा और विकास पर जोर देता है। लेकिन भारत किसी भी चीज से ज्यादा चीन को अपने दिमाग में रखता है। भारत को अपनी विवादित सीमा पर बीजिंग से जैसी सैन्य चुनौती का सामना करना पड़ रहा है, दक्षिण एशिया और हिंद महासागर क्षेत्र में चीन से मिलने वाली चुनौती भी समान रूप से महत्वपूर्ण है।

बांग्लादेश का ही उदाहरण लें, जहां 2011 से 2019 के बीच चीन का प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 10.9 गुना बढ़ा है और यह बुनियादी ढांचे, सूचना-प्रौद्योगिकी, रक्षा सहयोग और ऊर्जा उद्योग जैसे विभिन्न क्षेत्रों पर केंद्रित है। भारत से बांग्लादेश की निकटता और बंगाल की खाड़ी के मुहाने पर उसका होना उसे चीन के लिए भू-राजनीतिक रूप से महत्वपूर्ण बनाता है। पिछले एक दशक में, चीन ने बेल्ट एंड रोड पहल के तहत बांग्लादेश में 35 परियोजनाओं के लिए 4.45 अरब डॉलर प्रदान किए हैं, जिसमें कर्णफुली सुरंग, पद्मा नदी पुल आदि शामिल हैं। बांग्लादेश भारत और अमेरिका के साथ संबंधों को संतुलित करने के लिए चीन से अपने संबंधों का उपयोग करना चाहता है। बांग्लादेश में लोकतंत्र के मुद्दों पर भारत का रुख अमेरिका की तुलना में अधिक सूझबूझ भरा है और वह बांग्लादेश का प्रमुख रणनीतिक साझेदार बना हुआ है। साथ ही वह उसके साथ कई परिवहन और ऊर्जा परियोजनाओं में भी शामिल है। पिछले एक दशक में, बांग्लादेश से भारत का द्विपक्षीय व्यापार 2012-2013 में 5.3 अरब डॉलर से बढ़कर 2021-22 में 15.93 अरब डॉलर तक हो गया है। गैर-टैरिफ बाधाओं और सीमा पार आवागमन से संबंधित प्रक्रियागत मुद्दों के कारण व्यापार में जरूर बाधा आई है।

निकट-अतीत में भारत ने अपने कुछ पड़ोसियों को नाराज किया है। उदाहरण के लिए, 2015 में नेपाल की छह महीने की नाकेबंदी के कारण उसमें भारत के खिलाफ काफी नाराजगी निर्मित हो गई थी। हालांकि भारत ने इससे इनकार किया था कि नेपाल में मधेशी प्रदर्शनकारियों द्वारा शुरू की गई नाकाबंदी में उसकी भूमिका थी। लेकिन अब मुश्किल पड़ोसियों से निपटने में नई दिल्ली ज्यादा शांतिपूर्ण रवैया अपना रही है। इसका उदाहरण मालदीव के साथ उसका व्यवहार है। मुइज्जू की हरकतों के बावजूद भारत ने मालदीव के साथ दोस्ताना रवैया कायम रखा है। हाल ही में मुइज्जू ने ऋण राहत के लिए नई दिल्ली से सहायता भी मांगी। लेकिन भारत का अपने पड़ोसियों के प्रति बदला हुआ रुख सबसे स्पष्ट रूप से तब दिखाई दिया था, जब विदेशी मुद्रा भंडार की कमी होने के कारण श्रीलंका को संकट का सामना करना पड़ा था। तब भारत ने तुरंत 4 अरब डॉलर की वित्तीय सहायता प्रदान की थी, जो आईएमएफ के 3 अरब डॉलर के बेलआउट से भी अधिक थी। भारत की वैश्विक महत्वाकांक्षाएं तब तक पूरी नहीं हो सकतीं, जब तक कि उसका क्षेत्र उसके साथ न हो।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

वेब भास्कर

पुरस्कृत तस्वीर : दुर्लभ प्राकृतिक संयोग से मिलती है ऐसी तस्वीर

किसी भी फोटोग्राफर की हसरत होती है कि वह जिस खास दृश्य की तलाश में जा रहा है, वह उसे मिल जाए। ब्रिटिश फोटोग्राफर क्रिस आइसलैंड की यात्रा पर गए हुए थे। तभी उन्हें आधी रात को यह दुर्लभ दृश्य दिखाई दिया। पूर्णिमा की रात में आकाशगंगा और नॉर्दर्न लाइट्स (औरोरा) के संयोग ने इसे खास बना दिया। वहीं पृष्ठभूमि में मौजूद वेस्त्राहॉर्न पहाड़ ने खूबसूरती में चार चांद लगा दिए। माना जा रहा है कि साल 2024 नॉर्दर्न लाइट्स को देखने के लिए सबसे अच्छा समय है। क्रिस की यह तस्वीर नेशनल जियोग्राफिक ट्रैवलर (यूके) फोटोग्राफी प्रतियोगिता 2024 में विजेता रही है।

• तस्वीर साभार : Chris West

हेल्थ • मेडिकल साइंस में प्रगति के बावजूद कुप्रथाएं जारी

मां-पिता के अंधविश्वास की सजा मासूम बच्चे क्यों भुगतें?

डॉ. चन्द्रकांत लहारिया
जाने माने चिकित्सक
c.lahariya@gmail.com

कुछ समय पूर्व शहडोल से आई इस खबर ने सबको दहला दिया था कि 3 महीने की एक मासूम बच्ची को गर्म हंसिए से 51 बार दागा गया, जिससे उसकी मौत हो गई। यह अपनी तरह की इकलौती घटना नहीं थी। हाल ही में खंडवा में भी एक अति-कुपोषित बच्चे को ओझा द्वारा दागने की खबर सामने आई थी। एक अन्य घटना में एक लड़की को चूड़ी से दागा गया। आज भारत में बीमारियों के उन्मूलन के लिए कई स्वास्थ्य-कार्यक्रम संचालित हो रहे हैं, इसके बावजूद आज भी कई स्थानों पर मरीज का इलाज अंधविश्वास पूर्ण तरीकों से किया जाता है और मरीज को उलटे और नुकसान पहुंचा दिया जाता है।

दागना या 'ब्रांडिंग' में त्वचा को लोहे की गर्म छड़ या धातु, छल्ले, जलती हुई रस्सी आदि से जला दिया जाता है। इसके पीछे यह अंधविश्वास है कि ऐसा करना शरीर की अंदरूनी व्याधियों का निदान करेगा। इस प्रथा का पालन खास तौर से कम साक्षर समुदायों में बचपन की सामान्य पाचन समस्याओं, दस्त, निमोनिया और यहां तक कि पीलिया के इलाज के लिए भी किया जाता है। इसे झोला-छाप चिकित्सकों द्वारा अंजाम दिया जाता है। यह कथित 'उपचार' बच्चे के शरीर से 'बुरी आत्माओं' को दूर भगाने के अंधविश्वास पर आधारित होता है। मुख्य रूप से इसका इस्तेमाल शिशुओं और छोटे बच्चों के शरीर के प्रभावित हिस्से पर गर्म सुई या अन्य उपकरण से किया जाता है।

चिकित्सा विज्ञान में इतनी प्रगति होने के बावजूद दागने की प्रथा भारत के कई हिस्सों में अभी भी प्रचलित है, खासकर उत्तरी, मध्य तथा पश्चिमी भारत में। ये असभ्य और अमानवीय है, जिससे उपचार मूल शिकायत से भी अधिक असहनीय हो जाता है, और जटिलताओं का जोखिम होता है। भारत और अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक पत्रिकाओं में ऐसी घटनाओं की रिपोर्ट प्रकाशित होती रहती हैं। सबसे हालिया प्रकाशित केस रिपोर्ट मध्य प्रदेश से थी और प्रतिष्ठित इंडियन जर्नल ऑफ पीडियाट्रिक्स में प्रकाशित हुई।

हालांकि इस तरह के सभी मामले सार्वजनिक नहीं होते, लेकिन राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने कच्छ जिले के वागड़ क्षेत्र और राजकोट जिले के कुछ दूरदराज के इलाकों में धातु से दागने से कुछ बच्चों के प्रभावित होने की रिपोर्ट का स्वतः संज्ञान लिया था और सरकार को कठोर कदम उठाने के लिए निर्देश दिए थे। फिर भी, गुजरात के कच्छ इलाके में काम करने वाले बाल रोग विशेषज्ञ डॉ. राजेश माहेश्वरी ने मुझे एक चर्चा में बताया कि वे अपने इलाके में नियमित रूप से दाग लगाने के मामले देखते हैं। कुछ जनजातियों में यह कुप्रथा अभी भी आम है।

याद रखने की बात है कि दागना अमेरिका, यूरोप, रोम और ब्रिटेन में विशेष रूप से दासों के लिए दंड देने का 16वीं और 18वीं सदी का तरीका है। दाग लगाने की प्रथा इस बात का प्रतिबिंब है कि हमारे समाज में कितनी पुरानी और हानिकारक प्रथाएं अभी भी जारी हैं और ये सबसे कमजोर आबादी समूहों जैसे नवजात शिशुओं और गरीब-आदिवासी तबकों को प्रभावित करती हैं। इससे बच्चों में संक्रमण, एलर्जी और थर्ड-डिग्री बर्न से गुर्दे खराब होने की आशंका रहती है। भारत ही नहीं, कई एशियाई और अफ्रीकी समाजों में भी ब्रांडिंग का प्रचलन है। यह तब भी जारी है, जब जुवेनाइल जस्टिस एक्ट में किशोर न्याय 'बच्चों की देखभाल और संरक्षण' अधिनियम के तहत हमारे बच्चों को किसी भी 'चोट' से प्रतिरक्षा प्रदान की गई है। पिछले माह ही मध्यप्रदेश के शहडोल जिले में इसके विरुद्ध जनजागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए गए और जयसिंहनगर, ब्यौहारी, बुढार एवं गोहपारू की विभिन्न ग्राम पंचायतों में महिलाओं को दागना-कुप्रथा रोकने के लिए जागरूक किया गया। भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के तहत ब्रांडिंग एक दंडनीय अपराध है। इसके लिए संबंधितों को 1 लाख का जुर्माना और 3 साल की सजा हो सकती है।

बाल रोग विशेषज्ञों और अन्य डॉक्टरों को 'दागना' से प्रभावित मामले आने पर राज्य/जिले की बाल कल्याण समितियों की सेवाओं को शामिल करना चाहिए ताकि दोषियों की पहचान करके उन्हें हतोत्साहित किया जा सके।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

पर्यावरण • सीवेज, ठोस अपशिष्ट के साथ ई-वेस्ट, मेडिकल वेस्ट भी चुनौती बना हुआ है

शहरों में कूड़ा प्रबंधन पर अभी बहुत काम बाकी है

डॉ. सुनील पांडे
निदेशक, सर्कुलर इकोनॉमी एंड वेस्ट मैनेजमेंट, द एनर्जी एंड रिसोर्स इंस्टीट्यूट

जब भी शहरी क्षेत्रों में कूड़ा प्रबंधन से जुड़ी बात होती है, तो दो बड़ी चिंताएं सामने आती हैं- म्युनिसिपल सॉलिड वेस्ट (एमएसडब्ल्यू) और दूसरा सीवेज। हालांकि शहरी क्षेत्रों में और भी तरह का कूड़ा चिंता का सबब है, जैसे इलेक्ट्रॉनिक वेस्ट, निर्माण कार्यों से निकलता मलबा, अस्पताल या बायोमेडिकल वेस्ट और प्लास्टिक वेस्ट। शहरों में कूड़े का कुप्रबंधन न सिर्फ पर्यावरण प्रदूषण पैदा कर रहा है बल्कि इससे मानवजनित ग्रीनहाउस गैसों (जीएचजी) का उत्सर्जन भी बढ़ रहा है।

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के मुताबिक भारत के शहर हर साल 58 मिलियन टन कूड़ा पैदा करते हैं। जिस गति से कूड़ा बढ़ रहा है, अनुमान के मुताबिक साल 2030 तक यह 165 मिलियन टन और 2050 तक 436 मिलियन टन तक पहुंच जाएगा। हालांकि जब से स्वच्छ भारत मिशन की शुरुआत हुई है, शहरों में ठोस अपशिष्ट के ट्रीटमेंट की क्षमता 26 हजार टन प्रतिदिन (18%) से बढ़कर 1 लाख टन प्रतिदिन (70%) तक पहुंच गई है।

शहरी क्षेत्रों में कूड़ा प्रबंधन और इसके निष्पादन में सुधार हुआ है, लेकिन कूड़े को यहां-वहां फेंककर कूड़ाघर बना देने का हमारा इतिहास रहा है, जहां हर तरह का कूड़ा फेंक दिया जाता है। इससे मिट्टी, भूजल प्रदूषित होता है, ऐसे कूड़े के ढेर में आग लगने से मीथेन निकलती है, जिससे जीएचजी लेवल बढ़ता है। शहरों में प्लास्टिक की पैकेजिंग भी बड़ी समस्या है। ये दुनियाभर में गंभीर है और प्लास्टिक कूड़ा नदियों में मिलकर समुद्र को दूषित कर रहा है। यूएनईपी के मुताबिक हर सेकंड, करीब एक ट्रक प्लास्टिक समुद्र में मिल रहा है। अगर इस पर काबू नहीं किया गया तो 2050 तक समुद्री कूड़ा मछलियों से ज्यादा हो जाएगा।

सीवेज की समस्या भी गंभीर बनी हुई है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार (2020-21) शहरी क्षेत्रों में 72,368 मिलियन लीटर प्रतिदिन (एमएलडी) सीवेज निकलता है, जबकि सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट की मौजूदा क्षमता 36,842 एमएलडी ही है। हालांकि इनकी असल कार्यक्षमता और कम है। जितना भी सीवेज निकलता है, उसके 28 फीसदी का ही ट्रीटमेंट हो पाता है। सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट (एसटीपी) से भी कीचड़ निकलता है, इसका भी विधिवत निपटारा जरूरी है और ज्यादातर शहरों में इसके लिए आधारभूत ढांचा नहीं है। गैरनिष्पादित सीवेज के जमीन पर या पानी में मिलने से ये प्रदूषित हो रहे हैं। इस विषय पर नीति आयोग की रिपोर्ट बताती है कि सीवेज के ट्रीटमेंट की कमी के कारण भारत में जल-जनित बीमारियों के इलाज में 15 अरब डॉलर से ज्यादा खर्च होते हैं। ज्यादातर शहर इस तरह की सीवेज ट्रीटमेंट सुविधाएं इसलिए नहीं जुटा पा रहे हैं क्योंकि इनके निर्माण के साथ, संचालन और प्रबंधन में बहुत पूंजी लगती है और अधिकांश सीवेज प्लांट्स को चलाने में बिजली भी बहुत ज्यादा खर्च होती है। इसलिए ये जरूरी है कि शहर और कस्बे मिलकर, घनी आबादी वाले इलाकों के लिए केंद्रीकृत सीवेज सुविधा और ट्रीटमेंट प्लांट का निर्माण करें। वहीं जहां आबादी कम है, वहां सोर्स ट्रीटमेंट सुविधाओं (जैसे रूट जोन सिस्टम) को विकेंद्रीकृत करें। सूरत इसका उदाहरण है, जो सीवेज को ट्रीट करके इंडस्ट्रीज को बेचकर हर साल 150 करोड़ रु. कमाता है।

द एनर्जी एंड रिसोर्स इंस्टीट्यूट (टेरी) अपनी 50वीं वर्षगांठ बना रहा है। पर्यावरण से जुड़े ऐसे कई मुद्दों से निपटने के लिए टेरी ने स्थानीय सरकारों के साथ मिलकर कई कदम उठाए हैं। इसमें जीआईजी की मदद से पणजी में शुरू हुआ शॉप विद योर वेस्ट अभियान शामिल है, जहां कुछ किराना स्टोर किराने के बदले में रिसाइकिल योग्य कूड़ा लेते हैं। बहरहाल, भारत में पर्यावरण प्रदूषण को कम करने और सस्टेनेबल शहरी वातावरण बनाने के लिए व्यापक और नई अपशिष्ट प्रबंधन रणनीतियां जरूरी हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

कश्मीर में आतंक

हमलों में वृद्धि

कश्मीर में आतंकी हमलों में अचानक वृद्धि हुई है जिनका संबंध प्रदेश में चुनाव कराने की योजना से है। जम्मू कश्मीर में आतंक फैलाने वाले स्थानीय जनता और राजनीतिक पार्टियों में पैदा जोश और आशावाद से परेशान हैं। वे निर्वाचन आयोग के काम में भी बाधा डालना चाहते हैं जो इस संघशासित क्षेत्र में जल्द ही चुनाव कराना चाहता है। हाल में समाप्त लोकसभा चुनाव के बाद से इस क्षेत्र में आतंकी हमलों में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। लंबे समय से टकराव और हिंसा का शिकार रहे इस क्षेत्र में स्थायित्व और सुरक्षा को आतंकी घटनाओं में इस वृद्धि से गंभीर खतरा पैदा हुआ है। इस क्षेत्र में खासकर 1980 के दशकांत से विद्रोह के कई चरण रहे हैं जब उग्रवादी संगठन कश्मीर को पाकिस्तान के साथ जोड़ना या उसे स्वतंत्र कराना चाहते थे। अगस्त, 2019 में भारत सरकार द्वारा जम्मू कश्मीर को विशेष स्वायत्ता देने वाले अनुच्छेद 370 की समाप्ति एक महत्वपूर्ण बिंदु था। हालांकि, इस कार्रवाई के कारण भी तनाव बढ़ा तथा उग्रवादी गतिविधि तेज हुई। तेजी से सामान्य स्थिति की ओर बढ़ने वाले इस क्षेत्र में उग्रवाद पुनर्जीवित होने के कई कारण हैं। उग्रवादी समूह सक्रिय रूप से नए लोगों को भर्ती करने का प्रयास कर रहे हैं और युवा कश्मीरियों को आकर्षित करने के लिए अक्सर सोशल मीडिया का प्रयोग करते हैं। इसके अलावा हाल में निगरानी बढ़ाने के बावजूद सीमापार से घुसपैठ की समस्या बनी हुई है। अपनी ओर से उग्रवादी संगठनों ने बार-बार चुनावों में बाधा डाल कर यह प्रदर्शित करने का प्रयास किया कि राज्य मशीनरी के प्रति संदेह पैदा हो तथा यह बताया जा सके कि भारत सरकार द्वारा क्षेत्र में पोषित लोकतांत्रिक प्रक्रिया का 'विरोध' हो रहा है। जम्मू कश्मीर की सुरक्षा व्यवस्था और प्रशासन पर आतंकी घटनाओं में वृद्धि का व्यापक प्रभाव पड़ा है।

इसके साथ ही ऐसी घटनाओं से दिन-प्रतिदिन का जीवन बाधित होता है। इससे क्षेत्र में पर्यटन, शिक्षा तथा आर्थिक गतिविधि प्रभावित होकर विकास में बाधा आती है। हिंसा बढ़ने की प्रतिक्रिया में भारत सरकार और सुरक्षा बलों ने अनेक पहलें की हैं। उग्रवादियों को बाहर निकालने के लिए घेराबंदी कर तलाशी अभियान तेज किए गए हैं। इन गतिविधियों का उद्देश्य अपना नुकसान रोकना तथा खुफिया अनुमानों पर सटीक कार्रवाई करना है। इसके साथ ही स्थानीय जनता का दिल-दिमाग जीतने के प्रयास भी तेज किए गए हैं। स्थानीय अधिकारियों के साथ संवाद, युवाओं की सहभागिता वाली पहलें, आजीविका बढ़ाने वाली विकास परियोजनायें तथा ढांचागत परियोजनायें इन पहलों में शामिल हैं। राजनीतिक दृष्टिकोण से सरकार जम्मू कश्मीर में स्थानीय सरकार बनाने के लिए चुनाव करवाने की इच्छुक है क्योंकि यह दीर्घकालीन शांति और स्थायित्व सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है। लेकिन सुरक्षा की वर्तमान स्थिति इस काम में बहुत बड़ी बाधा है। हालांकि, सरकार और सुरक्षा बल क्षेत्र में शांति स्थापना के लिए कठोर परिश्रम कर रहे हैं, पर दीर्घकालीन विकास तथा स्थायित्व की राह में अब भी अनेक बाधायें बनी हुई हैं। जम्मू कश्मीर में स्थाई शांति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि जनता के एक हिस्से में अब भी व्याप्त अलगाव की भावना के कारण समझे जाएं तथा प्रभावी सुशासन सुनिश्चित कर सभी पक्षों के साथ रचनात्मक व गंभीर संवाद विकसित करने के प्रयास किए जाएं। वैसे कई दशकों बाद लोकसभा चुनाव में जनता की भारी सहभागिता ने आतंकवादियों व उग्रवादियों को आईना दिखा दिया है और वे स्वयं को बदलती हुई स्थितियों में जीवित रखने का प्रयास कर रहे हैं।

नरेन्द्र मोदी की स्वीकार्यता

मोदी सरकार की जन-केन्द्रित उपलब्धियों की देश विदेश में लंबी सूची है। लेकिन इसके बावजूद जनता के एक हिस्से में उनकी स्वीकार्यता संदिग्ध है।

प्रफुल्ल गोराडिया
(लेखक, पूर्व राज्यसभा सदस्य हैं)

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की पिछले दस साल में चली सरकार की जन-केन्द्रित उपलब्धियों की आंतरिक व वैदेशिक मामलों में लंबी सूची है। लेकिन इसके बावजूद जनता के एक हिस्से में उनकी स्वीकार्यता संदिग्ध बनी हुई है। ऐसे में यह सवाल पूछना उचित होगा कि प्रधानमंत्री इस बारे में क्या सोचते होंगे? आखिर इतना अधिक काम करने के बावजूद जनता के एक हिस्से में उनकी स्वीकार्यता इतनी कम क्यों है? क्या उनसे कोई गलती हो गई जिसके कारण उनकी सीटें पहले 303 से घट कर अब 240 हो गईं? क्या वर्ष 2047 तक उनको भारतवर्ष को विकसित देश बनाने की महत्वाकांक्षा में कुछ गलत था? अथवा क्या भारतवर्ष के सकल घरेलू उत्पाद-जीडीपी को बढ़ा कर उसे दुनिया में तीसरे सबसे बड़े स्थान पर लाने की कल्पना गलत थी?

अथवा क्या राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में परिवर्तन की नीव डालने वाले वस्तु एवं सेवाकर-जीएसटी को लागू करना गलत था? जीएसटी लागू करने के बाद परोक्ष कर संग्रह बढ़ रहा है तथा परिवहन में लगने वाले समय में लगभग 40 प्रतिशत कमी आई है। क्या यह राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को उनका उपहार नहीं है? विपक्ष ने ऐसे ही अनेक सवाल उठा कर चुनाव प्रचार में मोदी सरकार की छवि खराब करने के प्रयास किए हैं और उसका असर जनसंख्या के एक हिस्से पर पड़ा है। हो सकता है कि कुछ लोगों ने उनके 'अबकी बार 400 पार' नारे को गलत समझा हो। संभवत: इस नारे के कारण जनता में यह भ्रम फैला कि वे चुनाव तो जीत ही चुके हैं, ऐसे में भला अपना वोट देने के लिए इतनी भयानक गर्मी वाले मौसम में कष्ट करने की क्या जरूरत है। शायद विपक्ष को चुनाव में मतदान के सात चरण होने तथा पूरी प्रक्रिया 43 दिन लंबी खिंचने के कारण दुष्प्रचार करने का काफी समय मिल गया। हो सकता है कि कुछ लोगों को जम्मू कश्मीर से अनुच्छेद 370 समाप्त करने पर आपत्ति रही हो, पर इसके कारण जम्मू कश्मीर की अर्थव्यवस्था काफी फली-फूली है।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की सरकार ने पिछले दस साल में 25 करोड़ से अधिक लोगों को गरीबी रेखा से बाहर निकाला है। इन लोगों को सरकार की ओर से जो कुछ दिया गया, वह गांवों के मुखिया के माध्यम के बजाय सीधे दिया गया। स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने कहा था कि दिल्ली से जब एक रुपया लोगों को भेजा जाता है तो उनको इसमें से केवल 15 पैसे मिलते हैं, जबकि 85 पैसे बिचौलिये खा जाते हैं। विडंबना है कि ऐसे भ्रष्टाचार को नेहरूवादी प्रशंसकों ने मजाक में 'हिंदूवादी वृद्धि दर' के रूप में परिभाषित किया था। भारत के अनेक अर्थशास्त्री बड़े गर्व से घोषणा करते थे कि भारतीय अर्थव्यवस्था का 40 प्रतिशत से अधिक कालाधन या 'अनौपचारिक' है और इसका केवल 60 प्रतिशत सफेद या 'औपचारिक' है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इस कालेधन की अर्थव्यवस्था पर प्रहार करने और इसे जल्दी से जल्दी समाप्त करना अपना लक्ष्य बना लिया। 8 नवंबर, 2016 की रात को इस कालेधन की अर्थव्यवस्था पर मरणांतक प्रहार किया गया।

उस समय प्रधानमंत्री ने 1000 व 500 रुपये के नोटों की 'नोटबंदी' कर दी थी। गोपनीयता को देखते हुए इस कदम को वित्त मंत्री तक से छिपा कर रखा गया था। नोटबंदी के इस कदम पर जनता की राय बिल्कुल अलग-अलग थी। लगभग आधे लोग इसके पक्ष में थे, लेकिन जिनका कालाधन बेकार हो गया था उन्होंने इस कदम की निन्दा की। इसके उलट जिनके पास कालाधन नहीं था, उन्होंने कर चोरी करने वालों के खिलाफ इस कदम की प्रशंसा की थी। बहुत से लोगों को यह तथ्य नहीं पता है कि भारत की पहले की सरकार ने भारतीय मुद्रा की छपाई का काम उसी सप्लायर को दिया था जो पाकिस्तान और बांग्लादेश की करेंसी छापता था। इसके कारण पड़ोसियों को भारतीय वस्तुएं आयात करने के लिए विदेशी मुद्रा नहीं खर्च करनी पड़ती थी। वास्तव में उनको इसके लिए पैसा ही नहीं खर्च करना पड़ता था, बस थोड़ा खर्च फर्जी नोटों की कीमत पर होता था। इस नोटबंदी तक हमारे पड़ोसी वित्तीय रूप से आरामदेह स्थिति में थे। लेकिन 8 नवंबर, 2016 के कुछ ही समय बाद पाकिस्ता की बरबादी की खबरें आने लगीं।

इसके बाद हमें बांग्लादेश को 9.5 बिलियन डालर का कर्ज देना पड़ा। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि आज भी अर्थव्यवस्था में कालाधन है, पर कम से कम इसका आधा हिस्सा समाप्त हो गया है। जीएसटी के क्रियान्वयन तथा डिजिटलीकरण से भी यह लक्ष्य पूरा करने में सहायता मिली। 'सफेद धन' वह धन है जिसका निवेश किया जा सकता है, कर्ज दिया जा सकता है तथा अर्थव्यवस्था के विस्तार में प्रयोग हो सकता है। दूसरी ओर 'काला धन' अत्यधिक अनुत्पादक और निजी हाथों में रहता है। इसके कारण चोरों और आयकर छापों का डर बना रहता है। इसे पूरे विश्वास या न्यूनतम जोखिम के साथ कर्ज नहीं दिया जा सकता है।

ऐसे में यह सवाल वास्तव में कष्टदायक है कि क्या इन उपलब्धियों के बावजूद भाजपा को केवल 240 सीटें मिलनी चाहिए? मतदान करते समय अनेक हिंदू भूल गए कि इस सरकार और सर्वोच्च न्यायालय ने उनको अयोध्या में भव्य राम मंदिर देखने का अवसर दिया। इसके पहले पांच शताब्दियों तक यह मामला उस समय से लटका रहा जब मुगल हमलावर बाबर के सेनापति मीर बाकी ने मूल मंदिर को नष्ट कर दिया था जिसे श्रीराम जन्मभूमि के नाम से सदियों से जाना जाता था। इसी स्थान पर लगभग एक साल में नए शानदार मंदिर का निर्माण हुआ है। यह एक पुराने मंदिर तथा सभ्यतामूलक प्रतीक को पुनर्जीवित करना, उसमें सुधार करना तथा उसे शानदार ढंग से बहाल करना था। मोदी सरकार ने इतिहास को सही ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। मुझे संदेह है कि किसी अन्य धर्म ने अपने देश में दूसरे धर्म को अपने पूजास्थल बनाने की अनुमति दी हो। प्रधानमंत्री मोदी की सरकार ने अबूधाबी के सुल्तान को दुबई के मुख्य राजमार्ग पर 27 एकड़ जमीन दान देने के लिए मनाया जहां हिंदुओं को विशाल मंदिर बनाना था। अधिकांश मुसलमान इसे 'बुतपरस्ती' या मूर्ति पूजा बता कर इसकी निन्दा करेंगे। यह एक प्रकार से शताब्दियों में भारत में सभी मंदिरों को अपवित्र करने का सुल्तान द्वारा प्रायश्चित है। यह मोदी सरकार की अत्यन्त उल्लेखनीय उपलब्धि है। सभी हिंदुओं को याद रखना चाहिए कि उन्होंने इस्लाम की ओर से दिए गए इस महत्वपूर्ण उपहार को अनदेखा किया। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के पहले देश के किसी अन्य नेता ने यह कल्पना भी नहीं की होगी कि किसी इस्लामी देश में हिंदुओं का इतना भव्य मंदिर बनेगा। मोदी सरकार के पिछले दस साल के कार्यकाल में विदेशों में अनेक विशाल हिंदू मंदिरों का निर्माण हो चुका है या शुरू हुआ है। इससे विदेशों में पढ़ने व काम करने जाने वाले लोगों में गर्व की अनुभूति होती है। अनिवासी भारतीय आज मोदी से जिस प्रकार की निकटता का अनुभव करते हैं, उसे देखते हुए उनको भी दु:ख हुआ होगा कि भारत की जनता के एक हिस्से ने मोदी को ठीक से स्वीकार्यता नहीं दी।

मोदी की व्यापक स्वीकार्यता के मामले में अनेक अन्य की तरह एक और बहाना सामने आया है। दो दिन पहले लखनऊ के एक परिचित ने मुझे यह बताने का प्रयास किया कि अयोध्या को शामिल करने वाली लोकसभा सीट भाजपा क्यों हार गई। उनका कहना था कि मुख्य सड़कों को चौड़ी करने तथा अयोध्या के सुंदरीकरण के लिए ध्वस्त किए अनेक घरों और दूकानों का मुआवजा दिया गया। लेकिन यह मुआवजा पुरानी दरों पर था। लेकिन इसके साथ ही इस तथ्य को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता है कि मंदिर के तेजी से निर्माण के कारण रियल इस्टेट कीमतों में भारी वृद्धि हुई। यह वृद्धि उम्मीद से बहुत अधिक थी।

इसके परिणामस्वरूप मुआवजे की पुरानी दरें बहुत कम लगती थीं। ये दरें पुराने निवासियों और दूकानदारों को अस्वीकार थीं। इस बीच लाखों तीर्थयात्री आए-गए जिससे दूकानदारों को भारी आय हुई और वास्तव में उनके पास पैसे की कोई कमी न रही। लेकिन इस कारण से उन्होंने न केवल विरोध किया, बल्कि विपक्ष को वोट भी दिया। पत्रकारों द्वारा यह पूछने पर कि उनको मंदिर बनवाने वालों के खिलाफ वोट देने से क्या लाभ हुआ, उनके पास कोई जवाब नहीं था।

भारत-कनाडा के बीच संबंधों की जटिलता

संतोष मैथ्यू
(लेखक, सहायक प्रोफेसर हैं)

भारत और कनाडा के बीच ऐतिहासिक संबंधों, प्रवासी प्रभाव और भू-राजनीतिक हितों से आकार लेने वाले जटिल संबंध हैं। अंतरराष्ट्रीय कूटनीति के जटिल नृत्य में, कनाडा के खुफिया प्रमुख डेविड विग्नॉल्ट ने इस वर्ष की शुरुआत में खालिस्तानी कार्यकर्ता की विवादास्पद मौत के अंधेरे क्षेत्रों में जाने के लिए भारत की गुप्त यात्राएं कीं। ये गुप्त आदान-प्रदान, गोपनीयता में छिपे हुए, दोनों देशों के बीच बढ़ते तनाव की पृष्ठभूमि में सामने आए, क्योंकि एक संसदीय रिपोर्ट ने भारत को कनाडा के लोकतंत्र के लिए दूसरा सबसे महत्वपूर्ण विदेशी खतरा बताया, जो चीन से थोड़ा पीछे है।

प्रधानमंत्री ट्रूडो द्वारा विदेशी हस्तक्षेप का डटकर सामना करने की प्रतिज्ञा के साथ, कनाडा वैश्विक शक्ति संघर्षों की घुमावदार धाराओं के बीच अपनी लोकतांत्रिक अखंडता की रक्षा करने के लिए संघर्ष कर रहा है। भारत और कनाडा के बीच ऐतिहासिक संबंधों, प्रवासी प्रभाव और भू-राजनीतिक हितों से आकार लेने वाले जटिल संबंध हैं। कनाडा में भारतीय प्रवासी, विशेष रूप से सिख समुदाय ने कनाडाई समाज और राजनीति को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालांकि, भारत में सिख अलगाववाद और मानवाधिकारों से जुड़े मुद्दे अक्सर द्विपक्षीय चर्चाओं में विवादास्पद रहे हैं। निज्जर की हत्या ने इन मुद्दों को एक बार फिर सामने ला दिया है, जिससे भारत में अल्पसंख्यकों के साथ व्यवहार और इन चिंताओं को दूर करने में कनाडा की भागीदारी की सीमा के बारे में बहस फिर से शुरू हो गई है।

कनाडा में भारतीय प्रवासी महत्वपूर्ण हैं और लगातार बढ़ रहे हैं। यह अनुमान है कि कनाडा में भारतीय मूल के 2 मिलियन से अधिक लोग हैं, जो भारतीय समुदाय को देश के सबसे बड़े और सबसे प्रभावशाली जातीय समूहों में से एक बनाता है। पिछले कुछ वर्षों में, भारतीय प्रवासियों ने कनाडाई समाज के विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, जिसमें व्यवसाय, राजनीति, शिक्षा और संस्कृति शामिल हैं। इस जनसांख्यिकी का प्रभाव दोनों देशों के बीच गहरे संबंधों का प्रमाण है। निज्जर की हत्या

ने भारतीय और कनाडाई दोनों अधिकारियों की ओर से कई तरह की प्रतिक्रियाएँ दी हैं। कनाडाई अधिकारियों ने इस कृत्य की निंदा की है और गहन जांच की मांग की है, साथ ही भारत के साथ बातचीत और सहयोग के लिए अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि की है। हालाँकि, इस घटना ने निस्संदेह दोनों देशों के बीच संबंधों को तनावपूर्ण बना दिया है, जिसका व्यापार, निवेश और रणनीतिक साझेदारी पर संभावित प्रभाव पड़ सकता है। कुछ लोगों का तर्क है कि निज्जर की मौत भारत में मानवाधिकार उल्लंघनों पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता को रेखांकित करती है, जबकि अन्य लोग निष्कर्ष पर पहुँचने के प्रति सावधान रहते हैं और साक्ष्य-आधारित जाँच के महत्व पर जोर देते हैं। राजनयिक स्तर पर, निज्जर की हत्या के परिणामस्वरूप भारत-कनाडा संबंधों की जाँच बढ़ गई है। गुप्त अभियानों में भारत के अनुसंधान और विश्लेषण विंग और अजीत डोभाल के एक करीबी सहयोगी की कथित संलिप्तता खुफिया, कूटनीति और भू-राजनीति के बीच जटिल अंतर्संबंध को रेखांकित करती है। जैसा कि भारत विश्व मंच पर खुद को स्थापित करना चाहता है, उसे इन चुनौतियों का सावधानी से सामना करना चाहिए, यह सुनिश्चित करते हुए कि उसके कार्य पारदर्शिता, जवाबदेही और अंतरराष्ट्रीय कानून के सम्मान के सिद्धांतों द्वारा निर्देशित हों।

कनाडा के लिए, इस घटना ने उस नाजुक संतुलन को उजागर किया है जिसे उसे लोकतांत्रिक मूल्यों को बनाए रखते हुए अपनी विविध आबादी का प्रबंधन करने में निभाना चाहिए। कनाडा सरकार की प्रतिक्रिया नपी-तुली रही है, जिसमें भारत के साथ राजनयिक चैनल बनाए रखते हुए निज्जर के लिए न्याय सुनिश्चित करने पर ध्यान केंद्रित किया गया है। यह दृष्टिकोण दोनों देशों के बीच मौजूद बहुआयामी संबंधों को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है। हालांकि कुछ मुद्दों पर मतभेद हो सकते हैं, लेकिन साझा हितों के ऐसे क्षेत्र भी हैं जहां सहयोग पनप सकता है।

इसके अलावा, जसविंदर सिंह निज्जर की दुखद मौत लोकतांत्रिक मूल्यों को बनाए रखने और सभी व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करने के महत्व की याद दिलाती है, चाहे उनकी मान्यताएं या पृष्ठभूमि कुछ भी हों। न्याय के प्रति यह प्रतिबद्धता न केवल निज्जर की विरासत का सम्मान करेगी बल्कि उन मूल्यों को भी मजबूत करेगी जो दोनों राष्ट्र अपनाते हैं। आगे बढ़ते हुए, भारत-कनाडाई संबंधों को चुनौतियों का सामना करना पड़ सकता है क्योंकि दोनों देश इस घटना के बाद की स्थिति से निपट रहे हैं। हालांकि, आपसी सम्मान, संवाद और साझा मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता के साथ, उम्मीद है कि वे पहले से अधिक मजबूत और लचीले बन सकते हैं।

अंत में, जसविंदर सिंह निज्जर की हत्या ने भारत-कनाडाई संबंधों की पेचीदगियों पर प्रकाश डाला है, जो आगे आने वाली चुनौतियों और अवसरों दोनों को उजागर करता है। यह दोनों देशों के लिए अपने साझा इतिहास पर विचार करने, न्याय के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि करने और सहयोग और आपसी सम्मान से चिह्नित भविष्य की दिशा में काम करने का एक महत्वपूर्ण क्षण है। आगे की राह कठिनाइयों से भरी हो सकती है, लेकिन ठोस प्रयास से भारत और कनाडा ऐसे रिश्ते बना सकते हैं जो मजबूत और लचीले हों, जिससे न केवल उनके नागरिकों को लाभ हो, बल्कि वैश्विक शांति और स्थिरता में भी योगदान मिले। निष्कर्ष में, जसविंदर सिंह निज्जर की हत्या ने भारत-कनाडा संबंधों की पेचीदगियों पर प्रकाश डाला है, जो आगे आने वाली चुनौतियों और अवसरों दोनों को उजागर करता है।

यह दोनों देशों के लिए अपने साझा इतिहास पर विचार करने, न्याय के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की पुष्टि करने और सहयोग और आपसी सम्मान से चिह्नित भविष्य की दिशा में काम करने का एक महत्वपूर्ण क्षण है। आगे की राह कठिनाइयों से भरी हो सकती है, लेकिन एक ठोस प्रयास के साथ, भारत और कनाडा एक ऐसे रिश्ते का निर्माण जारी रख सकते हैं जो मजबूत और लचीला दोनों हो, जिससे न केवल उनके नागरिकों को लाभ हो बल्कि वैश्विक शांति और स्थिरता में भी योगदान हो। भारत-कनाडा संबंध एक सिम्फनी की तरह हैं, जहां प्रत्येक नोट, चाहे कितना भी अलग क्यों न हो, पूरे के सामंजस्य में योगदान देता है। आइए हम सम्मान, समझ और शांति के प्रति प्रतिबद्धता के साथ अपनी भूमिका निभाएं।

आप की बात

देश का आर्थिक विकास

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में कई राज्य सरकारें अब नई दिशा में अग्रसर होती दिख रही हैं। देश की अर्थव्यवस्था में सुधार और वित्तीय स्थिरता का संकेत मिल रहा है। इस संदर्भ में हाल ही में किए सुधारों और नई योजनाओं की घोषणा ने जनता में विश्वास बढ़ाया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत की विकास दर में अपेक्षित वृद्धि ने निवेशकों और अंतरराष्ट्रीय बाजारों का ध्यान आकर्षित किया है। खुशी की बात है कि बीएसई में सूचीबद्ध कंपनियों का कुल बाजार पूंजीकरण पांच लाख करोड़ डॉलर के पार पहुंच गया है। सरकार ने रोजगार और आर्थिक असमानता दूर करने के लिए भी महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। नए रोजगार के अवसर सृजित करने के लिए उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। विशेष रूप से युवा वर्ग के लिए नई योजनाओं का संचालन किया जा रहा है जिससे उन्हें रोजगार के बेहतर अवसर मिल सकें। हाल ही में जारी गिनीज़ कोफीशिएंट आंकड़ों से स्पष्ट है कि भारत के शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में पिछले दस वर्षों में असमानता घटी है। यह आंकड़ा सारी दुनिया में असमानता के मानक के रूप में प्रयोग होता है। उम्मीद है कि आने वाले समय में सरकार की नई पहलों से भारत की अर्थव्यवस्था और भी सशक्त बनेगी और हर वर्ग को इसका लाभ मिलेगा।

अवनीश कुमार गुप्ता, आजमगढ़

आत्मावलोकन आवश्यक

राजनीति में हार-जीत व बहुमत-अल्पमत में दलों का आना.जाना होता ही रहता है। अच्छी बात है अबकी बार भी भाजपा के नेतृत्व में व सहयोगियों के सहयोग से केंद्र में मजबूत सरकार स्थापित हुई है। किन्तु शोचनीय है कि पहले दो बार अपने दम पर बहुमत पाने और देश-दुनिया में भारत की ख्याति बढ़ाने वाली भाजपा आखिर 2024 के चुनाव में बहुमत से थोड़ा पीछे क्यों रह गई? उसे इसके कारणों का पता लगाने के लिए आत्मावलोकन आवश्यक है। चुनाव अधिघोषणा जारी होने से पहले प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने संसद में अपने दस साल की उपलब्धियों का विस्तृत वर्णन किया था। उनका दावा था कि उनकी सरकार ने पिछले दस साल में जितना काम किया उतना पहले कभी नहीं हुआ था। उन्होंने तुलनात्मक अध्ययन के लिए कांग्रेस नीत संप्रग सरकार के दस साल पर श्वेत पत्र भी जारी किया था। लेकिन आश्चर्यजनक रूप से चुनाव प्रचार आगे बढ़ते ही भाजपा अपनी उपलब्धियों के बावजूद कांग्रेस और विपक्ष के छिद्रान्वेषण में अधिक लग गई। हालांकि, प्रधानमंत्री ने अपने साक्षात्कारों तथा भाजपा ने विज्ञापनों से संतुलन बनाने का प्रयास किया, पर प्रचार और उपलब्धियों में असंगति वाली स्थिति पैदा हो गई।

– **शकुंतला महेश नेनावा**, इंदौर

पोजीशन का महत्व

फर्स्ट हो, सेकंड हो यह टॉप 10 में हो। कठोर परिश्रम और लगन से ही पोजीशन संभव होती है। फर्स्ट और सेकंड आना तो गौरव की बात है, मगर उनके हौसलों की दाद दीजिए जो सबसे निचले स्तर पर रहकर भी फिर से ऊपरी पायदान पर चढ़ने को तत्पर रहते हैं। जीवन के अनेक ऐसे क्षेत्र भी हैं जहां पोजीशनों का महत्व कम, मानवीय मूल्यों व स्वभाव और नैतिकता का महत्व अधिक होता है। पहली पोजीशन पर आना तो कठोर परिश्रम का सूचक है ही। मगर उससे अधिक परिश्रम उस पोजीशन पर बने रहने के लिए करना होता है। ऐसे में कई प्रतिद्वंदी आपकी टांग खींच कर कर आपको नीचे धकेलने को तैयार रहते हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस-एआई जैसी आधुनिक तकनीकें सामने आने के साथ अब प्रथम या सेकंड पोजीशन नए अर्थ लेने लगी है। इसका अर्थ तकनीक का अधिकतम उपयोग होगा। लेकिन आप कितनी ही ऊंची पोजीशन पर बने रहें, यदि मानवीय मूल्य की कमी है और आप सूपेरियारिटी कंपलेक्स से ग्रसित है तो आपकी इस स्थिति से समाज, साथियों और देश को कोई लाभ होने वाला नहीं है। ऐसे में गलाकाट प्रतियोगिता के बजाय परस्पर सहयोग को बढ़ावा देना चाहिए ताकि सबका विकास सुनिश्चित होकर संपूर्ण प्रगति हो।

– **विभूति बुपक्या**, खाचरोद

नतीजे के निहितार्थ

इस बार 400 पार नारे के साथ शुरुआत के बाद राजग को 300 पहुंचना मुश्किल हो गया। कारण की समीक्षा करने में पक्ष-विपक्ष सभी लगे हुए हैं। कोई 99 पर इतना खुश है कि मानो दुनिया जीत ली हो और कोई 240 पाकर भी थोड़ा दु:खी है। लगता है विपक्ष जनता को बरगलाने में कामयाब हुआ। यह भाजपा और सहयोगी दलों की नाकामयाबी है। विकास पर जातिगत गणित हावी होता प्रतीत होता है। अनेक मंचों पर मुस्लिम भागीदारी की मांग हो रही है जबकि मुसलमानों ने विकास के विरुद्ध मतदान किया। उन्होंने जनसंख्या नियंत्रण, समान नागरिक संहिता और नागरिकता अधिनियम के लागू होने का पुरजोर विरोध किया। भाजपा तथा उसके सहयोगी दलों को विश्वास था कि केन्द्र व राज्यों की योजनाओं से लाभान्वित वर्ग स्वाभाविक रूप से भाजपा को वोट देगा। लेकिन विडंबना है कि खासकर मुसलमानों ने सरकारी योजनाओं का यथासंभव अधिकाधिक लाभ लेने के बावजूद सुनियोजित ढंग से भाजपा को हराने में योगदान दिया। यह स्थिति देश के भविष्य के लिए खतरनाक है। नेताओं को सबक लेना चाहिए।

– **मनोज पुरुषार्थी**, मेरठ

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

https://t.me/AllNewsPaperPaid

बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 100

बेहतरी के प्रयास

नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार के तीसरे कार्यकाल में प्रमुख मंत्रालयों का आवंटन पुरानी नीतियां जारी रहने का संकेत देता है। इससे वित्तीय बाजारों में भरोसा पैदा होना चाहिए जो चुनाव नतीजों के बाद लड़खड़ाते नजर आए थे। बहरहाल, एक ओर जहां व्यापक निरंतरता से अल्पावधि में विश्वास बढ़ाने में मदद मिलेगी, वहीं बदलते हालात के साथ नीतियों में परिवर्तन भी आवश्यक है। इस संदर्भ में केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण से उम्मीद की जाएगी कि वह हालिया वर्षों की बुनियाद पर आगे बढ़ेंगी। उनका पिछला कार्यकाल हाल के समय में किसी भी वित्त मंत्री के लिहाज से सर्वाधिक कठिन कार्यकाल था। मोटे तौर पर ऐसा महामारी के कारण लगे झटकों की वजह से था। हालांकि भारत महामारी के कारण लगे झटके से मजबूती से उबरने में कामयाब रहा लेकिन चल रहे प्रयासों की मदद से ही टिकाऊ वृद्धि हासिल की जा सकेगी और देश की राजकोषीय स्थिति को बेहतर बनाया जा सकेगा। वर्ष 2023-24 में भारतीय अर्थव्यवस्था में 8.2 फीसदी की दर से बढ़ोतरी हुई और माना जा रहा है कि चालू वर्ष में यह दर 7 फीसदी रहेगी।

राजकोषीय मोर्चे पर सरकार 2025-26 तक सकल घरेलू उत्पाद के 4.5 फीसदी के बराबर राजकोषीय घाटा लक्ष्य हासिल करने की दिशा में बढ़ती नजर आ रही है। अपेक्षा से अधिक राजस्व संग्रह और आर्थिक वृद्धि ने राजकोषीय घाटे को गत वित्त वर्ष के दौरान ही कम करके 5.6 फीसदी के स्तर पर ला दिया था। अंतरिम बजट में इसके लिए 5.8 फीसदी का संशोधित लक्ष्य रखा गया था। चालू वर्ष में भारतीय रिजर्व बैंक की ओर से अपेक्षा से अधिक अधिशेष स्थानांतरण भी सरकारी वित्त की मदद करेगा। अब जबकि सीतारमण और उनकी टीम पूर्ण बजट तैयार करना शुरू करेंगे, जिसे जुलाई में पेश किए जाने की उम्मीद है, तो बेहतर होगा कि वे रिजर्व बैंक के अतिरिक्त अधिशेष का इस्तेमाल राजकोषीय घाटा कम करने में करें और उसे मध्यम अवधि के लक्ष्य के करीब ले जाएं। नए राजनीतिक परिदृश्य को देखते हुए अतिरिक्त व्यय का दबाव बन सकता है।

इन सब बातों के बीच सरकार अतीत के वर्षों में कड़ी मेहनत से हासिल राजकोषीय लाभ को हाथ से नहीं जाने दे। बल्कि सुझाव यह होगा कि राजकोषीय घाटे को सकल घरेलू उत्पाद के 3 फीसदी के स्तर तक लाने के लिए संशोधित राजकोषीय पथ प्रस्तुत किया जाए। ऋण और जीडीपी के अनुपात को अधिक प्रबंधनयोग्य स्तर पर लाने के लिहाज से भी यह बहुत महत्त्वपूर्ण होगा। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के पूर्वानुमानों के अनुसार भारत का आम सरकारी ऋण 2029 तक महामारी के पहले के स्तर से ऊपर बना रह सकता है। राजस्व समायोजन के संबंध में केंद्र सरकार को जीएसटी परिषद में तत्काल वस्तु एवं सेवा कर यानी जीएसटी की दरों और स्लैब को युक्तिसंगत बनाने का प्रयास करना चाहिए। इससे न केवल राजस्व संग्रह बढ़ाने में मदद मिलेगी बल्कि कारोबारी सुगमता में भी सुधार होगा।

राजकोषीय घाटे को कम करने में एक संभावित चुनौती वृद्धि पर इसका प्रभाव होगा। महामारी के बाद की अवधि में आर्थिक वृद्धि मोटे तौर पर सरकारी पूंजीगत व्यय पर निर्भर रही है। टिकाऊ राजकोषीय समेकन के साथ निजी क्षेत्र को निवेश में कमी को पूरा करना होगा। बहरहाल, निजी क्षेत्र अपनी क्षमता का विस्तार करने में हिचकिचा रहा है। संभव है इसकी वजह कमजोर घरेलू मांग हो। ग्रामीण भारत में जहां मॉनसून के सामान्य होने के साथ मांग में सुधार देखने को मिल सकता है, वहीं भारत को वैश्विक मांग की भी पूर्ति करनी है। सरकार ने हाल के वर्षों में टैरिफ में इजाफा किया है जो बाहरी प्रतिस्पर्धा पर असर डालता है। वित्त मंत्रालय को उच्च टैरिफ के प्रभाव की समीक्षा करनी चाहिए कि क्या इससे टिकाऊ उच्च वृद्धि हासिल हुई। इस बीच निवेश जुटाने और वृद्धि को गति प्रदान करने के लिए एक समग्र शासकीय रुख की आवश्यकता होगी। नई सरकार के पहले पूर्ण बजट पर नजर होगी कि सरकार देश की अर्थव्यवस्था को किस प्रकार आगे ले जाना चाहती है।

अजय मोहंती

संगठनात्मक सुधार से ऊर्जा संक्रमण के मिलेंगे परिणाम

केंद्र सरकार में संगठनात्मक स्तर पर सुधार से सरकारी कामकाज अधिक सक्षम एवं प्रभावी ढंग से हो पाएंगे। बता रहे हैं अजय शाह और अक्षय जेटली

संशयवादी भारत में सरकार के भारी भरकम आकार पर लंबे समय से टीका-टिप्पणी करते रहे हैं। उनके अनुसार केंद्र सरकार का आकार 15 मंत्रियों एवं रायसीना हिल (राष्ट्रपति भवन सहित महत्त्वपूर्ण मंत्रालयों का ठिकाना) तक सीमित रखा जाना चाहिए। नया मंत्रिमंडल हमेशा केंद्र सरकार की गतिविधियों पर पुनर्विचार करने का एक अवसर देता है। अनियोजित कार्य पद्धति लगातार जारी है और सरकार का हस्तक्षेप अर्थव्यवस्था के उन क्षेत्रों में भी पहुंच गया है जहां इसकी जरूरत नहीं है और कई मामलों में तो इसके दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं। जिन क्षेत्रों में सरकार की उपस्थिति अनिवार्य है वहां मौजूदा संगठनात्मक ढांचा प्रायः प्रगति की राह में बाधा साबित हो रहा है।

ऊर्जा क्षेत्र ऐसा ही एक उदाहरण है। अधिक विभाग होने से उनके बीच तालमेल नहीं बैठ पाता है। कोयला मंत्रालय अधिक कोयला उत्पादन का लक्ष्य लेकर चलता है तो नवीकरणीय (अक्षय) ऊर्जा मंत्रालय कोयले पर निर्भरता कम करना चाहता है। दूसरी तरफ, बिजली निरंतर बिजली उत्पादन बढ़ाने का प्रयास करता रहता है। पर्यावरण मंत्रालय जलवायु परिवर्तन से जुड़े विषयों पर सोचता है मगर ऊर्जा मंत्रालयों उसके प्रभाव के जद में नहीं आता है। यह पूरी प्रक्रिया नीतियों में तारतम्यता की राह में बाधा बनती है। कार्यपालिका के विभिन्न कदम एक दूसरे के विपरीत जान पड़ते हैं। नीतियों एवं प्रयासों के बीच आपसी तालमेल का अभाव देश के भीतर (राज्य सरकारों के साथ संबंधों के संदर्भ में) और बाहर (दूसरे देशों के साथ संबंधों में), दोनों जगहों पर केंद्र सरकार के प्रदर्शन को प्रभावित करता है। दूसरे क्षेत्रों की तुलना में ऊर्जा क्षेत्र के लिए बाहरी दुनिया के साथ तालमेल खासा मायने रखता है।

नीतिगत योजना और राष्ट्रीय हित में तालमेल नहीं होने से आर्थिक कुशलता का लक्ष्य हासिल नहीं हो पाता है। ऊर्जा संक्रमण (जीवाश्म ऊर्जा पर निर्भरता कम कर धीरे-धीरे अक्षय ऊर्जा अपनाने की तरफ बढ़ना) कोई अनूठी समस्या नहीं है और यहां भी विभागों एवं मंत्रालयों की संरचना दोषपूर्ण है। भारत में नीतिगत स्तर पर अफसरशाही की शिथिलता एक तार्किक संगठनात्मक ढांचे को कमजोर कर देती है। परिवहन क्षेत्र में भी ऐसी ही समस्या पाई जाती है। वित्त मंत्रालय में विभागों की संरचना भी दोषपूर्ण मानी जा सकती है। विजय केलकर की अध्यक्षता में 'अ मिनिस्ट्री ऑफ फाइनैंस फॉर द 21 सेंचुरी' शीर्षक नाम से एक रिपोर्ट आई है। इस रिपोर्ट के अनुसार शताब्दी के पहले 24 वर्षों में वित्त मंत्रालय में काफी कम सुधार हुए हैं।

मौजूदा व्यवस्था किस तरह काम करता है? ऊर्जा संक्रमण जिन मंत्रालयों या विभागों से जुड़ा है उनमें कोयला, पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन, नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस, बिजली, परमाणु ऊर्जा, भारी उद्योग मंत्रालय में इलेक्ट्रिक वाहन विभाग और आर्थिक मामलों का विभाग आदि शामिल हैं। ज्यादातर लोग इस बात पर सहमत होंगे कि यह एक अच्छी व्यवस्था नहीं है।

अब प्रश्न है कि इसे बेहतर कैसे बनाया जा सकता है? पांच ऐसे कार्य हैं जो इस दिशा में किए जा सकते हैं। पहली बात, हमें सबसे पहले विभागों की सूची पर पुनर्विचार करना होगा। क्या हमें कोयला मंत्रालय और एक परमाणु ऊर्जा विभाग की आवश्यकता है? उदाहरण के लिए केवल दो विभाग हो सकते हैं, एक कार्बन आधारित ईंधन और दूसरा कार्बन मुक्त ईंधन।

दूसरी बात, ऊर्जा के साथ जुड़े सभी खंडों को एकल ऊर्जा मंत्रालय में समाहित किया जा सकता है। इस मंत्रालय की संरचना विदेश मंत्रालय जैसी हो सकती है जिसमें विभिन्न विभागों का नेतृत्व सचिव स्तर के अधिकारी कर सकते हैं। ये इनके ऊपर एक ऊर्जा सचिव होंगे और ये सभी ऊर्जा मंत्री के अधीन काम करेंगे। मगर यह संरचना समस्या का पूर्ण समाधान नहीं कर पाता है। इसका कारण यह है कि विभाग सरकार तंत्र की आधारभूत इकाई होते हैं और इस संरचना के अंतर्गत कोयला विभाग भी होगा जो कार्बन उत्सर्जन बढ़ाने का प्रयास कर रहा है। एक मंत्रालय में दो विभागों को समाहित करने के कई उदाहरण हैं। किसी विभाग को एक मंत्रालय से निकालकर दूसरे मंत्रालय में ले जाने के कई उदाहरण मौजूद हैं, इसलिए ऐसे बदलाव संभव एवं लाभकारी प्रतीत हो रहे हैं। ऊर्जा मंत्रालय में भारी उद्योग का विलय करना तर्कसंगत लग रहा है। मगर आर्थिक मामलों के विभाग (डीईए) का ऊर्जा मंत्रालय में विलय उपयुक्त नहीं होगा। कार्य आवंटन नियमों में बदलाव पर नए सिरे से विचार और बदलाव करने की जरूरत है ताकि ऊर्जा संक्रमण से जुड़ी समस्याएं ठीक ढंग से परिलक्षित हो सकें।

कई मंत्रियों के बीच समन्वय में सुधार के लिए जलवायु परिवर्तन से जुड़े विषयों के लिए एक मंत्रिसमूह की गुंजाइश बनती है। इसमें संबंधित आठ या इससे कम मंत्री एक साथ काम कर सकते हैं। यह इस मायने में अच्छा समाधान है कि मंत्रिसमूह के पास संस्थागत अनुभव एवं अफसरशाही क्षमता होती है। हालांकि, यह भी सच है कि पूर्व में ऐसे समूह पूरी तरह संतुष्ट करने वाले साबित नहीं हुए। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि इस समूह को समर्थन देने वाला कोई तकनीकी सचिवालय नहीं है।

फिलहाल जो व्यवस्था है उसके अंतर्गत मंत्री अपना प्रभाव जताने के लिए एक दूसरे प्रतिस्पर्द्धा कर रहे हैं। मौजूदा ऊर्जा विभागों के हितों पर वित्त मंत्री अध्यक्षता में इन मंत्रिसमूह के माध्यम आंशिक रूप से की जा सकती है। पूर्व में तकनीकी सचिवालय नहीं होने के कारण मंत्री समूह असफल रहे थे।

चौथी बात, सरकार के तीन परंपरागत अंगों के बीच भारत में सरकारी तंत्र या संगठन की एक नई संकल्पना सामने आई है। यह संकल्पना नियामकों की है जो कार्यकारी, विधायी और न्यायिक शक्तियों के माध्यम से काफी प्रभावशाली साबित हो रहे हैं। ऊर्जा संक्रमण को आगे बढ़ाने के लिए संगठन संरचना में बदलाव के लिए इन नियामकों पर भी विचार करना चाहिए।

पांचवीं बात, कार्यपालिका के ढांचे के साथ विधायिका में भी सरकार कार्य क्षमता से जुड़ी समस्या मौजूद है। संसदीय स्थायी समितियों के स्तर पर बिखराव की समस्या ऊर्जा संक्रमण पर एकीकृत संसदीय स्थायी समिति गठित कर दूर की जा सकती है। इसमें आठ विभागों में सात की स्थायी समितियों को समाहित कर दूर की जा सकती है। इस संसदीय समिति के लिए शोध समूहों का एक समूह तैयार करने से भी मदद मिलेगी।

दिलचस्प बात यह है कि दूसरे देशों में भी जहां पहले से मौजूद ऐसी समस्या नहीं थी वहां जलवायु परिवर्तन से जुड़ी कठिनाइयों को देखते हुए नई सरकारी ढांचा स्थापित किया गया है। जर्मनी में इकनॉमिक अफेयर्स ऐंड क्लाइमेट एक्शन (बीएमडब्ल्यूके) ऊर्जा संक्रमण नीतियों पर नजर रखता है।

फ्रांस में मिनिस्ट्री फॉर द ईकोलॉजिकल ट्रांजिशन जलवायु परिवर्तन पर ध्यान केंद्रित करता है। स्पेन में ईकोलॉजिकल ट्रांजिशन ऐंड डेमोग्राफिक चैलेंज एक अलग मंत्रालय है। उरुग्वे में ऊर्जा संक्रमण उद्योग, ऊर्जा एवं खनन मंत्रालय के अधीन आता है। इंडोनेशिया में ऊर्जा संक्रमण ऊर्जा एवं खनन संसाधन मंत्रालय के माध्यम से होता है। अमेरिका में जॉन पोडेस्टा 'क्लाइमेट जार' हैं जो एक अनूठी भूमिका निभा रहे हैं। मगर भारतीय संवैधानिक संरचना में यह समाधान सरल नहीं दिख रहा है जहां सरकारी तंत्र मंत्रिमंडल, कैबिनेट मंत्रियों और विभागों के माध्यम से चल रहा है।

(शाह एक्सकेडीआर फोरम में शोधकर्ता और जेटली ट्रायलीगल में पार्टनर एवं ट्रस्टब्रिज के संस्थापक हैं।)

साहसिक पहल या महज जुनूनी विचार?

जब कांग्रेस पार्टी ने भारत के सबसे गरीब परिवारों की एक महिला को बिना शर्त एक लाख रुपये सालाना देने की घोषणा की थी तब मैंने प्रयोग के तौर पर सामान्य गणना की। पिछली जनगणना 13 साल पहले की गई थी और इस बात को लेकर अब भी गर्मागर्म बहस चल रही है कि गरीबी रेखा क्या है। इसलिए संभव है कि जो अनुमान लगाए जाएं वे हकीकत से मेल न खाते हों। मेरे आकलन के समय यह भी संभव था कि कांग्रेस सत्ता में न आए और अपने वादे पूरे करने में असमर्थ रहे।

भारत की आबादी 140 करोड़ है और ऐसे कुल परिवार करीब 30 करोड़ होंगे। उदाहरण के तौर पर देखें तो इसमें सबसे गरीब 3 करोड़ परिवार इस योजना के पात्र होते। इसका मतलब यह है कि हर साल इन पर 3 लाख करोड़ रुपये खर्च होते जो भारत के नॉमिनल सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का लगभग 1.7 प्रतिशत है। इस तरह यह अब तक की सबसे बड़ी सार्वभौमिक आधारभूत आय योजना (यूबीआई) होती। सामाजिक कल्याण से जुड़े बजट के लिहाज से देखें तो यह विशेषतौर पर कोई बड़ी राशि नहीं लगती है। उदाहरण के तौर पर देखें तो महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) के तहत लगभग 6.5 करोड़ परिवारों को वर्ष 2021-22 में 'कुछ' काम मिला, जिस पर लगभग 1.2 लाख करोड़ रुपये खर्च हुए। सक्रिय कार्यकर्ताओं का कहना है कि अगर सभी पात्र लोगों को पूरे 100 दिन का काम दिया जाता है तब मनरेगा के लिए लगभग 2.7 लाख करोड़ रुपये की आवश्यकता होगी।

भारत की प्रति व्यक्ति आय लगभग 1.5 लाख रुपये सालाना है, जो निश्चित रूप से 1.4 अरब आबादी के आधार पर की गई गणना के मुताबिक है। इसलिए, यूबीआई के जरिये 3 करोड़ लोगों को प्रति व्यक्ति आय का 67 प्रतिशत दिया जाएगा। सबसे गरीब राज्य, बिहार में प्रति व्यक्ति आय लगभग 50,000 रुपये से थोड़ी कम है और जिन 3 करोड़ लोगों को यह राशि मिलेगी उनकी आमदनी और भी कम होगी। ऐसे में यह माना जा सकता है कि यूबीआई क्रय शक्ति को दोगुनी से भी ज्यादा कर देगा।

देवांशु दत्ता

महिलाओं को यूबीआई देने का लक्ष्य बनाना राजनीतिक और व्यावहारिक दोनों वजहों से सार्थक है। राजनीतिक रूप से देखा जाए तो यह निश्चित रूप से महिला मतदाताओं को लक्षित करने का एक प्रयास होता। व्यावहारिक रूप से, कई निवेश अध्ययन बताते हैं कि महिलाएं पैसों का बेहतर प्रबंधन करती हैं, उनकी शराब पीने की आदत कम होती है, और वे बड़े जोखिम भी नहीं लेती हैं।

दक्षिण एशिया में, बांग्लादेश के ग्रामीण बैंक के अनुभवों को देखा जाए या फिर भारत में सूक्ष्म वित्त संस्थानों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महिलाओं में ये विशेषताएं देखी जाती हैं। अगर महिलाओं को छोटे ऋण दिए जाते हैं तब ऐसी संभावना होती है कि वे एक ऐसा कारोबार तैयार करें जो टिकाऊ आमदनी दे। जैसा कि ऊपर बताया गया है अब तक की सबसे बड़ी यूबीआई योजनाएं तुलनात्मक रूप से छोटी रही हैं। सबसे बड़ी योजना में केन्या के ग्रामीण इलाकों के लगभग 20,000 निवासी शामिल थे। इस देश की कुल आबादी 5.6 करोड़ है। (केन्या के कुछ लोगों को लंबी अवधि के लिए जबकि कुछ को छोटी अवधि के लिए यूबीआई मिला)। फिनलैंड और आयरलैंड ने भी यूबीआई का प्रयोग किया है। फिनलैंड (55 लाख की आबादी) ने एक प्रायोगिक यूबीआई अध्ययन के तहत करीब 2,000 लोगों को कुछ राशि दी। वहीं आयरलैंड ने संघर्षरत कलाकारों (आबादी के एक बेहद छोटे वर्ग) को यूबीआई दिया ताकि उन्हें जीविका चलाने के लिए मजदूरी करने के बजाय कला पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। केन्या और फिनलैंड के प्रयोगों में ऐसे ही जनसांख्यिकीय समूहों के नियंत्रण समूह भी थे जिन्हें यूबीआई नहीं मिला।

उन अध्ययनों से यह अनुमान लगाना संभवतः गलत साबित हो सकता है कि यूबीआई बड़े पैमाने पर कैसे काम करेगा। हालांकि, हम जानते हैं कि इन मामलों में यूबीआई ने कुछ रोजगार के मौके दिए और जीवन की गुणवत्ता में सुधार कर स्थिति में सुधार लाने की कोशिश की।

लोगों ने इन पैसे को शराब पीने में बरबाद नहीं किया और न ही किसी ऐसे लक्जरी सामान पर खर्च किए जिन्हें वे आम तौर पर नहीं खरीद पाते थे। इन अध्ययनों में यह भी लगातार पाया गया है कि रकम हासिल करने वालों ने अपनी काम करने की क्षमता में कोई कमी नहीं लाई या शराब, तंबाकू या अन्य ड्रग्स पर पैसा खर्च नहीं किया। ऐसे कई उदाहरण देखे गए जब भोजन सुरक्षा, शैक्षणिक अर्हता, छोटे कारोबार में निवेश और दीर्घावधि की कमाई में सुधार देखा गया था। इससे दीर्घकालिक जीवन स्तर, मनोवैज्ञानिक बेहतरी के साथ ही जीवन प्रत्याशा में भी उल्लेखनीय सुधार देखा गया। हालांकि इसका पैमाना बड़ा नहीं था ऐसे में मुद्रास्फीति के प्रभाव पर गौर नहीं किया गया जो एक ऐसा क्षेत्र है, जहां सवाल हो सकते हैं खासतौर पर अगर लाभार्थियों की संख्या 3 करोड़ हो।

यह महज जोश से तैयार की गई योजना की तरह नहीं लगता है बल्कि मनरेगा जैसे कीन्सवादी उपायों का एक तार्किक विस्तार है। सहज रूप से, ग्रामीण बैंक और मनरेगा के अनुभवों से जो हम जानते हैं, उसके आधार पर भारत में सबसे कम दशमक (या पंचमक) वर्ग में बड़े पैमाने पर यूबीआई के सकारात्मक परिणाम हो सकते हैं। लोग छोटे कारोबारों में निवेश करेंगे और ऐसी योजना पिरामिड के नीचे मौजूद लोगों के लिए सेवाएं और उत्पाद उपलब्ध कराने वाले बाजार का विस्तार कर सकती है।

https://t.me/AINewsPaperPdf

आपका पक्ष

सशक्त रहेगी मोदी सरकार

इस समाचार पत्र में प्रकाशित चुनाव परिणाम संबंधित लेख भाजपा नीत गठबंधन सरकार के भविष्य के पांच वर्षों के कार्यकाल पर गंभीर चर्चा करते हैं। विपक्षी दल भी सरकार बनाने के निष्फल प्रयासों के बाद लोक सभा में विपक्ष में बैठने का मन बना चुके हैं। चुनाव परिणामों के बाद केवल एक दिन में राजनीतिक वातावरण में स्थिरता आ गई है जो बहुत प्रशंसनीय है और विश्व के लिए एक सबक है। जो विदेशी तत्त्व भारत में अस्थिरता चाहते हैं, भारतीय लोकतंत्र ने उन्हें निराश किया है। चुनावों के अंतिम दो चरणों में राजनीतिक परिवेश विषाक्त हो गया था जिसका यह परिणाम है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने बिल्कुल ठीक कहा है कि क्षेत्रीय स्तर पर विकास को प्राथमिकता दी जाएगी। अब उत्तर, उत्तर पूर्व, पूर्व और पश्चिम से दक्षिण तक राज्यों में भाजपा नीत गठबंधन सरकारें हैं और मोदी सरकार के पास क्षेत्रीय स्तर पर विकास कार्यों के लिए अधिक अवसर हैं। निस्संदेह

मोदी सरकार में मंत्रालय आवंटन के एक दिन बाद मंगलवार को एस जयशंकर ने विदेश मंत्रालय का कार्यभार दोबारा संभाला

भाजपा और सहयोगी दलों की संपूर्ण देश में व्यापकता बढ़ी है जो विपक्षी दल स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हैं। जनकल्याणकारी योजनाओं में अब अंत्योदय की भावना समाविष्ट करके वास्तव में बहुत ही निर्धन परिवारों को राशन देने के साथ रोजगार देने की आवश्यकता है। कोविड के दौरान 80 करोड़ जनता को मुफ्त राशन देने की व्यवस्था को अब सीमित करने पर सरकार को विचार करने की आवश्यकता है और शिक्षा, पर्यावरण, स्वास्थ्य एवं क्षेत्रीय औद्योगिक इन्फ्रास्ट्रक्चर पर अधिक बजट आवंटित होना चाहिए। चंद्रबाबू नायडू, नीतीश कुमार एवं अन्य सहयोगी दलों के नेता बहुत परिपक्व और धरातल के नेता हैं और मोदी सरकार को किसी असहज स्थिति में नहीं आने देंगे। विपक्षी दल भी गंभीर चुनौतियों में सरकार का साथ देंगे। कुल मिलाकर विदेश नीति, आर्थिक नीतियों, श्रम सुधार, रोजगार सृजन, देश की सुरक्षा, कृषि, शिक्षा, पर्यावरण संबंधी नीतियों पर मोदी सरकार के लिए कोई कठिनाई नहीं है।

विनोद जौहरी, दिल्ली

कैसे मिटेगा बाल श्रम

हर साल 12 जून को बाल श्रम निषेध दिवस मनाया जाता है। यह दिवस बच्चों को बाल श्रम के दुष्प्रभावों से बचाने और लोगों को इसके प्रति जागरूक करने के लिए मनाया जाता है। कोई भी गरीब माता-पिता नहीं चाहेगा कि उनके बच्चे छोटी उम्र में ही मजदूरी करें। आज देश में छोटे-छोटे बच्चे गरीबी के कारण मजदूरी करने को विवश हैं। बाल श्रम का कलंक मिटाने के लिए कानून बने हैं लेकिन सख्त कानून नहीं बल्कि बाल श्रम पर पाबंदी लगाने के लिए गरीब लोगों को कम संतान के लिए जागरूक हेतु गंभीरता जरूरी है। गरीबी दूर करने के भी उपाय करने चाहिए। कुछ गरीब लोग आमदनी बढ़े, इसके लिए ज्यादा संतान करते हैं ताकि वे बड़े होकर कमा सके। लेकिन इससे गरीबी दूर तो नहीं होती बल्कि बाल श्रम के कारण बच्चों का विकास नहीं हो पाता है और उनका भविष्य गर्त में चला जाता है। स्वयंसेवी संस्थाओं, सामाजिक संगठनों और सरकार को ऐसी मानसिकता वाले गरीब लोगों को समझाने की जरूरत है।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

भारत-जापान द्विपक्षीय वार्षिक अभ्यास 2024 के आठवें संस्करण में भाग लेने के लिए भारतीय नौसेना के युद्धपोत आईएनएस शिवालिक से जापान के योकोसुका पहुंचे नौसेना के अधिकारियों का मंगलवार को स्वागत किया गया।

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। बुधवार, 12 जून 2024

संदेह न रहे

नैशनल टेस्टिंग एजेंसी (NTA) संचालित NEET-UG का रिजल्ट घोषित होते ही पेपरलीक और नंबर देने में गड़बड़ी से जुड़े वे आरोप फिर सामने आ गए, जो पहले भी सिर उठा चुके हैं। हालांकि NTA ने इन आरोपों और शिकायतों को गलत बताया है, लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने ठीक ही कहा कि इन शिकायतों को सिर्फ इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता कि परीक्षा NTA द्वारा संचालित की गई है।

गंभीर हैं आरोप | इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि आरोप पहली नजर में गंभीर लग रहे हैं। मसलन- इस बार 67 कैंडिडेट ऐसे रहे, जिन्हें 720 में से 720 नंबर मिले हैं, जबकि पिछले पांच वर्षों में फुल मार्क्स पाने वाले टॉपरों की संख्या महज 3 रही है। याचिका दायर करने वालों के मुताबिक, अजब संयोग यह भी है कि ये 67 स्टूडेंट्स खास कोचिंग सेंटर से जुड़े हैं। ग्रेस मार्क्स देने के आधार, उसके तरीके पर तो सवाल उठाया ही गया है, इसमें पारदर्शिता की कमी को भी मुद्दा बनाया गया है। इन सब पर हालांकि NTA का अपना स्पष्टीकरण है, लेकिन देश में जितने बड़े पैमाने पर स्टूडेंट्स इन परीक्षाओं में शामिल होते हैं और उनकी आकांक्षाएं जुड़ी होती हैं, उसे देखते हुए गड़बड़ी के संदेह के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी जा सकती।

SC ने NTA से मांगा जवाब

परीक्षा प्रणाली में पूर्वाग्रह | NEET-UG को लेकर एक अन्य स्तर पर भी सवाल उठाए जा रहे हैं। सवाल यह है कि क्या NEET-UG का कॉन्सेप्ट गरीब और ग्रामीण विरोधी है। खासतौर पर, तमिलनाडु सरकार यह आरोप लगाती रही है कि NEET-UG के कारण राज्य के तमिलभाषी स्टूडेंट्स को नुकसान हो रहा है। शुरू में इसे एक क्षेत्रीय दल की विशिष्ट राजनीति से जुड़ा मुद्दा माना गया। लेकिन इस बीच तमिलनाडु सरकार द्वारा गठित जस्टिस एके राजन कमिटी की रिपोर्ट आ गई है, जो इन आरोपों की पुष्टि करती दिख रही है।

ग्रामीण स्टूडेंट्स की कम संख्या | रिपोर्ट के मुताबिक, 2017 में NEET-UG शुरू होने के बाद से तमिलनाडु में मेडिकल कॉलेजों में प्रवेश पाने वाले तमिल मीडियम स्टूडेंट्स की संख्या में पहले के मुकाबले अच्छी-खासी गिरावट आई है, इंग्लिश मीडियम स्टूडेंट्स की संख्या इसी अनुपात में बढ़ गई है। यही ट्रेंड ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के स्टूडेंट्स में भी देखने को मिलता है।

खुले दिल से हो विचार | सवाल यह है कि क्या यही स्थिति अन्य राज्यों में भी बन रही है? अगर हां तो उसके पीछे क्या वजहें हैं और इसे कैसे संतुलित किया जा सकता है? पेपरलीक और ग्रेस मार्क्स में कथित गड़बड़ियों की जांच तो हो ही, परीक्षा प्रणाली में जाने अनजाने रह गए पूर्वाग्रहों पर भी खुले दिल-दिमाग से विचार होना चाहिए।

कभी-कभी

बोली बिगड़ी

ललित वर्मा

हम जिस माहौल में बड़े हुए, गालियां उसका अलग न हो सकने वाला हिस्सा थीं। सब कहते कि गाली देना अच्छी आदत नहीं, लेकिन इनसे पीछा छूटना असंभव था। खेलते वक्त किसी से गलती हो जाती तो गाली। गपबाजी में कोई बात पसंद आ गई तो गाली। किसी पर प्यार आ गया तो गाली और किसी पर गुस्सा निकालना है तो गाली। अलग-अलग मौकों पर दी गई गाली का अलग-अलग प्रभाव था। मसलन, जो दो लोग किसी मौके पर भद्दी से भद्दी गाली खुशी-खुशी स्वीकार कर लेते थे, वही किसी मौके पर जरा सी गाली पर सिर फुटव्वल पर उतर आते थे। एक दिन दो भाइयों में किसी बात पर झगड़ा हुआ तो भाई के पीछे भागते हुए दूसरे ने मां की ऐसी गाली बकी, कि कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। शांत माहौल में हमने उससे पूछा कि ऐसी गाली भाई को क्यों बकते हो यार, तो उसने कहा : अबे गाली के शब्दों में मतलब ना निकाला करो, वो बस गुस्सा निकालने की भाषा होती है। खैर, गालियों की यह भूलभुलैया इतनी उलझी हुई लगती थी कि कभी इसका मनोविज्ञान समझ नहीं आ सका।

बड़े हुए तो पढ़ाई लिखाई, काम धंधे और घर परिवार में ऐसे घुसे कि सोचने का मौका ही नहीं मिला। सार्वजनिक मौकों पर गालियां कम सुनाई पड़ती थीं। गाली को लेकर सतर्कता भी दिखती। दिल्ली आने के बाद सामाजिक माहौल बदल चुका था। हालांकि दिल्ली भी गालियों के लिए बदनाम रही है। दिल्ली ही क्यों, हर शहर में जैसे भाषा-बोली बदल जाती है, गालियां भी बदलती हैं। कुछ 'सर्वमान्य' गालियों को छोड़कर अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग गालियां 'लोकप्रिय' होती हैं। एक दिन पत्नी ने चिंता जाहिर की कि बेटे ने कहीं से गाली सीख ली है। उसने मुझसे भी उसका मतलब पूछा था। मैंने अपने ढंग से उसे बता दिया कि ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। पता चला आसपास के कुछ बच्चे ऐसी गाली देते हैं, शायद उनसे सीख ली होगी।

मुंबई आने के बाद बेटे से पता चला कि यहां तो उनकी क्लास में लड़कियां भी गंदी वाली गालियां देती हैं। वैसे, गालियों पर लड़कों का एकाधिकार हो भी क्यों? पार्क में खेलते वक्त 9-10 साल के बच्चों को भद्दी गालियां देते देखा। हालांकि जो चीज इंसानी सभ्यता का सदियों से हिस्सा रही, उसके लिए शहर क्या, गांव क्या। मोबाइल नाम की डिबिया नन्हीं हथेलियों में चिपक चुकी है। रील्स देखने की आदत उन्हें भी लग चुकी है। इसलिए उनकी भाषा बड़ों से अलग नहीं हो सकती। लेकिन आंख नहीं मूंद सकते। बच्चों को गालियों के जंजाल से निकालने की कोशिश जरूरी है। शुरुआत अपने बच्चे से करनी होगी।

एकदा

भूकंप में ध्यान

जर्मनी के दार्शनिक Eugen Herrigel (यूजीन हेराइगल) ध्यान के जरिए शांति पाने के लिए प्रयोग कर रहे थे। इसके लिए वह कई साधु-संतों, विद्वानों से मिले, पर वह अपने मकसद में सफल नहीं हो पाए। इसके लिए उन्होंने तीन वर्षों तक जापान में रहकर ध्यान के कई प्रयोग किए। फिर भी उन्हें संतुष्टि नहीं मिल पाई। उन दिनों वह जापान में एक होटल में रह रहे थे। जब निराश होकर वह होटल छोड़ रहे थे, तब होटल मालिक ने रुकने की सलाह दी। इस बीच होटल मालिक ने एक शाम होटल की ऊपरी छत पर हेराइगल की मुलाकात बोकोजू नाम के एक फकीर से करवाई। कुछ और लोग भी उनसे मिलने आए। बोकोजू ध्यान के बारे में बता रहे थे। उसी दौरान अचानक भूकंप आ गया और सभी ने झटके महसूस किए। इसके बाद डरकर कुछ लोग भागने लगे। हेराइगल भी उठकर चलने को तैयार हुए कि उनकी नजर बोकोजू पर पड़ी। वह आंखें बंद करके स्थिर बैठे हुए हैं। हेराइगल ने सोचा, जब बोकोजू नहीं उठ रहे हैं, तो मैं क्यों उठूं? वह भी हिम्मत करके आंखे बंद कर बैठ गए। उन्हें समय का भी आभास न रहा। थोड़ी देर बाद भूकंप शांत हुआ और बोकोजू ने अपना ध्यान तोड़कर आंखें खोलीं और चर्चा आगे बढ़ाई। चर्चा समाप्त होने पर हेराइगल ने बोकोजू से पूछा- भूकंप आने पर अन्य लोगों की तरह आप क्यों नहीं भागे। फकीर ने जवाब दिया- आपने ध्यान से देखा नहीं, मैं भी भागा था। फर्क सिर्फ इतना था कि दूसरे लोग बाहर की तरफ भागे, मैं भीतर की तरफ भागा था और जहां जाकर रुका वहां न तूफान था, न भूकंप। ध्यान का यही चरम है, जहां बाहरी वातावरण चेतना को प्रभावित न कर सके। हेराइगल की उलझन यह बात सुनकर शांत हो गई थी।

संकलन : **रमेश जैन**

यूरोपीय संसद के चुनावों में लिबरल धारा और पर्यावरण के लिए काम करने वाली पार्टियां कमज़ोर हुईं

क्या यूरोप में बढ़ेगा राष्ट्रवाद का ज़ोर

चंद्रभूषण

यूरोपीय संसद के चुनाव ऐसे तो बहुत ज्यादा चर्चा में नहीं होते लेकिन इस बार उसके चुनाव नतीजों पर उसी तरह बात हो रही है, जैसे किसी और महाशक्ति के आंतरिक चुनाव पर होती है। आलम यह है कि इसके असर में फ्रांस के आम चुनाव घोषित हो गए हैं और जर्मनी में भी इसकी मांग उठने लगी है।

ऐतिहासिक मोड़ | इस बदलाव का सबसे बड़ा कारण यह है कि यूरोप अभी एक ऐतिहासिक मोड़ से गुजर रहा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यूरोप का सबसे बड़ा युद्ध यूक्रेन की जमीन पर चल रहा है, जिसमें एक तरफ रूस है और दूसरी तरफ सारे नैटो (NATO) देश। इस लड़ाई में एक तरफ धन की बर्बादी हो रही है, दूसरी तरफ तेल और गैस समेत बहुत सारे प्राकृतिक संसाधन, जिन पर यूरोप की संपदा निर्भर करती थी, रूस से आने बंद हो गए हैं।

विस्थापितों की बाढ़ | अगली बड़ी समस्या यह है कि पूरा मध्यपूर्व, जिसमें पश्चिमी एशिया और उत्तरी अफ्रीका शामिल हैं - लीबिया, सीरिया, इराक और लेबनान से लेकर अफगानिस्तान तक- पूरा इलाका अभी उजड़ा पड़ा है और वहां से बड़ी संख्या में लोग भागकर यूरोप जा रहे हैं। दसियों लाख लोग तुर्किये और इटली के रास्ते यूरोप के शहरों में भर गए हैं। पेरिस और बर्लिन से लेकर मिलान और वारसा तक कई मशहूर शहर, जो सदियों से अपने सुंदर रखरखाव के लिए जाने जाते रहे हैं, अभी विशाल झुग्गी झोपड़ियों से कसे हुए नजर आ रहे हैं।

महंगाई और बेरोजगारी | इसका सबसे बड़ा नुकसान यह हो रहा है कि यूरोप का कम पढ़ा लिखा मैनुअल लेबर वाला तबका या तो बेरोजगार हो गया है या उसको बहुत कम मजदूरी पर काम करना पड़ रहा है। महंगाई और बेरोजगारी की शक्ल में जाहिर हो रहे इन दोनों मुद्दों को लेकर यूरोप में काफी गुस्सा है।

क्या कहते हैं नतीजे

- युद्ध और विस्थापन से परेशान लोग
- बेरोजगारी बनी एक बड़ा मसला
- EU की ताकत कम करने का दबाव

कब थमेगी लड़ाई | दो यक्ष प्रश्न लोगों के सामने हैं - यूक्रेन की लड़ाई कब ठंडी पड़ेगी और विस्थापितों की वापसी का कुछ हो पाएगा या नहीं? दोनों मसले सबसे ज्यादा तीखे ढंग से फ्रांस, जर्मनी और इटली की अति राष्ट्रवादी पार्टियों ने उठाए हैं और यूरोपीय संसद के चुनाव में उनके वोट 2019 के मुकाबले डेढ़ से दो गुना हो गए हैं। इन नतीजों का एक संदेश साफ है कि यूक्रेन की लड़ाई में अधिक से अधिक कुर्बानी देने की अमेरिकी पुकार यूरोप में पहले से कम सुनी जाएगी।

यूरोपीय एकजुटता | यूरोपीय संसद को समझना हो तो यह यूरोप के एकीकरण के सात स्तरों और कानून बनाने से जुड़े तीन स्तरों वाले ढांचे में एक है। सेकंड वर्ल्ड वार के बाद यूरोप समझ गया कि आपस में युद्ध का रास्ता उसे कहीं का नहीं छोड़ेगा। एकजुटता की कोशिशों के क्रम में अब से 71 साल पहले यूरोपियन पार्लियामेंट का गठन हुआ, हालांकि इसके लिए हर पांच साल पर होने वाले चुनाव 1979 से होने शुरू हुए।

लेबर तबका नाराज : यूरोप में महंगाई और बेरोजगारी बन गए हैं बड़े मुद्दे

त्रिस्तरीय व्यवस्था | यह संसद एक त्रिस्तरीय व्यवस्था के बीच में पड़ती है। सबसे ऊपर यूरोपियन कमीशन है, जो किसी मुद्दे पर कोई प्रस्ताव रखता है। यूरोपीय संसद उस पर बहस और वोटिंग करती है। इसके बाद अंत में राष्ट्रीय सरकारों के प्रतिनिधियों को लेकर गठित 27 सदस्यीय यूरोपियन काउंसिल अंतिम रूप से यूरोपीय संसद की राय को स्वीकारती है, नकारती है, उसमें कोई सुधार करती है या फिर उसका कोई सदस्य वीटो कर देता है।

ज्यादा सीटें जर्मनी को | यूरोपीय संसद में अभी 720 सीटें हैं। 2019 के चुनाव में 705 सीटें थी। सबसे ज्यादा सांसद जर्मनी से, फिर फ्रांस, इटली और स्पेन से चुनकर आते हैं। सबसे कम, छह-छह सीटें माल्टा और Luxembourg को मिली हुई हैं। यूरोपीय संसद में अलग-अलग मिजाज की पार्टियों को मिलाकर बने गुटों में ये सांसद बैठते हैं।

अधिकार में कमी का दबाव | इस बार के चुनाव नतीजों का एक और खराब पहलू यूरोपियन यूनियन के अधिकारों में कमी का दबाव बनने का है। इसकी वकालत करने वाली पार्टियों ने पहली बार लगभग एक चौथाई सीटें जीत ली हैं, जो उनके इतिहास का सबसे अच्छा प्रदर्शन है। इस्टैब्लिशमेंट की जो पार्टियां हैं, उनमें जर्मनी की क्रिश्चियन डेमोक्रेटिक यूनियन जैसे मध्य-दक्षिणपंथी दलों ने सबसे ज्यादा 191 सीटें जीती हैं। उसके बाद 125 के लगभग सीटें सोशल डेमोक्रेट्स ने जीती हैं। इन दोनों को इस्टैब्लिशमेंट की पार्टी कहा जाता है जो कि यूरोपियन यूनियन का होना सुनिश्चित करते हैं। यानी यूरोपियन यूनियन के अस्तित्व पर फिलहाल खतरा नहीं है।

राष्ट्रों की पहचान पर जोर | फ्रांस में Emmanuel Macron वाली लिबरल धारा और पर्यावरण के लिए लड़ने वाली ग्रीन पार्टियां कमजोर हुई हैं और दूसरी तरफ यूरोपीय संघ के बजाय राष्ट्रों की पहचान पर ज्यादा जोर देने वाली पार्टियां मजबूत हुई हैं। इससे ऐसा लगता है कि अगले पांच बरसों में, खासकर अमेरिका में डॉनल्ड ट्रंप के चुन लिए जाने की स्थिति में अमेरिका और यूरोप का नया कॉम्बिनेशन यूक्रेन के लिए नुकसानदेह साबित होगा। यह भी संभव है कि रूस और यूरोप के बीच का तेल और गैस आयात का जो इंफ्रास्ट्रक्चर समाप्त हो गया है, उसको फिर से खड़ा करने की मांग तेज हो जाए।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

बदल रहा देश का ज़ायका

भारत बदल रहा है और बदल रही है उसकी थाली। बदलाव आ रहा है लोगों की फूड हैबिट्स में। गांव हो या शहर, देश का कोई कोना इससे बचा नहीं। **Household Consumption Expenditure** सर्वे के डेटा इस कहानी को बता रहे हैं। आइए आंकड़ों से समझते हैं उस कहानी को ...

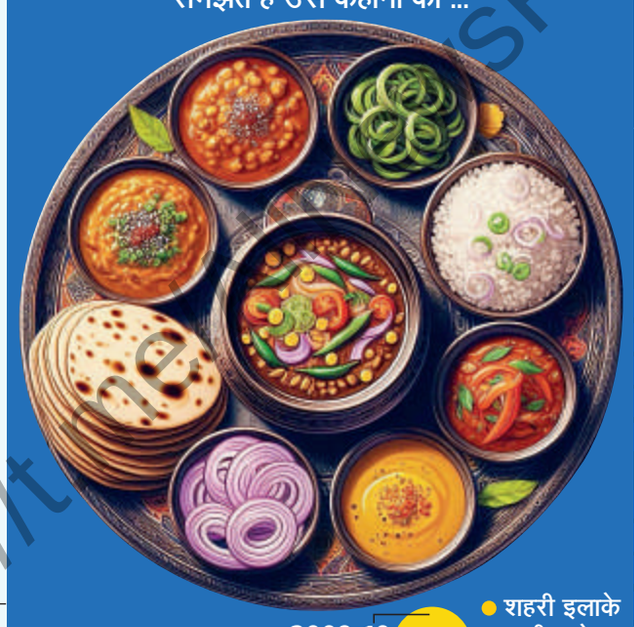

7 खानों में बंटी थाली

रिपोर्ट में फूड आइटम्स को इस तरह से बांटा गया है - **Beverages & processed food, दूध और दूध के बने उत्पाद, सब्जियां, अंडा-मीट और मछली, अनाज, खाद्य तेल, फल, दूसरे फूड आइटम्स।**

खाने पर खर्च घटा

आंकड़ों को सपाट देखें यानी महंगाई दर को छोड़ते हुए तो जाहिर तौर पर खर्च बढ़ा है। लेकिन, जीवन यापन पर होने वाले कुल खर्च में खाने-पीने की हिस्सेदारी देखी जाए तो अब पेट पर कम जेब ढीली करनी पड़ रही...

खानपान पर खर्च

शहरी इलाके	
2009-10	₹1,984
2011-12	₹2,630
2022-23	₹6,459
ग्रामीण इलाके	
2009-10	₹1,054
2011-12	₹1,430
2022-23	₹3,773

प्रति व्यक्ति हर महीने खानपान पर खर्च पिछले 10 बरसों में घटा है। इसे प्रतिशत में भी देख सकते हैं...

ग्रामीण क्षेत्र

2011-12 **52.9%**
2022-23 **46.4%**

शहरी इलाके

2011-12 **42.6%**
2022-23 **39.2%**

कंटेंट: **शैलेंद्र पांडेय**
ग्राफिक्स: **अर्जुन सिंह**

अनाज से दूरी

2009-10 से लेकर अभी तक प्रति व्यक्ति खाने-पीने की कुल खपत में अनाज का प्रतिशत घटता गया है। यह ट्रेंड ग्रामीण और शहरी, दोनों इलाकों में है...

एक्सपर्ट की राय...

जब कोई सोसायटी ज्यादा प्रभावी होती है, तो लोग प्रोसेस्ड फूड की ओर मुड़ते हैं। इसकी वजह है कि अनाज और सब्जियों को रोजाना की जरूरत समझा जाता है, जबकि प्रोसेस्ड फूड को एस्पिरेंट्स। इनकी मार्केटिंग ज्यादा होती है, इमेज अट्रैक्ट करती है। फिर पैकेज्ड फूड लेना सरल भी है। हालांकि यह ट्रेंड गलत है।

- अनूठी विशाल, फूड हिस्टोरियन और लेखिका

कुछ राज्य अपवाद

पहली बार Household consumption में खाने-पीने की हिस्सेदारी औसतन 50% से नीचे आ गई है। हालांकि कुछ राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में यह इसके ऊपर भी है...

54% बिहार | **54%** असम | **51%** बंगाल

(यूपी में 47, हरियाणा में 46 और महाराष्ट्र में 41%)

पास आए गांव और शहर

ग्रामीण और शहरी भारत के बीच खानपान पर होने वाले खर्च का अंतर घटा है। 2009-10 में यह अंतर 88% था। लेकिन, पिछले और इस दशक में गांव तेजी से शहरों के करीब आ रहे हैं...

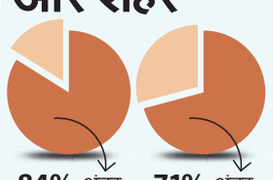

84% अंतर 2011-12 में | **71%** अंतर 2022-23 में

केरल नंबर 1

गांव और शहरों में प्रति व्यक्ति खपत के अंतर को कम करने में केरल सबसे आगे है और छत्तीसगढ़ सबसे पीछे। राज्यवार देखते हैं कहां कितना अंतर...

छत्तीसगढ़ 82%
असम 79%
झारखंड 78%
ओडिशा 76%
गुजरात, कर्नाटक 74%

एक नजर इन पर भी

केरल 19%
यूपी 58%
हरियाणा 63%
महाराष्ट्र 66%

सबसे चटोरा तमिलनाडु

Beveragaes, processed food पर सबसे अधिक खर्च किया गया तमिलनाडु में...

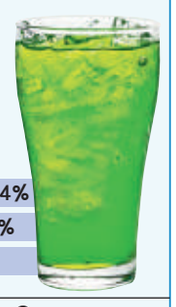

तमिलनाडु 28.4%
कर्नाटक 25.4%
असम 24.6%

हरियाणा में दूध की नदी

दूध और दूध से जुड़े उत्पादों पर खर्च करने में हरियाणा सबसे आगे रहा। देखते हैं प्रमुख राज्यों ने किन तीन चीजों पर सबसे ज्यादा खर्च किया है...

उत्तर प्रदेश
दूध और दूध के उत्पाद 22.6%
B&P 18.3%
सब्जियां 11.7%

हरियाणा
दूध और दूध के उत्पाद 41.7%
B&P 14.5%
सब्जियां 12.2%

महाराष्ट्र
B&P 19.9%
दूध और दूध के उत्पाद 13.8%
सब्जियां 11.2%

बिहार
B&P 18.7%
दूध और दूध के उत्पाद 17.1%
अनाज 13.1%

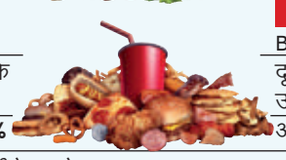

नोट : खाने-पीने का डेटा Monthly Per Capita Quantity Consumption के अनुसार यानी प्रति व्यक्ति हर महीने होने वाली खपत। B&P - Beverages & processed food

THE SPEAKING TREE
और पढ़ने के लिए देखें
hindi.speakingtree.in

मन अकेला मान ले, पर आप कभी अकेले नहीं होते

जे. कृष्णमूर्ति

जीवन के जटिल मुद्दों पर जब चुनौतियां हमें घेरती हैं तो निश्चित ही हम मिल-जुलकर उसके समाधान खोजने का प्रयास करते हैं। यह पता लगाना जरूरी बन जाता है कि जिंदगी में अपने संबंधों में सुधार लाना कितना जरूरी है। संबंध ही समाज है। आपके और मेरे बीच का संबंध, मेरे और किसी और के बीच का संबंध ही समाज का ढांचा है। और यही ढांचा समाज की प्रकृति है। और जब उस संबंध में कोई व्यवस्था नहीं रहती, जैसा कि आजकल दिखाई दे रहा है, तब निश्चित ही हर कर्म न केवल contradiction लाता है, बल्कि बेइंतहा दुख, परेशानी, भ्रम और द्वंद्व भी पैदा करता है। इस पर हम मिल-जुलकर सोचें, क्योंकि यह यात्रा हम साथ-साथ कर रहे हैं, मानो एक-दूसरे का हाथ थामे हुए, स्नेह के साथ, एक सरोकार के साथ। यदि आप बस यूं ही भाषण सुनते रहेंगे तो जीवनयात्रा में संबंधों की अहमियत को नहीं समझ सकेंगे।

इसी से संबंधों में सुव्यवस्था आएगी। सुव्यवस्था गणित की तरह एकदम निश्चित है, एकदम शुद्ध और संपूर्ण है। और हम पता लगाने जा रहे हैं कि क्या ऐसी व्यवस्था मुमकिन है? संबंध के बिना कोई जी नहीं सकता। भले ही आप सब कुछ छोड़-छाड़कर संन्यासी बन जाएं, लेकिन आप किसी न किसी से संबंधित रहते ही हैं। इस ध्रुव सत्य से आप बच नहीं सकते। आप अलग-थलग रहकर नहीं जी सकते। कोई न कोई आपसे जुड़ा रहना ही चाहिए। अक्सर ऐसा कहते सुना जाता है- 'मैं बिलकुल अकेला हूं। मुझे किसी के साथ की जरूरत नहीं है या मैं किसी के साथ नहीं रह सकता। मुझे एकांत चाहिए।' आपका मन ऐसा भले ही मान ले कि वह अकेले, एकांत में जी रहा है, या एकांकी अवस्था को पैदा कर रहा है, पर उस एकांत में भी आप किसी न किसी से संबंधित हैं।

जीवन संबंध है और संबंध जीवन है। यदि आप और मैं अपने चारों ओर दीवार खड़ी कर लें, और उस दीवार के ऊपर से कभी-कभार बस झांक लें, तो हम जी नहीं सकते। अवचेतन रूप से, कहीं गहराई में, दीवार के नीचे-पीछे भी हमारे बीच एक रिश्ता है। मुझे नहीं लगता कि हम लोगों ने संबंध के इस सवाल पर बहुत अधिक ध्यान दिया है। आपके ग्रंथ संबंध के बारे में कुछ नहीं बताते। वे ईश्वर के बारे में, रीति-रिवाजों और कर्मकांडों के बारे में-सांस कैसे लेना है, यह या वह कैसे करना है, इसी की चर्चा करते हैं। मुझे बताया गया है कि संबंध का कभी जिक्र नहीं आता। संबंध में जिम्मेदारी निहित है, वैसे ही जैसे स्वतंत्रता में। संबंधित होने का अर्थ है जीना। यही जीवन है, अस्तित्व है। और संबंधों में, आपसी रिश्तों में यदि अव्यवस्था है, तो हमारी पूरी सामाजिक संरचना, सारी संस्कृति छिन्न-भिन्न होकर बिखर जाएगी, जो अभी हो रहा है।

तो व्यवस्था क्या है, आजादी क्या है, और संबंध क्या है? अव्यवस्था क्या है? क्योंकि जब मन वाकई गहराई से, अंतर्मन से उसे समझ लेता है जिससे अव्यवस्था पैदा होती है, तब उस अंतर्दृष्टि में से उस सजगता में से, उस अवलोकन में से, व्यवस्था खुद-ब-खुद निकलकर आती है। ऐसा कोई तैयार नक्शा या खाका नहीं होता जो बता दें कि व्यवस्था क्या होनी चाहिए। हम उसी अनुसार पले-बढ़े हैं, एक ढर्रे में। सारा खेल व्यवस्था का है। व्यवस्था बनने के बाद रिश्ते माले में पिरोए गए मोती की तरह जुड़ते रहते हैं।

साभार : पुस्तक 'प्रेम क्या है'

हिंदुत्व की राजनीति कितनी काम आई

दयाशंकर शुक्ल सागर

अयोध्या में जब राम मंदिर बनकर तैयार हुआ तो हिंदुत्व की राजनीति में दिलचस्पी रखने वालों को लगा कि गौरवशाली हिंदू राष्ट्र की वापसी हो रही है। एक नैरेटिव यह भी बनाने की कोशिश हुई कि अगर तीसरी बार भी नरेंद्र मोदी की पूर्ण बहुमत की सरकार बनी तो भारत को हिंदू राष्ट्र बनने से कोई नहीं रोक सकता। लेकिन, हिंदी बेल्ट में BJP की सीटें बढ़ने के बजाय कम हो गईं। सबसे तगड़ा झटका लगा यूपी में। संविधान बदले जाने का डर दिखाकर I.N.D.I.A. गठबंधन ने बड़ी आसानी से हिंदू वोटरों की कथित एकजुटता को तहस-नहस कर दिया।

डर ने एक किया | BJP को हिंदुत्व की राजनीति के नकारात्मक परिणाम झेलने पड़े। धर्म की राजनीति ध्रुवीकरण के सिद्धांत पर आधारित है। आप एक धर्म के लोगों को गोलबंद करेंगे तो उसके बरक्स दूसरे मजहब के वोटर अपने आप एकजुट हो जाएंगे। शुरू से ही देश के मुसलमान उस पार्टी के उम्मीदवार को जिताने के लिए वोट देते हैं, जो BJP को हरा सके। 'घुसपैठिए' और 'ज्यादा बच्चे पैदा करने वाले' जैसे बयानों ने भयभीत मुसलमानों को एकजुट कर दिया। विपक्ष ने इसका खूब फायदा उठाया।

टिकट बंटवारा | यूपी में समाजवादी पार्टी ने रणनीतिक समझदारी से टिकट बांटे। उसने उस दलित या अति पिछड़ा जाति के उम्मीदवार को टिकट दिया जिसके संसदीय क्षेत्र में ज्यादा सजातीय वोटर थे। पार्टी को पता था कि यादव और मुस्लिम वोटर एकजुट होकर उसी को सपोर्ट करेंगे। मंडल के प्रयोग के बाद पिछड़ों की जातीय पहचान किसी भी धर्म या राजनीतिक प्रतिबद्धता से ज्यादा बड़ी सचाई बनकर उभरी है। सत्ता की आकांक्षा उन्हें आपस में जोड़ती है।

राजनीति के सवाल | 2019 में तीन तलाक के मुद्दे से प्रभावित होकर बड़ी संख्या में मुस्लिम महिलाओं ने BJP को वोट दिया था। इस बार ऐसा नहीं हुआ। मुसलमान बड़ी संख्या में घरों से निकले और I.N.D.I.A. को एकमुश्त वोट दिया। अब सियासी हलके में बहस छिड़ गई है कि क्या देश में हिंदुत्व की राजनीति अप्रासंगिक हो चुकी है?

कॉमन रूम

अयोध्या का असर | देश का मूल चरित्र सेकुलर है। राम जन्मभूमि मामला फौरी मुद्दा था, जिसने 90 के दशक में BJP के नेतृत्व में हिंदुओं के एक वर्ग को गोलबंद करना शुरू कर दिया था। विवादित ढांचा ध्वंस इस मुद्दे का क्लाइमेक्स था। इसके बाद केंद्र में अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में तीन बार BJP की सरकार बनी। लेकिन, हिंदुओं ने BJP को एक बार भी राम मंदिर बनाने का जनादेश नहीं दिया। 1992 से लेकर 2014 तक हिंदुत्व का ऐसा कोई सैलाब नहीं आया, जो BJP को अपने दम पर सरकार बनाने का सुरक्षित रास्ता दे सके।

अटल-मोदी में अंतर | अटल-आडवाणी की राजनीति भी हिंदुत्व की थी, लेकिन इन दोनों नेताओं ने कभी सीधे तौर पर मुसलमानों की आलोचना नहीं की। BJP पर शोध करने वाले विनय सीतापति अपनी किताब **'Jugalbandi: The BJP Before Modi'** में लिखते हैं, '2019 के चुनाव प्रचार के दौरान एक पत्रकार ने अमित शाह से पूछा कि मोदी और उनकी जोड़ी और वाजपेयी-आडवाणी की जोड़ी में क्या अंतर है? शाह का जवाब था, उन्हें कभी विश्वास नहीं था कि खुले तौर पर हिंदुत्व का झंडा लहराने से उन्हें वोट मिलेंगे।'

सत्ता का संतुलन | संविधान में अगर भारत एक पंथ निरपेक्ष देश है तो वजह यह है कि बहुसंख्यक हिंदू समाज पंथ निरपेक्ष है। ऐसे राष्ट्र में शासन करने के लिए सभी धर्म, संप्रदाय और जातियों में संतुलन बनाए रखना जरूरी है। कांग्रेस ने इसी मंत्र के सहारे लंबे समय तक राज किया, लेकिन जब मुस्लिम वोटों के लिए तुष्टिकरण की नीति अपनाई तो सत्ता से बेदखल हो गई। जाहिर है कि किसी भी लोकतांत्रिक देश की सियासत में संतुलन अनिवार्य है। 2024 के चुनावी नतीजों का भी यही संदेश है।

आर.एन.आई. नं. 510/57© सर्वाधिकार सुरक्षित। लिखित अनुमति के बिना संपूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित। स्वत्वाधिकारी बैनेट, कोलमैन एण्ड कम्पनी लिमिटेड के लिए राजीव यादव द्वारा, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस, साइट IV, औद्योगिक क्षेत्र साहिबाबाद** और प्लॉट नंबर 7-8, सेक्टर M-11, ट्रांसपोर्ट हब, इंडस्ट्रियल मॉडल टाउनशिप, मानेसर, हरियाणा से मुद्रित। फोन : 23302000 फैक्स: 23492047, पंजीकृत कार्यालय : दादाभाई नौरोजी रोड, मुंबई-400001। विमान सेवा शुल्क : 1 रु. प्रति कॉपी। नेपाल में कुल मूल्य : सोमवार से शनिवार : नेपाली 5 रु. ; रविवार : नेपाली 6 रु.
संपादक (दिल्ली मार्केट) : आशीष पांडे (इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अन्तर्गत उत्तरदायी)

जल संरक्षण जरूरी

साल-दर-साल गर्मियों में तापमान बढ़ते जाने से देश के विभिन्न हिस्सों में पेयजल की कमी की समस्या गंभीर होती जा रही है. सूखे क्षेत्रों और अनेक महानगरों में तो यह बेहद गहन है. कुछ समय पहले दक्षिण में बेंगलुरु में पानी के लिए कई दिनों तक हाहाकार मचा रहा था. वहां अभी भी स्थिति सामान्य नहीं हो पायी है कि दिल्ली में जल संकट आ खड़ा हुआ है. अनेक शहरों में आपूर्ति बाधित हुई है. हमारे देश में दुनिया की 18 फीसदी आबादी बसी हुई है, पर साफ पानी का महज चार फीसदी ही हमारे हिस्से है. यदि हमने दूरदर्शिता के साथ नदियों, जलाशयों, भूजल और वर्षा जल का संरक्षण किया होता तथा पानी के उपभोग को नियंत्रित रखा होता है, तो आज की स्थिति पैदा ही नहीं हो पाती. निश्चित रूप से धरती के बढ़ते तापमान के साथ जलवायु में तेजी से बदलाव आ रहा है. यह बदलाव पृथ्वी पर सभी जीवों के अस्तित्व के लिए खतरा बनता जा रहा है. इस खतरे के लिए भी मानवीय उपभोग उत्तरदायी है. हमारे देश में नदियों, जलाशयों, भूजल और बरसात से जितना पानी उपलब्ध है, वह हमारी वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त है. पर अंधाधुंध बढ़ते शहरीकरण ने बड़ी संख्या में जलाशयों और छोटी नदियों को निगल लिया. जमीन पर कंक्रीट पसार कर हमने बारिश के पानी को मिट्टी में जाने और भूजल के रिचार्ज होने की प्रक्रिया को अवरुद्ध कर दिया. इस गलती के कारण पानी की कमी ही नहीं, औचक बरसात से शहरों में बाढ़ आने की घटनाओं में भी बढ़ोतरी हुई है. अधिक समय नहीं बीता है, जब बेंगलुरु में झीलों एवं तालाबों की भरमार थी तथा दिल्ली में भी कई जलाशय होते थे. प्रदूषण, गाद भरने और बालू खनन जैसे विभिन्न कारणों से नदियों का जल स्तर तेजी से गिर रहा है. भयावह दोहन ने भूजल का स्तर बहुत नीचे कर दिया है. केंद्र और राज्य सरकारों ने नल से जल पहुंचाने के लिए उल्लेखनीय प्रयास किये हैं, पर पानी की उपलब्धता तथा गुणवत्ता पर समुचित ध्यान दिये बिना आपूर्ति को बेहतर नहीं किया जा सकता है. यह भी एक बड़ा असंतुलन है कि सरकार और समाज के स्तर पर आपूर्ति पर अधिक ध्यान दिया गया है. हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि नदी, जलाशय या भूमि में पानी होगा, तभी उसे घरों, बाजारों और उद्योगों तक पहुंचाया जा सकता है. दूषित पेयजल के मामले में हम 180 देशों में 141 वें स्थान पर हैं. हमारा लगभग 70 प्रतिशत पानी प्रदूषित है. देश के सैकड़ों जिलों में भूजल में आर्सेनिक तत्वों का मिश्रण है. पानी की मांग बढ़ती जा रही है. ऐसे में हमें जल संरक्षण तथा समुचित उपभोग को प्राथमिकता देनी होगी, अन्यथा यह संकट सघन होता जायेगा.

हमारे देश में दुनिया की 18 फीसदी आबादी बसी हुई है, पर साफ पानी का महज चार फीसदी ही हमारे हिस्से है.

मुख्य प्राथमिकताओं पर ध्यान दे नयी सरकार

अजीत रानाडे
अर्थशास्त्री
editor@thebillionpress.org

रोजगार बढ़ाने के लिए अग्निवीर कार्यक्रम की अवधि को तीन या चार वर्ष और बढ़ाना चाहिए. अधिकारियों के लिए शॉर्ट सर्विस कमीशन की अवधि दस वर्ष है, इसलिए दूसरे तरह की सेवाओं, जैसे अग्निवीर, में इसे लागू करना तर्कसंगत है. अनुभव, प्रशिक्षण और अनुशासन में वृद्धि से निजी क्षेत्र में उनके लिए रोजगार की संभावनाएं बढ़ जायेंगी.

प्रधानमंत्री के रूप में नरेंद्र मोदी के तीसरी बार शपथ ग्रहण के साथ नयी सरकार का गठन हो गया है. उनकी पार्टी पहले की तरह भले ही लोकसभा में पूर्ण बहुमत नहीं हासिल कर सकी, पर वह अभी भी सबसे बड़ी पार्टी है. भारत के राजनीतिक इतिहास में अधिकतर सरकारें गठबंधन की ही रही हैं. इस लिहाज से दस साल बाद भारत की राजनीति उसी अवस्था में लौट रही है, जो सामान्य ऐतिहासिक पैटर्न रहा है. ऐसे देश के लिए यह अचरज की बात नहीं होनी चाहिए, जहां हर संभव आयाम में अद्भुत विविधता दिखती है. ऐसे में लोकसभा का चुनाव एक चुनाव नहीं, बल्कि 543 अलग-अलग चुनाव है. यह चुनाव मुख्य रूप से स्थानीय मुद्दों पर ही लड़ा जाता है. निश्चित रूप से, कभी-कभी किसी करिश्माई या ताकतवर व्यक्तित्व के कारण राष्ट्रीय लहर भी होती है, पर अक्सर हार-जीत अन्य कारणों से कहीं अधिक स्थानीय मुद्दों से तय होती है. राष्ट्रीय सरकार का उत्तरदायित्व राज्य सरकारों से भिन्न होता है, जैसा कि संविधान की सातवीं अनुसूची में उल्लिखित है. समय के साथ-साथ केंद्र सरकार का राज्य सरकारों के क्षेत्राधिकार में 'अतिक्रमण' बढ़ता गया है. ऐसा अक्सर विकास प्रक्रियाओं को मजबूत करने या उनकी रफ्तार बढ़ाने के लिए हुआ है. इसीलिए केंद्र सरकार द्वारा पारित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम, 2013 जैसी पहलें खाद्य सुरक्षा, भूख और पोषण जैसे मामलों से संबंधित हैं, जो मुख्य रूप से राज्यों के अधिकार क्षेत्र में आते हैं. यही बात राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी, शिक्षा का अधिकार, आयुष्मान भारत स्वास्थ्य बीमा आदि के बारे में लागू होती है. ऐसे कई उदाहरण हैं. इस तरह के राष्ट्रीय नीतिगत हस्तक्षेप का उद्देश्य राज्यों के लिए पूरक होना या उन्हें मजबूत करना होता है, न कि उन्हें कमजोर करना. लेकिन राष्ट्रीय स्तर की पहलों में 'एक समान' दृष्टि के तत्व होते हैं, जिनमें क्षेत्रीय अंतरों को ढांप देने की प्रवृत्ति होती है.

इस पृष्ठभूमि में हम आकलन करें कि नयी सरकार की मुख्य प्राथमिकताएं क्या हैं और उनके लिए क्या कदम उठाये जा सकते हैं. सबसे अहम मुद्दा रोजगार और जीवनयापन का है. इंस्टीट्यूट ऑफ ह्यूमन डेवलपमेंट तथा अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन की एक हालिया रिपोर्ट में बताया गया है कि बेरोजगारों में 83 प्रतिशत की आयु 29 साल से कम है. युवा बेरोजगारी का समाधान उच्च प्राथमिकता है. यह चुनौती दो कारकों के चलते और गंभीर हुई है. पहला कारक ऑटोमेशन और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का खतरा है, जिससे वर्तमान रोजगार विकल्प खत्म हो सकते हैं. मैकिंजी की एक रिपोर्ट के अनुसार, इन तकनीकों से देश के लगभग 70 प्रतिशत मैन्युफैक्चरिंग रोजगारों पर जोखिम है. दूसरा कारक कौशल का व्यापक अभाव है. हमारे यहां रोजगार की कमी भी है और कौशल की भी. हमें ऐसे कौशलों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों की जरूरत है, जो युवाओं को भविष्य के रोजगार के लिए तैयार करे, जो शायद अभी उपलब्ध नहीं हैं. कौशल और मानवीय पूंजी का सबसे अधिक विकास काम करते हुए होता है. इसलिए सरकार एक उपाय यह कर सकती है कि राष्ट्रीय स्तर पर प्रशिक्षु कार्यक्रम शुरू हों. यह छह से नौ माह का रोजगार होगा और रोजगार देने वाले को यह बाध्यता नहीं होगी कि वह प्रशिक्षु को 'स्थायी' रोजगार दे. प्रशिक्षु के प्रमाणपत्र पर एक राष्ट्रीय प्राधिकरण की मुहर हो और इसकी स्वीकार्यता पूरे देश में हो. ऐसी नीतियां और कार्यक्रम कई राज्यों में लागू हैं, पर उन्हें रचनात्मक रूप से राष्ट्रीय स्तर पर चलाने की कोशिश होनी चाहिए. रोजगार बढ़ाने के लिए अग्निवीर कार्यक्रम की अवधि को तीन या चार वर्ष और बढ़ाना चाहिए. अधिकारियों के लिए शॉर्ट सर्विस कमीशन की अवधि दस वर्ष है, इसलिए दूसरे तरह की सेवाओं, जैसे अग्निवीर, में इसे लागू करना तर्कसंगत है. अनुभव, प्रशिक्षण और अनुशासन में वृद्धि से निजी क्षेत्र में उनके लिए रोजगार की संभावनाएं बढ़ जायेंगी.

दूसरा अहम क्षेत्र है छोटे उद्यमों का. देश में सात करोड़ उद्यमों के होने का आकलन है, जिनमें से हर एक में एक से लेकर दस-बीस लोगों को रोजगार मिला हुआ है. इन्हें उद्यम पंजीकरण और वस्तु एवं सेवा नेटवर्क के दायरे में लाकर संगठित क्षेत्र का हिस्सा बनाया जा सकता है. छोटे कारोबार के सामने चार मुख्य चुनौतियां हैं- ऋण और आवश्यक पूंजी तक पहुंच, बाजार तक पहुंच, तकनीक तक पहुंच तथा वित्तीय एवं कराधान साक्षरता. पहली चुनौती के लिए उनके उद्यम पंजीकरण को जीएसटी नेटवर्क से जोड़ा जा सकता है ताकि उन्हें 45 दिन के भीतर भुगतान मिल जाए, जैसा 2006 के मझोले, छोटे एवं सूक्ष्म उद्यम कानून में प्रावधान है. असलियत में छोटे आपूर्तिकर्ता अपने बड़े ग्राहकों के दबाव में होते हैं, जिनके विरुद्ध वे कुछ नहीं कर पाते क्योंकि अक्सर वही एकमात्र और नियमित ग्राहक होता है. इसलिए हम भुगतान अनुशासन के लिए डिजिटल तकनीक का इस्तेमाल कर सकते हैं. देर से होने वाले भुगतान की अनुमानित राशि 10 लाख करोड़ रुपये है. यदि केंद्र सरकार कानूनी प्रावधानों को लागू करे और समुचित तंत्र बनाये, तो छोटे उद्यमों का बहुत भला हो जायेगा. ई-कॉमर्स और ओपन नेटवर्क फॉर डिजिटल कॉमर्स जैसी पहलों से बाजार तक पहुंच को सुनिश्चित किया जा सकता है. छोटे उद्यमों के लिए पूंजी उपलब्धता को परस्पर लेन-देन से बेहतर किया जा सकता है. साथ ही, इसके लिए स्थानीय साझा स्वामित्व की अनुमति दी जा सकती है. इस संबंध में विवरण संबद्ध विभागों के पास हैं, जरूरत है लागू करने की कोशिश की. तकनीकी मदद के लिए सरकार मुफ्त सुपर एप के विकास को प्रायोजित कर सकती है, जो कराधान से लेकर कारोबार के विभिन्न पहलुओं का ध्यान रखें. जिस प्रकार डिजिटल कैशलेस भुगतान के लिए भीम एप है, उसी तरह छोटे उद्यमों के लिए भी सरकार द्वारा निशुल्क वितरित एक तकनीकी उत्पाद होना चाहिए.

तीसरा सुझाव किसानों तथा निश्चित मूल्य से संबंधित है. समय आ गया है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य को कानूनी जामा पहनाया जाए. अभी 22 फसलों के लिए यह मूल्य तभी लागू होता है, जब बाजार मूल्य निर्धारित मूल्य से नीचे चले जाते हैं. आंकड़ों के हिसाब से ऐसा लगभग आधे समय होता रहता है. इसलिए वास्तविक वित्तीय भार उतना नहीं है, जितनी आशंका जतायी जाती है. साथ ही, जब सरकार खरीद करती है, तो दाम बढ़ने लगते हैं, जिससे न्यूनतम समर्थन मूल्य की गारंटी की जरूरत नहीं रह जाती. इससे संबंधित कानून मुख्यतः एक राजनीतिक निर्णय है, पर इससे किसानों का भरोसा हासिल होगा. **(ये लेखक के निजी विचार हैं.)**

गठबंधन की पहली परीक्षा में प्रधानमंत्री मोदी पास

राज कुमार सिंह
वरिष्ठ पत्रकार
journalistrksingh@gmail.com

उत्तर प्रदेश के नौ मंत्रियों में से अकेले राजनाथ सिंह कैबिनेट मंत्री हैं. वैसे प्रधानमंत्री मोदी खुद भी उत्तर प्रदेश के वाराणसी से ही सांसद हैं. उनके गृह राज्य गुजरात से भी छह मंत्री बनाये गये हैं. इस बार मोदी सरकार के कुल 72 सदस्यों में से लगभग दस प्रतिशत महिलाएं हैं, जबकि ओबीसी, एससी और एसटी समुदाय से 42 मंत्री बनाये गये हैं.

देश के पहले प्रधानमंत्री नेहरू ने 1952,1957 और 1962 में लगातार तीन बार देश की सत्ता संभाली थी. साल 2014 में पहली बार प्रधानमंत्री बने नरेंद्र मोदी ने तीसरी बार शपथ लेकर पंडित नेहरू का रिकॉर्ड बराबर कर लिया. साल 2014 और 2019 में अकेले बहुमत मिलने के बावजूद भाजपा ने सहयोगी दलों के साथ एनडीए सरकार बनायी थी, पर इस बार बहुमत के आंकड़े से पीछे छूट जाने के चलते गठबंधन सरकार मजबूरी बन गयी. मजबूरी ज्यादा बड़ी सिर्फ इसलिए नहीं है कि भाजपा के पास बहुमत नहीं है, बल्कि गठबंधन में चंद्रबाबू नायडू और नीतीश कुमार जैसे सहयोगी भी हैं, जो गठबंधन राजनीति के माहिर सौदेबाज माने जाते हैं. इस लिहाज से नयी मंत्रिपरिषद पर नजर डालें, तो कहा जा सकता है कि मोदी अपनी पहली परीक्षा में सफल रहे हैं.

एनसीपी (अजित पवार) के सरकार में शामिल न होने से अवश्य महाराष्ट्र की भावी राजनीति को लेकर कुछ कयास लगाये जा सकते हैं. मात्र एक लोकसभा सीट जीत पाये अजित पवार की एनसीपी के प्रफुल्ल पटेल को स्वतंत्र प्रभार के साथ राज्य मंत्री पद का ऑफर दिया गया था, जिसे अतीत में कैबिनेट मंत्री रह चुके पटेल ने अस्वीकार कर दिया. अजित पवार सौदेबाजी करने की स्थिति में नहीं हैं. सो, इस साल अक्तूबर में विधानसभा चुनाव में महाराष्ट्र की राजनीति पर क्या असर पड़ेगा, यह देखना दिलचस्प होगा, क्योंकि उनके गुट के एक दर्जन से भी ज्यादा विधायकों के शरद पवार के संपर्क में होने की खबरें हैं. शिवसेना तोड़ मुख्यमंत्री बनने वाले एकनाथ शिंदे कहीं अधिक कमजोर आंके जा रहे थे, पर लोकसभा चुनाव में उनका प्रदर्शन अजित पवार की एनसीपी से अच्छा रहा, जिसका पुरस्कार उन्हें एक कैबिनेट और एक राज्य मंत्री के रूप में मिला है. महाराष्ट्र से छह मंत्री बनाये गये हैं, जिनमें भाजपा की रक्षा खड़से भी हैं, जिनके श्वसुर एकनाथ खड़से शरद पवार की एनसीपी के एमएलसी हैं, पर वे अपनी पुरानी पार्टी भाजपा में वापसी करने वाले हैं. हरियाणा में भी अक्तूबर में विधानसभा चुनाव हैं, जहां से एक कैबिनेट मंत्री समेत तीन मंत्री बनाये गये हैं. दिल्ली में विधानसभा चुनाव अगले वर्ष फरवरी में है. वहां से एक राज्य मंत्री बनाया गया है.

मोदी सरकार में इस बार प्रधानमंत्री के अलावा 30 कैबिनेट मंत्री, पांच स्वतंत्र प्रभार वाले राज्य मंत्री और 36 राज्य मंत्रियों समेत कुल 71 मंत्री हैं. राजनाथ सिंह, अमित शाह, नितिन गडकरी, निर्मला सीतारमण और पीयूष गोयल जैसे पुराने चेहरे तय माने जा रहे थे, लेकिन भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष जेपी नड्डा, हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री मनोहर लाल और सभी 29 लोकसभा सीटें जिताने वाले मध्य प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान के रूप में कुछ नये चेहरे भी शामिल हुए हैं. इस बार मोदी सरकार में पूर्व मुख्यमंत्रियों की संख्या पांच है. जीतन राम मांझी, सर्वानंद सोनोवाल और एचडी कुमारस्वामी भी क्रमशः बिहार, असम और कर्नाटक के मुख्यमंत्री रह चुके हैं. मंत्री बने नड्डा का पार्टी अध्यक्ष के रूप में कार्यकाल इसी महीने समाप्त हो रहा है. नड्डा के मंत्री बनने के चलते ही शायद अनुराग ठाकुर का पत्ता कट गया है. चार लोकसभा सीटों वाले हिमाचल प्रदेश से एक से ज्यादा कैबिनेट मंत्री बनाये जाते, तो अन्य बड़े राज्यों में असंतुलन पैदा हो जाता. पिछली सरकार के सक्रिय मंत्रियों में शुमार अनुराग ठाकुर बड़बोले माने जाते हैं, पर आधुनिक राजनीति में वह तो नेता के पक्ष में जाता है. एक और बड़बोली मंत्री स्मृति ईरानी भी इस बार सरकार में नहीं हैं. वे इस चुनाव में कांग्रेस के एक अल्पज्ञात कार्यकर्ता किशोरी लाल शर्मा से हार गयीं. वैसे ऐन चुनाव से पहले कांग्रेस से भाजपा में आये रवनीत सिंह बिट्टू हार जाने के बावजूद राज्य मंत्री बनाये गये हैं. शायद भाजपा उन्हें पंजाब की राजनीति में अपने सिख चेहरे के रूप में आगे बढ़ाना चाहती है. बिट्टू आतंकवादी हमले में शहीद हुए पंजाब के कांग्रेसी मुख्यमंत्री बेअंत सिंह के पौत्र हैं. इसी रणनीति के तहत केरल में भाजपा का खाता खोलने वाले अभिनेता से राजनेता बने सुरेश गोपी को भी मंत्री बनाया गया है.

चुनाव हार जाने समेत कई कारणों से पिछली सरकार के 37 चेहरों को इस बार बाहर का रास्ता दिखाया गया है, जबकि 33 नये चेहरों की एंट्री हुई है. नये चेहरों में सहयोगी दलों के चिराग पासवान और जयंत चौधरी भी हैं. पिछली सरकार में चाचा पशुपति पारस को सत्ता सुख देने वाली भाजपा ने इस बार भतीजे चिराग की लोजपा से गठबंधन किया था. यह पार्टी बिहार में गठबंधन में मिली सभी पांच सीटें जीत गयी है. उत्तर प्रदेश में गठबंधन में मिली दोनों लोकसभा सीटें जीतने पर जयंत के हिस्से स्वतंत्र प्रभार के साथ राज्य मंत्री का पद आया. राज्यवार देखें, तो बिहार के आठ मंत्रियों में से चार कैबिनेट मंत्री बनाये गये हैं, जबकि उत्तर प्रदेश के नौ मंत्रियों में से अकेले राजनाथ सिंह कैबिनेट मंत्री हैं. वैसे प्रधानमंत्री मोदी खुद भी उत्तर प्रदेश के वाराणसी से ही सांसद हैं. उनके गृह राज्य गुजरात से भी छह मंत्री बनाये गये हैं. इस बार मोदी सरकार के कुल 72 सदस्यों में से लगभग दस प्रतिशत महिलाएं हैं, जबकि ओबीसी, एससी और एसटी समुदाय से 42 मंत्री बनाये गये हैं. **(ये लेखक के निजी विचार हैं.)**

देश दुनिया

जापान में जन्म दर बढ़ाने के लिए व्यापक चर्चा की जरूरत

जापान की पहले से ही कम जन्म दर में और कमी आयी है. पिछले वर्ष देश की 'कुल प्रजनन दर गिरकर अब तक के सबसे निचले स्तर 1.20 पर आ गयी. हालांकि डायट (जापानी संसद) ने संशोधित बाल एवं बाल देखभाल सहायता कानून लागू किया, परंतु सत्तारूढ़ और विपक्षी दलों द्वारा इस मुद्दे पर दिये गये तर्क परस्पर विरोधी रहे हैं. जनसांख्यिकीय गिरावट का सामना करने के लिए रचनात्मक द्विदलीय बहस की तत्काल आवश्यकता है. सरकार ने महामारी के दौरान विवाह में उल्लेखनीय कमी का हवाला देते हुए प्रजनन दर में कमी की संभावना जतायी थी. परंतु बाद में पता चला कि गिरावट अपेक्षा से अधिक तीव्र थी. वहीं विवाह की संख्या में भी बीते वर्ष की तुलना में लगभग छह प्रतिशत की गिरावट आयी और यह 5,00,000 से नीचे आ गयी. ऐसे में यह भविष्यवाणी कि इस वर्ष प्रजनन दर फिर से बढ़ने लगेगी, अब बहुत संदिग्ध लगती है. ऐसी स्थिति में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या सरकार के 'वैकल्पिक उपाय', जो संशोधित बाल देखभाल सहायता कानून पर केंद्रित हैं, गिरती जन्म दर को उलटने के लिए प्रभावी ढंग से स्थिति का समाधान कर सकते हैं? क्योंकि हाल ही में कभी विवाह न करने वालों की संख्या में वृद्धि हुई है. गिरती जन्म दर को रोकने के लिए वास्तव में कौन से प्रभावी उपाय किये जा सकते हैं? पूरे समाज में धन को कैसे बांटा जाना चाहिए? जब डायट ने नीतिगत उपायों पर विचार किया, तो इन जैसे मुख्य प्रश्नों को रचनात्मक बहस में संबोधित किया जाना चाहिए था. इन मुद्दों पर गहन विधायी चर्चा नहीं होने के लिए किशिदा प्रशासन मुख्य रूप से जिम्मेदार है. सरकार को स्पष्टीकरण देना चाहिए और सुनिश्चित करना चाहिए कि आने वाले महीनों में संबंधित मुद्दों पर सावधानीपूर्वक चर्चा होगी. व्यापक और बहुस्तरीय पहल के लिए व्यापक चर्चा और सर्वसम्मति निर्माण को लगातार आगे बढ़ाया जाना चाहिए.

The Asahi Shimbun
Asia & Japan Watch

बोधि वृक्ष

ध्यान एक औषधि है

यदि आपके मन में किसी प्रकार का डर या घबराहट है, तो इसका सटीक समाधान है ध्यान. यह किसी भी दवा से बेहतर है. ध्यान के माध्यम से आप अपने मस्तिष्क को पूरी तरह शांत और स्थिर कर सकते हैं. यह आपके हृदय को आनंद से भरकर आपकी आत्मा को शांति प्रदान करता है. इससे आप दिनभर स्वयं को तरोताजा महसूस करते हैं. आपका जीवन एक नयी ऊर्जा से भर जाता है. ध्यान बहुत ही सरल विधा है, परंतु इसका लाभ तभी आपको प्राप्त होता है जब आप नियमित तौर पर इसके साथ जुड़े रहते हैं. यह आपको ईश्वर के साथ संपर्क स्थापित करने में सहायता करता है. आपके होने की प्रकृति को ही पूरी तरह बदल देता है. जब आप ध्यान में बैठेंगे तब आपको वह बात बिल्कुल मामूली लगेगी, जिसके चलते आप अक्सर चिंतित या परेशान रहते हैं. आप यह समझ जायेंगे कि ये सभी समस्याएं केवल मानसकि हैं, वास्तविकता में इनका कोई आधार नहीं है. ध्यान के माध्यम से आप अपने भीतर छुपी हुई खुशी को आसानी से तलाश पायेंगे. उस दिव्य शक्ति की ओर से मिल रहा सानिध्य आपको समझ आयेगा. आप ध्यान की तकनीकों को आसानी से जान पायेंगे. यदि आप इसे उचित तरीके से नहीं कर पा रहे हैं, तो इसमें चिंता की कोई बात नहीं. यदि आपको यह मुश्किल लगता है या फिर याद नहीं रहता, तो भी कोई परेशानी नहीं. आपको केवल ध्यान का अभ्यास करते रहना है. दिन के केवल पांच मिनट ध्यान को दीजिए और विश्वास कीजिए, आप स्वयं इसके चमत्कार को महसूस करने लगेंगे. इसके बाद ध्यान को अपने जीवन का पर्याय बनने दें. भले ही आप घर से दूर हों या जिस स्थान पर बैठे हों वहां ध्यान लगा पाना संभव न हो, ऐसे में कभी भी यह न सोचें कि आप ध्यान नहीं कर पायेंगे. जहां आप बैठे हों, वहां अपनी आंखें बंद कर केवल पांच मिनट के लिए ध्यान करें, अपनी सांसों पर नियंत्रण रखें. आपको सभी जीव-जंतुओं को, प्राणी जगत की हर शख्सियत को समान समझने का प्रयत्न करना चाहिए. आपको अपने जीवन को ही ध्यान की धारा बना लेनी चाहिए. **-स्वामी चिदानंद सरस्वती**

कुछ अलग

अमेरिका में भारत-पाकिस्तान

आलोक पुराणिक
व्यंग्यकार
puranika@gmail.com

अमेरिका में टी-20 क्रिकेट टूर्नामेंट चल रहा है. अमेरिका का हिसाब सही है, वह हर जगह घुस लेता है. क्रिकेट में अमेरिका की गति चाहे जो भी हो, पर वह वर्ल्ड लेवल के टूर्नामेंट में हिस्सा ले रहा है. नौ जून को भारत-पाक टी-20 मैच हुआ. भले ही इसमें भारत ने जीत दर्ज की, पर लाभ में तो पाकिस्तानी खिलाड़ी ही रहेंगे. पाकिस्तान सरकार ने कहा है कि अमेरिका जा रहे हो, तो वर्ल्ड बैंक से कुछ डॉलर मांग लाना. पाकिस्तान के जनरल, पाकिस्तान के वित्त मंत्री दुनियाभर में घूम-घूम भीख मांगते हैं, नहीं मिलती. खिलाड़ी जा रहे हैं, तो कुछ वो भी पकड़ लाएं डॉलर- यही संदेश पाकिस्तानी क्रिकेटरों को दिया गया है.

पाकिस्तानी खिलाड़ियों ने पूरी विनम्रता दिखाते हुए अमेरिका के साथ मैच जीतने से इनकार कर दिया. पाकिस्तानी क्रिकेटरों ने अमेरिका से हारकर ऑफ द रिकॉर्ड बताया कि जिनसे कर्ज मांगना हो, उनसे जीतना ठीक नहीं. पाकिस्तानी क्रिकेटर हार गये, कर्ज जीतने के लिए. पर मुद्दा केवल यह नहीं है. मुद्दा यह भी है कि पाकिस्तानी टीम जिस अमेरिकी टीम से हारी है, उसमें भारतीय खिलाड़ियों की भरमार है. यह बहुत टेंशन का मसला है पाकिस्तान के लिए. अमेरिका की शक्ल में भी इंडिया मारता है और इंडिया की शक्ल में तो इंडिया मारता ही है. पाकिस्तान क्रिकेट टीम को मांग करनी चाहिए कि अमेरिकी टीम में सिर्फ अमेरिकी खिलाड़ी ही खेलें. जब अमेरिका हराये, तो अमेरिकियों को हराना चाहिए. अमेरिकन टीम में इंडियन हरा जाएं, यह बात सही नहीं है. हार-जीत में मिलावट नहीं होनी चाहिए. अमेरिका की आफत यह है कि बिना मिलावट के उसका काम नहीं चल सकता. अमेरिका का मेडिकल सिस्टम ध्वस्त हो जाए, यदि भारतीय डॉक्टर निकल जाएं. उसकी शीर्ष तकनीकी कंपनियों का काम मुश्किल हो जाए, यदि भारतीय इंजीनियर वहां से निकल लें. अमेरिका का काम भारतीयों के बगैर ना चल रहा है. पर अमेरिका ये काम मुफ्त में तो ना कराता, पैसे देता है. यही तो असल मसला है, जिसके पास पैसा है, वह सब जीत सकता है.

आयरलैंड की टीम क्रिकेट की पुरानी टीम है, वह भी कनाडा की कम अनुभवी टीम से हार गयी. कनाडा जीत रहा है, अमेरिका जीत रहा है. खैर, टी-20 टूर्नामेंट अब ग्लोबल धूम मचा रहा है. भारत में आइपीएल टी-20 टूर्नामेंट होता है, अब अमेरिका में चल रहा है टी-20 टूर्नामेंट. पाकिस्तानी खिलाड़ियों को भारतीय आइपीएल टूर्नामेंट में नहीं खिलाया जाता है. वे किलसते हैं कि हमें ना खिलाते. आइपीएल में खेलकर पाकिस्तानी क्रिकेटर करोड़ों कमा सकते थे, अब ना कमा पा रहे हैं. पाकिस्तानी क्रिकेटर यह भी ऑफर कर सकते हैं कि खिला लो, हम हारने को तैयार हो जायेंगे.

आपके पत्र

सोशल मीडिया को लेकर रहें सतर्क

सोशल मीडिया पर जानकारी साझा करते समय सतर्कता जरूरी है. कुछ लोग निजी जानकारी इस पर साझा कर देते हैं, जैसे पूरा नाम, पता, मोबाइल नंबर और परिवार की तस्वीर. इससे सोशल मीडिया पर सक्रिय जालसाज को आपकी निजी जानकारी आसानी से मिल जाती है. इसका लाभ उठा कर आपको ठगी का शिकार बना सकते हैं. साइबर फ्रॉड आपकी तस्वीर व पते का लाभ उठा कर ऑनलाइन ठगी कर सकते हैं. इसलिए सोशल मीडिया पर निजी जानकारी को साझा करने से परहेज करना चाहिए.

बंधु मुन्ना, मरौना (सुपौल)

आतंकी हमले का देना होगा जवाब

जम्मू में वैष्णो देवी मंदिर के लिए तीर्थयात्रियों को ले जा रही बस पर आतंकियों का हमला कर दिया, जिसमें एक बच्चे समेत कई लोगों की जान चली गयी. यह हरकत कायराना है और जितनी निंदा की जाये वह कम है. इस हमले का माकूल जवाब सरकार को देना होगा. आतंकियों को सबक सिखाने के लिए कठोर से कठोर कार्रवाई करनी होगी. साथ ही जम्मू-कश्मीर में आतंकियों को पनाह देनेवालों की पहचान कर उचित कार्रवाई करने की आवश्यकता है. सुरक्षा एजेंसियों को भी अपना काम बेहतर तरीके से करना होगा.

मनीष सुमन, फुलकाहा (अररिया)

पोस्ट करें : प्रभात खबर, प्लॉट संख्या डी-9-10, पाटलिपुत्र इंडस्ट्रियल एरिया, पटना (बिहार) - 800013, ■ **मेल करें :** patna @prabhatkhabar .in पर ■ ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो . लिपि रोमन भी हो सकती है .

https://t.me/AllNewsPaperPaid

हिन्दुस्तान
1936
सत्य • सार्थक • सदैव

अब अदालत से उम्मीद

मेडिकल कॉलेजों के विभिन्न पाठ्यक्रमों में दाखिले से संबंधित नीट-यूजी 2024 के परीक्षा का मुद्दा अब सुप्रीम कोर्ट पहुंच गया है और अदालत ने इस परीक्षा की आयोजक संस्था 'एनटीए' व केंद्र से जवाब-तलब करते हुए जो टिप्पणी की है, उससे इस मामले की गंभीरता समझी जा सकती है। आला अदालत ने दोटूक शब्दों में कहा है कि 'परीक्षा की पवित्रता प्रभावित हुई है और हमें इसका जवाब चाहिए।' दरअसल, इस प्रवेश-परीक्षा के दिन ही इसके प्रश्न-पत्र के लीक होने के आरोप तेजी से उछले थे, पर तब एनटीए ने तमाम आरोपों को खारिज करते हुए परीक्षा को दोषमुक्त बताया था। मगर जिस तरह से समय से पहले परिणाम घोषित करने और 'ग्रेस मार्क्स' देने का विवाद सामने आया है, उसने इस परीक्षा की शुचिता पर गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। जिस परीक्षा की तैयारी में देश के 24 लाख से अधिक नौजवान रात-दिन एक कर रहे थे, जिसमें उनके अभिभावकों का काफी श्रम और संसाधन लगा हुआ था, उसका आयोजन तो इतना पारदर्शी व दोषरहित होना चाहिए था कि सभी हितधारक उसकी शपथ उठाते। मगर दुर्योग से वे अपने को छला हुआ महसूस कर रहे हैं और अब आखिरी उम्मीद के तहत अदालत की शरण में हैं।

सुप्रीम कोर्ट ने परीक्षा परिणाम के बाद की दाखिला संबंधी प्रक्रिया पर रोक न लगाने का फैसला किया है, तो इसके पीछे यही दृष्टिकोण है कि चयनित विद्यार्थियों के हितों की अनदेखी न हो। इसमें तो कोई दोराय नहीं कि किसी भी कदाचार के लाभार्थी बहुत थोड़े से लोग होते हैं, मगर उससे अहित व्यापक समूह और समाज का होता है। सवाल सिर्फ नीट-यूजी 2024 की परीक्षा का ही नहीं है, एक के बाद दूसरी परीक्षाओं के मामले जिस तरह अदालत में पहुंच रहे हैं, उससे अभ्यर्थियों में निराशा का भाव गहरा सकता है। अभी कितने दिन हुए हैं, जब कलकत्ता हाईकोर्ट ने पश्चिम बंगाल में 23,000 से अधिक शिक्षकों व सहायकों की नियुक्ति को रद्द कर दिया था? करीब आठ वर्षों की सेवा के बाद अचानक वे सभी सड़क पर आ गए और सुप्रीम कोर्ट से फौरी राहत के बाद अंतिम निर्णय की बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे हैं। जिस देश में बेरोजगारी की समस्या गंभीर रूप धारण कर चुकी हो, वहां ऐसी अनिश्चितता के कितने घातक परिणाम हो सकते हैं, इस पर सरकारों और सिस्टम को गंभीरता से गौर करने की जरूरत है।

सवाल नीट-यूजी परीक्षा का ही नहीं है, एक के बाद दूसरी परीक्षाओं के मामले जिस तरह अदालत में पहुंच रहे हैं, उससे अभ्यर्थियों में निराशा गहरा सकती है।

राज्यों की प्रवेश परीक्षाओं में धांधली कोई नई परिघटना नहीं है, लेकिन केंद्रीय स्तर की परीक्षाओं में ऐसी शिकायतें न के बराबर रही हैं। यूपीएससी की परीक्षाएं इसकी सबसे बड़ी नजीर हैं। केंद्र को यह सुनिश्चित करने की दरकार है कि नीट-यूजी परीक्षा को लेकर इस बार जैसे विवाद पैदा हुए हैं, उनकी पुनरावृत्ति न हो। तब तो और, जब तमिलनाडु जैसे राज्य नीट परीक्षा से मुक्ति के लिए विधानसभा से विधेयक पारित कर चुके हों। इस तरह के विवाद केंद्रीकृत प्रवेश परीक्षा के सरकार के मनसूबे को पलीता लगा सकते हैं। इन सबसे बढ़कर ये परीक्षार्थियों और उनके अभिभावकों के लिए मानसिक यंत्रणा की तरह हैं। एनटीए और सरकार को अपने तईं इस पर त्वरित कार्रवाई करनी चाहिए थी। आम चुनाव के कारण सरकार इस स्थिति में नहीं थी, मगर तंत्र के आगे तो ऐसी कोई बाध्यता नहीं थी! इसलिए सुनिश्चित किया जाए कि नीट अभ्यर्थी अपनी परीक्षा व्यवस्था से संतुष्ट रहें और उन्हें परीक्षा के बाद अदालतों की खाक न छाननी पड़े!

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 12 जून, 1949

संयुक्त राष्ट्र असफल क्यों?

संयुक्त राष्ट्र में भारतीय प्रतिनिधिमण्डल के नेता श्री सी. सीतलवाड ने विगत बृहस्पतिवार को दिल्ली स्थित अन्तर्राष्ट्रीय मामलों की भारतीय कौंसिल में भाषण करते हुए संयुक्त राष्ट्र की कार्य-प्रणाली पर घोर असंतोष प्रकट किया और कहा कि यहां इस बात की लेशमात्र भी चिंता नहीं की जाती कि कौन-सा मामला कितना न्यायसंगत है; वहां की कठपुतली ठीक उसी तरह नाचती है जिस तरह तीन महान् देश, रूस, अमरीका और ब्रिटेन उसे नचाना चाहते हैं। ऐसे ही उद्गार प्रतिनिधिमण्डल के सदस्य श्री बी. शिवाराव और श्रीमती रेणुका रे ने भी प्रकट किये। उक्त तीनों व्यक्ति हाल ही में लेक सक्सेस से लौटे हैं।

द्वितीय महासमर के समाप्त होने पर संयुक्त राष्ट्र की स्थापना उतनी ही धूमधाम से हुई थी, जितनी कि प्रथम महासमर की समाप्ति पर राष्ट्र संघ की। किंतु जो लोग राष्ट्र संघ की नौका को पारस्परिक स्वार्थ-संघर्ष की चट्टान से टकराकर चकनाचूर होते देख चुके थे, वे संयुक्त राष्ट्र के प्रति भी अधिक आशावादी नहीं थे। आज समय ने सिद्ध कर दिया है कि उनकी आशंका निर्मूल नहीं थी और इस समय संयुक्त राष्ट्र- नाममात्र के अंतर के साथ- आत्मघात के मार्ग पर उतने ही वेग के साथ बढ़ रहा है, जितने वेग से राष्ट्र संघ बढ़ा था।

संयुक्त राष्ट्र की इस अधोगति के कारण गुप्त अथवा गूढ़ नहीं हैं। जैसा कि श्री सीतलवाड ने बताया..., संयुक्त राष्ट्र इस समय गुटबंदियों का क्रीड़ाक्षेत्र बना हुआ है। वहां पांच पृथक्-पृथक् गुट हैं- रूसी गुट, पश्चिमी राष्ट्रों का गुट, लैटिन अमरीकी गुट, अरब और दक्षिण-पूर्वी एशियाई गुट। ये पांचों वास्तव में दो प्रधान गुटों में विभाजित किये जा सकते हैं। एक ओर रूस और उसके पिछलग्गुओं का गुट और दूसरी ओर, ब्रिटेन, अमरीका तथा उनके जी-हजूरों का गुट। सच पूछिये, तो संघर्ष इन्हीं दो समूहों में है, शेष तीन तो आंग्ल-अमरीकी थैली के ही चट्टे-बट्टे हैं। इनमें अकेला भारत ऐसा देश है, जो अपने को दलगत राजनीति से ऊपर उठाये रखने का प्रयत्न करता है। किंतु उसकी दशा धारासभा के उस स्वतंत्र दलीय सदस्य की भांति है जो स्वार्थ-संघर्ष से उद्वेलित पारावार में अपनी छोटी-सी नैया को आप खेने और डूबने से बचाने की चेष्टा करता रहता है। स्पष्ट है कि जिस संस्था में स्वार्थ का इतना ताण्डव हो रहा हो, वहां न्याय और विवेक को स्थान नहीं मिल सकता।

इस चुनाव में आधी आबादी का हासिल

लोकसभा में इस बार महिलाओं का कुछ कम प्रतिनिधित्व होगा, मगर अब संभ्रांत घर की महिलाएं ही नहीं, दबी-कुचली जातियों की औरतें भी लड़कर इसमें आने को आतुर हैं।

यहां स्कैन करें

मनीषा प्रियम | राजनीतिक विश्लेषक

सत्तरहवीं लोकसभा का वह आखिरी सत्र था और विशेष भी, क्योंकि उसमें 'नारी शक्ति वंदन अधिनियम' को पारित किया गया। इसके द्वारा यह सुनिश्चित किया गया कि आने वाले वर्षों में (साल 2029 के आम चुनाव से संभवतः) लोकसभा में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित की जाएंगी। आरक्षण की यह सीमा 33 फीसदी तय की गई और इसे देश भर की विधानसभाओं पर भी लागू किया गया है। स्वाभाविक ही यह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्व वाली राजग सरकार की महिलाओं के प्रति प्रतिबद्धता का संकेत था।

यूं तो महिला आरक्षण की चर्चा बतौर प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने सन् 1989 में ही उठाई थी। तब केंद्रीय मंत्री मार्गरेट अल्वा के नेतृत्व में एक कमेटी का गठन किया था, जिसने ग्राम पंचायतों और स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए आरक्षण प्रस्तावित किया। हालांकि, उनका वह विधेयक लोकसभा में तो पास हो गया, मगर राज्यसभा में गिर गया। उस वक्त खासकर सामाजिक न्याय में विश्वास रखने वाले नेताओं ने ही इसका विरोध किया था। तब शरद यादव ने कुछ ऐसी टिप्पणी की थी, जिससे प्रतीत हुआ कि 'परकटी' महिलाएं वास्तव में जाति आधारित आरक्षण को महिला आरक्षण के परोक्ष प्रयोग से कमजोर बना देंगी। हालांकि बाद में, पीवी नरसिंह राव वाली कांग्रेस सरकार ने इसे पास किया। बावजूद इसके संसद में महिला आरक्षण की फाइल धूल-धूसरित ही रही। कहा यह भी जाता रहा कि बीजद या तृणमूल कांग्रेस जैसी पार्टियां बगैर आरक्षण के भी औरतों को खुले दिल से टिकट देती हैं, जिसका अर्थ है कि बगैर आरक्षण के उन्हें संसद में लाया जा सकता है।

इसी पृष्ठभूमि में 18वीं लोकसभा के लिए चुनाव हुए। इसमें महिलाओं के बारे में दो बातें प्रमुखता से पूछी जा रही हैं। पहली, किस पार्टी ने कितने टिकट आधी आबादी को दिए और दूसरी, कहां से व कितनी औरतें चुनाव जीतने में सफल हुईं? हालांकि, चुनावी चर्चा में यह मुद्दा भी गरम रहा कि क्या महिलाएं सिर्फ एक

वोटबैंक हैं और राष्ट्रीय चुनाव में क्या वे एकमुश्त नरेंद्र मोदी को अपना वोट देंगी? ऐसा इसलिए, क्योंकि अयोध्या में रामलला की मूर्ति-स्थापना के बाद माना जा रहा था कि महिलाएं इसके लिए प्रधानमंत्री को धन्यवाद देंगी और अपना वोट भाजपा को देंगी।

मगर चुनाव-बाद की तस्वीर कुछ अलग दिख रही है। बेशक 'मोदी 3.0' एक मिली-जुली सरकार है, फिर भी रविवार को जब मंत्रिमंडल की शपथ दिलाई गई, तो 72 माननीयों में केवल चार महिलाओं को यह सौभाग्य मिला। वैसे, लोकसभा में भी इस बार पिछली बार की तुलना में महिलाओं का कम प्रतिनिधित्व होगा। एडीआर के मुताबिक, 18वीं लोकसभा के लिए 74 महिलाओं का निर्वाचन हुआ है, जो कुल सांसदों का 13.6 प्रतिशत है। 17वीं लोकसभा में यह आंकड़ा 14 प्रतिशत था और 77 महिलाएं निचले सदन में आई थीं। हालांकि, 2014 के आम चुनाव में 542 में से 62 (11 प्रतिशत) महिला सांसद थीं, जबकि 2009 में 11 फीसदी (543 में से 59 सांसद) हिस्सेदारी आधी आबादी को हासिल हुई थी।

यदि विजेता उम्मीदवारों का लिंग के आधार पर विश्लेषण करें, तो इस बार बड़ी पार्टियों में तृणमूल कांग्रेस सभी दलों पर भारी साबित होती दिख रही है। उसके 29 सांसदों में से 11 महिलाएं (38 प्रतिशत) हैं। इनमें कृष्णानगर से जीतने वाली महुआ मोइत्रा भी शामिल हैं, जिनको कुछ ही महीने पहले लोकसभा से निष्कासित कर दिया गया था। तृणमूल कांग्रेस चूंकि 'इंडिया' ब्लॉक की प्रमुख सहयोगी है, इसलिए मुमकिन है कि विपक्ष में महिलाओं की आवाज बुलंद होती रहेगी। वैसे, कांग्रेस से जीतने वाली महिला उम्मीदवारों का प्रतिशत 13 है, जबकि सपा से 14 प्रतिशत। रही बात भाजपा की, तो उसके कुल सांसदों में विजेता महिलाओं की हिस्सेदारी 13 फीसदी है।

यहां कुछ सांसदों का नाम उल्लेखनीय है, विशेषकर राजस्थान की भरतपुर सीट से निर्वाचित संजना जाटव की, जिनकी जीत बताती है कि अब संभ्रांत घर की महिलाएं ही नहीं, दबी-कुचली जातियों की औरतें भी लड़कर लोकसभा में आने को आतुर हैं। एक लंबे अरसे तक औरतों की यह कहकर आलोचना की जाती रही कि किन्हीं कारणों से यदि पति चुनाव नहीं लड़ पाता, तो उसके रिक्त स्थान को भरने के लिए पत्नी मैदान में उतारी जाती है। मगर अब युवतियां खुद अपनी लड़ाई लड़कर वर्ग-जाति का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। इसी तरह, कर्नाटक से प्रियंका जारकीहोली, बिहार से शांभवी चौधरी, उत्तर प्रदेश से इकरा हसन और प्रिया सरोज की चर्चा स्वाभाविक है, जो युवा महिला सांसदों में शुमार हैं। यहां सोफिया फिरदौस का उल्लेख भी आवश्यक है, जो वैसे तो ओडिशा की पहली मुस्लिम महिला विधायक बनी हैं, लेकिन आईआईएम की पढ़ाई करने के बाद उनका इस तरह राजनीति में उतरना बदलते समाज का एक महत्वपूर्ण संकेत है।

सवाल है कि आने वाले दिनों में संसद में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कैसे बढ़ाया जाए? इसके लिए तो सबसे पहले सभी दलों को औरतों को अधिक टिकट देना होगा, साथ ही महिलाओं को खुद भी सदन में पक्ष व प्रतिपक्ष की मुखर आवाज बनकर उभरना होगा। जरूरत इस बात की है कि महिलाएं राजनीतिक सरोकार से ऊपर उठकर जनहित के मुद्दों पर एकजुटता दिखाएं। जहां कहीं भी महिला अधिकारों का हनन हो, वहां उनको दलीय राजनीति से ऊपर उठकर उस महिला की प्रतिष्ठा का समर्थन करना चाहिए। मणिपुर में पिछले दिनों औरतों के अधिकारों का जिस तरह हनन किया गया, उसका एकजुट होकर विरोध जरूरी था, पर ऐसा हो नहीं सका। लिहाजा, महिला सांसदों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कैसे आधी आबादी की प्रतिष्ठा बनी रहे और वह भारतीय लोकतंत्र में समान नागरिक बनकर अपनी लोकतांत्रिक भागीदारी निभा सके।

चूंकि 2029 से महिला आरक्षण के तहत चुनाव संभावित हैं, इसलिए जो संसदीय क्षेत्र औरतों के लिए चिह्नित होंगे, उसमें यदि पार्टियां केवल मजबूत नेताओं की पत्नी-बेटी अथवा बहू को टिकट देंगी, तो स्वायत्तता से महिलाओं का प्रतिनिधित्व नहीं हो सकेगा। लिहाजा, राजनीतिक दलों पर यह दबाव भी बनाना चाहिए कि वे उन महिलाओं पर भरोसा करें, जो अपने बूते लड़ने में सक्षम हैं। वैसे, ईमानदारी से टिकट वितरण ही काफी नहीं है। संसदीय प्रणाली का प्रशिक्षण भी नवनिर्वाचित महिला सांसदों को देना होगा, तभी वे संसद में अपनी बात दम-खम के साथ रख सकेंगी।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

शहबाज की बीजिंग यात्रा में दिखी दोनों देशों की मजबूरी

यहां स्कैन करें

दिनकर पी श्रीवास्तव | पूर्व राजदूत

वैसे तो हरेक पाकिस्तानी प्रधानमंत्री के लिए चीन-यात्रा उसकी परंपरा का हिस्सा है, मगर शहबाज शरीफ की 8 जून को संपन्न हुई पांच दिवसीय चीन-यात्रा समय के लिहाज से काफी अहम है। शहबाज उस वक्त बीजिंग गए, जब देश में बजट पेश करने की तैयारी हो रही थी। अमूमन, ऐसे समय में प्रधानमंत्री की देश में मौजूदगी जरूरी होती है। मगर शहबाज शरीफ की यात्रा के लिए बजट को टाल दिया गया। यह वाकया पाकिस्तान की दयनीय आर्थिक स्थिति को दर्शाता है। ऐसे में, सबसे बड़े देनदार देश की यात्रा जरूरी थी। बदले में चीन ने भी ताईवान, शिनजियांग, शिझांग, हांगकांग और दक्षिण चीन सागर पर पाकिस्तान से समर्थन वसूल किया!

प्रधानमंत्री शहबाज शरीफ के प्रतिनिधिमंडल में उनके मंत्रिमंडल के लगभग सभी वरिष्ठ मंत्री शामिल थे। दिलचस्प यह है कि सेना प्रमुख जनरल आसिफ मुनीर भी इसमें शामिल थे। वैसे, मुनीर का शामिल होना मुनासिब था, क्योंकि वह 'विशेष निवेश सुविधा परिषद्' (एसआईएफसी) के सदस्य हैं। इस संस्था की स्थापना पाकिस्तान में विदेशी निवेश को आकर्षित करने के लिए की गई थी।

अपनी बिगड़ती आर्थिक स्थिति से निपटने के लिए चीनी मदद पाकिस्तान की प्राथमिकता है। वह इस वक्त अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) से तीन वर्ष में छह अरब डॉलर की ऋण सुविधा पर बातचीत कर रहा है। जाहिर है, आईएमएफ यह सुनिश्चित करना चाहेगा कि उसके ऋण का उपयोग केवल चीनी कर्ज चुकाने के लिए न किया जाए। ऐसे में, चीनी ऋण भुगतान के 'रोलओवर' की जरूरत होगी और वह भी न केवल चालू वित्त-वर्ष के लिए, बल्कि कर्ज की नई सुविधा की अवधि के लिए भी। शहबाज सरकार के अस्तित्व के लिए दीर्घकालिक पुनर्भुगतान कार्यक्रम महत्वपूर्ण हैं। सवाल है, चीन पाकिस्तान को बचाने के लिए किस हद तक जाएगा?

चीन-पाकिस्तान साझा बयान में आधी सदी पुराने संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव को याद करने की जरूरत आखिर क्यों पड़ी?

ताईवान पर चीनी रुख का समर्थन पाकिस्तान के पिछले सभी बयानों की एक विशेषता रही है। मगर इस वर्ष पिछली प्रतिबद्धताओं से भी आगे बढ़कर कहा-लिखा गया। क्या यह केवल पाकिस्तान की चीन पर अत्यधिक निर्भरता को दर्शाता है या यह चीन की भू-राजनीतिक मजबूरियों को भी दर्शाता है? पिछले साल से चीन ने ताईवान से जुड़े जलडमरूमध्य में तनाव बढ़ा दिया है। ताईवान में लाई चिंग-ते के राष्ट्रपति चुने जाने के बाद उसने उस पर सैन्य दबाव बढ़ा दिया है। जाहिर है, वह जो एकतरफा बदलाव लाना चाहता है, उसके लिए उसे कूटनीतिक समर्थन की जरूरत है। साझा बयान में कहा गया है, 'दोनों पक्षों ने इस बात पर जोर दिया कि संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्ताव 2758 के अधिकार पर कोई विवाद या चुनौती नहीं है।' यह प्रस्ताव 1971 में स्वीकार किया गया था, जब कम्युनिस्ट चीन ने ताईवान को संयुक्त राष्ट्र के सदस्य के रूप में प्रतिस्थापित किया था। तथ्य यह है कि अपने अस्तित्व से जुड़े आर्थिक संकट का सामना कर रहे देश पाकिस्तान के साथ संयुक्त बयान में चीन को आधी सदी बाद इसे याद करने की जरूरत पड़ी। साफ है, इससे चीन की धौंसपट्टी से उत्पन्न प्रतिरोध के संकेत मिलते हैं।

संयुक्त बयान में कहा गया है कि पाकिस्तान 'राष्ट्रीय एकीकरण के लिए चीन की सरकार के हर प्रयास का पूरी मजबूती से समर्थन करता है और ताईवान की स्वतंत्रता के किसी भी रूप का विरोध करता है।' ताईवान पर चीनी रुख का पाकिस्तान द्वारा यह उत्साही समर्थन अमेरिका से उसके रिश्ते को जटिल बना सकता है। आईएमएफ से कर्ज की मंजूरी के लिए उसे अमेरिकी समर्थन की जरूरत है।

शहबाज शरीफ की इस यात्रा से पहले पाकिस्तानी मीडिया ने अपनी खबरों से चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे के दूसरे चरण की शुरुआत को लेकर काफी उम्मीदें बढ़ा दी थीं। मगर इस कार्यक्रम के तहत पाकिस्तान में 46 अरब डॉलर के चीनी निवेश के शुरुआती दावों के विपरीत यह 25 अरब डॉलर ही ला सका। दोनों देशों का संयुक्त वक्तव्य नई-नई योजनाओं की घोषणा करने के बजाय मौजूदा कार्यक्रम को 'अपग्रेड' करने तक सीमित है। इस बीच, पाकिस्तान को 2025-26 के लिए संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के गैर-स्थायी सदस्य के तौर पर दो साल के कार्यकाल के लिए चुना गया है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

जागरूकता ही जीवंतता

आखिर जागरूकता है क्या? अलग-अलग लोगों के लिए इसके मायने भी अलग हैं। जब हम जागरूकता कहते हैं, तो इसे मन की सतर्कता समझने की गलती न करें। दिमाग की सतर्कता दुनिया में खुद को बरकरार रखने की आपकी क्षमता को बढ़ाएगी। जागरूकता कोई ऐसी चीज नहीं है, जो आप करते हैं। एक अवस्था में होने और कुछ करने के बीच फर्क होता है। यह कुछ और नहीं, बल्कि आप ही हैं।

नींद, अनिद्रा, मृत्यु, ये जागरूकता के बस अलग-अलग स्तर हैं। मान लीजिए, आप ऊंघ रहे हैं और किसी ने आपको कोहनी मार दी। आप अचानक इस दुनिया में लौट आते हैं। यह छोटी बात नहीं है। आपने एक पल में पूरे अस्तित्व को फिर से रच लिया। वह दुनिया, जो आपके अनुभव से गायब थी, अचानक प्रकट हो जाती है। आप यह कैसे जानते हैं कि पूरा अस्तित्व मौजूद है या नहीं? सिर्फ अपने अनुभव से; उसका कोई दूसरा सुबूत नहीं है। जागरूकता वह चीज है, जो इस अस्तित्व को पैदा कर सकती है या उसे मिटा सकती है। अगर यह नहीं है, तो पूरा अस्तित्व गायब हो जाता है। अपनी जागरूकता को आप अलग-अलग स्तर तक ले जा सकते हैं। जैसे-जैसे यह ऊपर, और ऊपर जाती है, अस्तित्व के बिल्कुल नए आयाम आपके अनुभव में खुलते जाते हैं। ऐसी दुनिया, जिसके बारे में किसी ने सपने में भी नहीं सोचा होगा, आपके लिए एक जीती-जागती वास्तविकता बन जाती है।

मान लीजिए, आपको किसी सोते हुए इंसान से उसे बिना जगाए यह पूछना होता, 'क्या दुनिया का अस्तित्व है?' उसका जवाब 'नहीं' होगा। जहां तक उसका सवाल है, उसके लिए दुनिया का अस्तित्व नहीं है, क्योंकि वह जागरूक नहीं है। लेकिन नींद में भी आप पूरी तरह बेखबर नहीं होते। सोए हुए इंसान और मरे हुए इंसान के बीच फर्क जागरूकता का होता है। इसी तरह, जगे हुए आदमी और प्रबुद्ध आदमी के बीच में भी एक फर्क होता है। प्रबुद्ध आदमी भी सोता है, लेकिन उसने इतनी जागरूकता हासिल कर ली होती है कि उसका कुछ हिस्सा नहीं सोता। ऐसा इसलिए है, क्योंकि उसने अपनी जागरूकता को अलग स्तर तक पहुंचा दिया है!

जगे हुए आदमी और प्रबुद्ध आदमी के बीच में एक फर्क होता है। प्रबुद्ध आदमी भी सोता है, लेकिन उसने इतनी जागरूकता हासिल कर ली होती है कि उसका कुछ हिस्सा नहीं सोता।

सबको साथ शामिल करने की प्रक्रिया है जागरूकता। इस पूरे अस्तित्व को गले लगाने का एक तरीका। आप इसे कर नहीं सकते, पर ऐसा सही माहौल बना सकते हैं, जिससे यह खुद-ब-खुद हो जाए। जागरूक बनने की कोशिश मत कीजिए। यह कारगर नहीं होगा। अगर आप अपने शरीर, मन और ऊर्जा में सही ढंग से तालमेल रखते हैं और उसे विकसित करते हैं, तो जागरूकता अपने आप खिलेगी। आप जैसे अभी हैं, उसकी तुलना में कहीं ज्यादा जीवंत हो जाएंगे।

सद्गुरु जग्गी वासुदेव

जो बाइडन | अमेरिकी राष्ट्रपति

मैं कॉरपोरेट लालच से लड़ रहा हूं, किराये को और अधिक किफायती बनाने के लिए संघर्ष कर रहा हूं। मैं स्वास्थ्य देखभाल व दवाओं की लागत कम करने के लिए संघर्ष कर रहा हूं और मैं लड़ना कभी बंद नहीं करूंगा।

अब व्यापम बन गई नीट परीक्षा

अन्य परीक्षाओं के साथ अब नीट की परीक्षा भी मध्य प्रदेश की व्यापम जैसी स्थिति में आ गई। पिछले कई वर्षों से ये साजिशें भारत के उन नौनिहालों के भविष्य के विरुद्ध की जा रही हैं, जिनकी सक्रियता से भारत का राजकाज ही नहीं, असंख्य परिवारों के बरसों से देखे और पाले जा रहे सपनों को पूरा होना है। हमारी सरकारें आखिर इन होनहार बच्चों के विश्वास पर खरी उतरने को तैयार क्यों नहीं हैं? क्या वे कुछ ऐसे समूहों को आधिकारिक लाभार्थी मान चुकी हैं, जो उनकी अपनी नागरिक आबादी के अंतर्गत 'रजिस्टर्ड' हैं?

विजय बहादुर सिंह, साहित्यकार

माफिया का खेल

नीट शायद भारत की सबसे विवादित परीक्षा है। जब 2018 में मैंने यह परीक्षा दी थी, तब मेरे 533/720 अंक थे और रैंक थी 11,254। उसके बाद से जो कटऑफ बढ़ना शुरू हुआ, वह कभी कम नहीं हुआ। 2022 में जब छोटे भाई ने यह परीक्षा दी, तब उसके 604/720 अंक पर 19,900 रैंक थी। मुझे लगा शायद बच्चे ज्यादा पढ़ते हैं या पेपर बहुत आसान हो गया हो। इस बार जब नीट का रिजल्ट आया, तो यकीन ही नहीं हुआ कि ऐसा कटऑफ भी हो सकता है। कई बच्चों के तो शत-प्रतिशत अंक आए हैं, यानी 720 में 720। कटऑफ बढ़ने के कई कारण हैं। जैसे, हर सरकारी कॉलेज में तीन-चार सॉल्वर गैंग होते हैं, जो कमजोर परीक्षार्थियों की जगह बैठकर परीक्षा देते हैं। बदले में उन्हें सात से 20 लाख तक की रकम मिलती है। इसी तरह, कुछ परीक्षा माफिया हर साल पेपर लीक करते हैं, फिर चाहे 2015 का पेपर लीक हो या 2024 का। खबर तो यह भी है कि कई छात्रों को एक दिन पहले पेपर रटवाया जाता है। इसमें ऐसे छात्र भी होते हैं, जो नीट में तो सफलता के झंडे गाड़ते हैं, लेकिन कॉलेज की परीक्षा पास करने में नाकाम रहते हैं। इस बार भी ऐसे कुछ छात्रों की जानकारी मीडिया दे रहा है, जिन्होंने नीट परीक्षा में तो अच्छी रैंक हासिल की है, लेकिन कॉलेज की परीक्षा में औंधे मुंह गिर गए हैं। इन सब पर लगाम तो प्रशासन या संबंधित विभाग ही लगाएगा, लेकिन कुछ अन्य बातें हैं, जो हमें जान लेनी चाहिए। जैसे सिर्फ डॉक्टर बनना ही जीवन का मकसद न बनाएं। इतना ही नहीं, नीट रूपी दलदल में इतना भी न धंस जाएं कि बाहर निकलने की गुंजाइश न बचे। जीवन इस एक परीक्षा से कहीं बड़ा है, इसलिए यह परीक्षा यदि आप पास करते हैं, तो अच्छा है, वरना इंतजार न करें, कुछ अलग सोचें।

तन्मय कुंज, चिकित्सक

अनुलोम-विलोम
नीट परीक्षा

इसे रद्द करना सही नहीं होगा

नीट परीक्षा के परिणाम पर कुछ थोड़े से अभिभावक और परीक्षार्थी अंगुली उठा रहे हैं और परीक्षा रद्द करने की मांग कर रहे हैं। क्या ऐसा करना उन परीक्षार्थियों के साथ अन्याय नहीं होगा, जिन्होंने अथक परिश्रम के बाद मेडिकल परीक्षा में सफलता हासिल की है? नीट, जेईई या अन्य कोई भी प्रतियोगी परीक्षा हो, परीक्षार्थियों को हर परिणाम के लिए तैयार रहना चाहिए। अभिभावकों को भी अपने बच्चों को सफलता और असफलता, दोनों स्थितियों के लिए मानसिक रूप से सक्षम बनाना चाहिए। अगर वे दिमागी तौर पर तैयार रहेंगे, तो किसी भी अप्रिय हालात से जूझ सकेंगे। हमें समझना चाहिए कि कोई भी प्रतियोगी परीक्षा यूं ही आयोजित नहीं कर दी जाती। इसमें लंबी व्यवस्था काम करती है। ऐसे में, उन पर सवाल उठा देना सही नहीं जान पड़ता। आज लोग अपने बच्चों को दौड़ में खड़ा करके छोड़ देते हैं, जबकि उन्हें विफलता का घूंट पीना भी सिखाना चाहिए।

शैलबाला कुमारी, गृहिणी

ताकि धोखा न हो

इस बार की अखिल भारतीय मेडिकल परीक्षा, यानी नीट में कुछ विद्यार्थियों द्वारा शत-प्रतिशत अंक लाने के बाद विवाद सामने आ गया है और गड़बड़ी की आशंका जताई जा रही है। बेशक इसकी निष्पक्ष और उचित जांच होनी चाहिए, लेकिन यह भी हो सकता है कि बच्चों ने अपनी मेहनत के बल पर शानदार अंक प्राप्त किए हों। ऐसे में, नीट परीक्षा के परिणामों को रद्द करना वास्तव में मेहनतकश परीक्षार्थियों के भविष्य से खेलने जैसा होगा। इतना ही नहीं, परीक्षा रद्द होने के बाद क्या स्थिति बनती है, यह बात भी किसी से छिपी नहीं है। कुछ समय पहले उत्तर प्रदेश में कांस्टेबल भर्ती परीक्षा इसलिए रद्द करनी पड़ी थी, क्योंकि उसके प्रश्न-पत्र लीक हो गए थे। तब खबर आई थी कि इस परीक्षा में करीब 45 लाख से अधिक नौजवानों ने अपने सुनहरे भविष्य के निर्माण के लिए हिस्सा लिया था। इसी तरह, हिमाचल सरकार ने भी कुछ समय पहले प्रदेश के कर्मचारी चयन आयोग को भंग कर दिया था, क्योंकि वहां गड़बड़ी की आशंका बढ़ गई थी। इन सबसे नुकसान नौजवानों का ही होता है, क्योंकि दिन-रात मेहनत करके परीक्षा की तैयारी वही कर रहे होते हैं। कभी पेपर लीक करके, तो कभी अन्य तरह से जो भ्रष्टाचार किया जाता है, उसका तोड़ निकालना जरूरी है। इसका उपाय यह नहीं है कि परीक्षा रद्द करके उन मेहनतकश छात्रों के भविष्य से खिलवाड़ किया जाए, जो दिन-रात तैयारी में लगे रहते हैं।

राजेश कुमार चौहान, टिप्पणीकार

https://t.me/AllNewsPaperPaid

दैनिक जागरण

प्रत्येक परिवर्तन नए अवसरों की राह खोलता है

काम पर सरकार

प्रधानमंत्री और उनके सहयोगियों के रूप में केंद्रीय मंत्रियों के शपथ ग्रहण के बाद जिस तरह बिना किसी देरी के उनके विभागों का बंटवारा हो गया और इस क्रम में कई प्रमुख मंत्रियों को उनके पुराने विभाग मिल गए, उससे यदि कुछ स्पष्ट हो रहा है तो यही कि भले ही नई सरकार गठबंधन सरकार हो, लेकिन उसमें प्रधानमंत्री मोदी की पूरी छाप है। विभागों के बंटवारे से यह भी साफ हुआ कि उन चर्चाओं में कोई तत्व नहीं था कि भाजपा को सहयोगी दलों के दबाव का सामना करना पड़ेगा। इसका अर्थ है कि गठबंधन सरकार होते हुए भी मोदी के नेतृत्व वाली नई सरकार अतीत की उन मिली-जुली सरकारों से अलग होगी, जिन्हें सौदेबाजी की राजनीति का न केवल सामना करना पड़ता था, बल्कि अपने एजेंडे को लागू करने के मामले में समझौते भी करने पड़ते थे। दबाव और सौदेबाजी की राजनीति गठबंधन सरकारों का एक नकारात्मक पक्ष है। इससे बेहतर और कुछ नहीं कि मोदी सरकार गठबंधन राजनीति के इस नकारात्मक पहलू से मुक्त रहेगी। शासन के बेहतर तरीके से संचालन और देश की अपेक्षाओं को पूरा करने की दृष्टि से यही उचित है कि गठबंधन सरकार सहयोगी दलों के अनुचित दबाव से मुक्त रहे। यह केवल गठबंधन सरकार का नेतृत्व करने वाले दल के ही हित में नहीं होता, बल्कि सहयोगी दलों के भी हित में होता है, क्योंकि वे राष्ट्र निर्माण में सहभागी के रूप में देखे जाते हैं और क्षेत्रीय दल होते हुए भी देश भर में उनकी विश्वसनीयता बढ़ती है।

अधिकांश प्रमुख केंद्रीय मंत्रियों को उनके पुराने मंत्रालय मिलने का मतलब है कि प्रधानमंत्री मोदी सौ दिन के अपने उस एजेंडे को कहीं अधिक आसानी से पूरा करने में समर्थ होंगे, जिस पर उन्होंने चुनाव परिणाम आने के पहले ही विचार-विमर्श करना शुरू कर दिया था और यह कहा था कि उनकी सरकार तीसरे कार्यकाल में पहले की तरह ही काम करती रहेगी। यह अच्छा है कि केंद्रीय मंत्रियों ने अपना कार्यभार संभालते ही अपनी प्राथमिकताओं को रेखांकित करना प्रारंभ कर दिया है। चूंकि वे इससे भली तरह अवगत हैं कि देश की जनता को उनसे क्या अपेक्षाएं हैं, इसलिए यही आशा की जाती है कि नई सरकार लोगों की उम्मीदों को पूरा करने में आसानी से सक्षम होगी। ऐसा होना भी चाहिए, लेकिन यह तब अधिक सुगमता से संभव हो पाएगा, जब जनाकांक्षाओं से परिचित होने के साथ ही यह भी देखा जाएगा कि सभी सरकारी नीतियां और योजनाएं जमीन पर प्रभावी ढंग से लागू हो रही हैं या नहीं? यह कहना सही नहीं होगा कि विभिन्न मंत्रालयों के सभी एजेंडे सही तरह पूरे हो रहे हैं। वास्तव में नई सरकार के कामकाज में निरंतरता के साथ ही यह भी आवश्यक है कि उसकी गति एवं गुणवत्ता बढ़े और यदि कहीं पर आवश्यक हो तो उसमें बिना किसी देरी के संशोधन-परिवर्तन भी किया जाए।

अवैध खनन

उत्तर प्रदेश के फर्रुखाबाद में खनन माफिया के कारिंदों ने जिस दुस्साहस के साथ एक सिपाही पर ट्रैक्टर चढ़ा दिया, वह कानून-व्यवस्था के लिए बड़ी चुनौती है और इस बात का प्रमाण भी कि सरकार की सख्ती के बावजूद इस अवैध व्यवसाय पर अंकुश नहीं लगाया जा सका है। प्रदेश में मिट्टी, बालू और मौरंग का अवैध खनन काली कमाई का बड़ा कारोबार है और खनन से लेकर इसका परिवहन तक बहुत सुनियोजित ढंग से किया जाता है। सिपाही की हत्या में भी उसके साथ खनन रोकने गई पुलिस टीम संदेह के घेरे में है और होनी भी चाहिए, क्योंकि उनकी मौजूदगी में यह घटना हुई। पुलिस ने दो आरोपितों को गिरफ्तार कर चौकी प्रभारी समेत पांच पुलिसकर्मियों को निलंबित किया है, लेकिन यह पता किया जाना भी जरूरी है कि अवैध खनन के पीछे मुख्य चेहरा कौन है और क्या उसकी पुलिस और विभागीय अधिकारियों से भी मिलीभगत है? किसी भी जिले में यदि अवैध खनन हो रहा है तो वहां तैनात अधिकारियों की भूमिका की जांच की जानी चाहिए, क्योंकि बिना किसी संरक्षण के बदमाशों का हौसला सिपाही पर ट्रैक्टर चढ़ाने का नहीं हो सकता। प्रदेश में बुंदेलखंड के तहत आने वाले जिलों हमीरपुर, बांदा, चित्रकूट, जालौन आदि में व्यापक पैमाने पर खनन किया जाता है और इसका एक बड़ा हिस्सा अवैध होता है जिसे रातोंरात ट्रकों में भरकर अन्यत्र जिलों में आपूर्ति की जाती है। इसकी काली कमाई के ही कारण कई बड़ी घटनाएं हो चुकी हैं। बांदा के खनन कारोबारी इंद्रकांत त्रिपाठी की मौत को लोग अभी भी नहीं भूले हैं जिसमें आइपीएस मणिलाल पाटीदार पर हत्या का आरोप लगा था। आइएएस बी. चंद्रकला के खिलाफ भी अवैध खनन को लेकर ही जांच शुरू हुई थी। इस तरह की घटनाएं बताती हैं कि अवैध खनन में ऊपर से नीचे तक के अधिकारियों-कर्मचारियों की मिलीभगत होती है। प्रदेश सरकार को चाहिए कि इस घटना को गंभीरता से लेते हुए इसकी विस्तृत जांच कराए ताकि सच्चाई सामने आ सके।

संघवाद पर राष्ट्रीय सहमति बने

शंकर शरण

हमारे नेताओं को राजनीतिक ही नहीं, शैक्षिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक विषयों पर भी केंद्र-राज्यों के बीच उदार संबंध बनाने की पहल करनी चाहिए

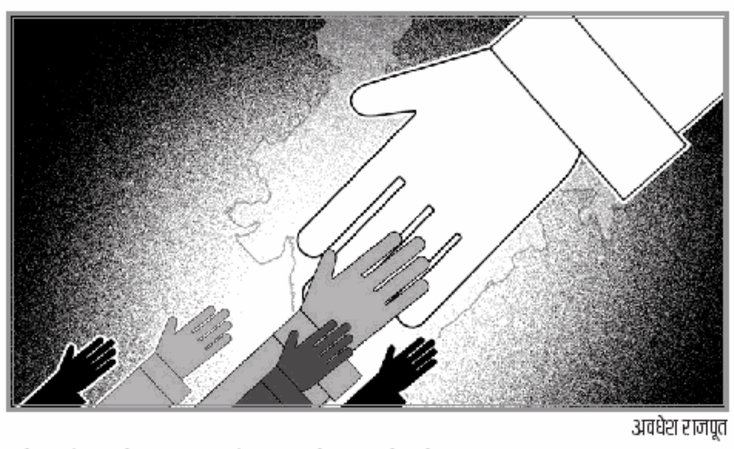

अवधेश राजपूत

चुनाव नतीजों और सरकार गठन के बाद कुछ विषयों पर दलगत राजनीति से ऊपर उठकर विचार आवश्यक हो गया है। अन्यथा धर्म-संस्कृति ही नहीं, बल्कि उन्नति, एकता और विकास आदि की बातें बेमानी हो जाती हैं। ये विषय दलीय सीमाओं से बाहर हैं। इन्हें दलीय संकीर्णता में तय करने की कोशिशें अहितकारी भी हैं। स्वतंत्र भारत में संघीय और क्षेत्रीय अस्मिता का सामंजस्य ऐसा ही विषय है। आश्चर्य कि स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी हमारे नेताओं ने इस पर राष्ट्रीय सहमति बनाने की चिंता नहीं दिखाई है, बल्कि हालिया चुनाव में की गईं बयानबाजियां तो उलटा दिखा रही थीं। अनेक नेता क्षेत्रीय विद्वेष, असंतोष या अहंकार उभारने में लगे थे। इसमें वे भी थे, जिन्हें राष्ट्रीय दल का दर्जा मिला हुआ है। महाराष्ट्र में गुजराती बनाम मराठी भी एक मुद्दा बना। फिर बिहार के एक नेता ने कहा कि कम सांसदों वाले राज्य के नेता पूरे देश पर शासन करते हैं, जबकि अधिक सांसदों वाले राज्य के लोग केवल मजदूरी करने हर कहीं भटकते हैं। यह कहकर उन्होंने असमान विकास के मुद्दे को पक्षपात से जोड़ा। एक राष्ट्रीय नेता ने पुरी के जगन्नाथ मंदिर की चाबी दक्षिण चली गई कहकर अनजाने ही दक्षिण भारत को कठघरे में कर दिया। यद्यपि उनका निशाना एक स्थानीय नेता थे। तब एक तमिल नेता ने उन पर अनुचित दोष लगाने का आरोप लगाया। इसी तरह जब किसी राज्य और केंद्र की सत्ता भिन्न-भिन्न दलों के हाथ रहती है, तो केंद्रीय अनुदान में या एजेंसियों के उपयोग में भी भेदभाव की बातें उठती हैं। फिर एक ही नेता चेन्नई, दिल्ली और भुवनेश्वर में अंतर्विरोधी बातें कहते हैं। इससे बचा जा सकता है, यदि नेता कुछ विषयों को दलबंदी से अलग रखें, पर विचित्र बात है कि दिखाने के लिए जो लोग 'वसुधैव कुटुंबकम्' की बात करते हैं, वे व्यवहार में देश में, बल्कि एक राज्य, समुदाय और दल में भी ईर्ष्या-द्वेष और अविश्वास को हवा देते हैं। मानो देश तो क्या ये अपने समुदाय के भी सभी लोगों को अपना नहीं मानते।

राष्ट्रीय दलों के अंदर भी कभी-कभी उत्तर-दक्षिण गुट झलकता है। सो स्वतंत्र भारत में केंद्रीय बनाम क्षेत्रीय संबंध पर पेंडुलम सी स्थिति रही है। कभी अतिकेंद्रीयता, तो कभी बिखराव सा दिखता है। जब किसी राष्ट्रीय दल की ताकत बहुत बढ़ जाती है, तो केंद्रीयकरण प्रवृत्ति बढ़ती लगती है। जब केंद्र में किसी को बहुमत न मिले तो कई नीतियों में टाल-मटोल, अस्पष्टता दिखती है। यह सब संघ और राज्य के अधिकार और कर्तव्य पर सहमति के अभाव का ही संकेत है। मजे की बात है कि अंग्रेजों ने देश भर में विशिष्ट क्षेत्रों, शासकों, समूहों को स्वायत्त रहने दिया, जबकि वे असंख्य छोटी-बड़ी रियासतों को खत्म करने में समर्थ थे। त्रावणकोर से कश्मीर और राजपूताना से मैसूर तक सैकड़ों छोटे-बड़े क्षेत्रों पर अंग्रेजों ने केवल औपचारिक अधिकार रखा था। वास्तविक सत्ता रियासतों के पास थी। यह भी ब्रिटिश राज के लंबे समय तक चलने का एक कारण रहा। सैकड़ों सशक्त भारतीय राजा और नवाब अंग्रेजों के प्रति सामान्य या मैत्री भाव रखे हुए थे, जिससे ब्रिटिश राज अधिक सबल, समृद्ध और दीर्घकालिक बना। स्वतंत्र भारत के शासक अभी तक वह संतुलित प्रणाली नहीं बना सके हैं।

कभी केंद्र अत्यधिक हस्तक्षेपकारी हो जाता है, तो कभी एकदम ढुलमुल। एक समय तो केंद्र में भारी बहुमत से आई सरकार मनमाने तौर पर राज्य सरकारों को बर्खास्त कर देती थी, ताकि राज्यों में भी केंद्रीय सत्ताधारी दल के लोगों की सत्ता बन जाए। राज्यपालों के माध्यम से राज्य में दखलंदाजी पर भी सवाल उठते थे। क्षेत्रीय भावनाओं पर चोट का तीसरा रूप केंद्रीय नेताओं द्वारा उन राज्यों के मुख्यमंत्रियों को मनमाने तरीके से नियुक्त करना, बदलना रहा है, जहां उनके दल की सरकार हो। इसमें राज्य के जन-गण और विधायकों की इच्छा को भी दरकिनार कर केंद्रीय नेता अपनी पसंद थोपते हैं। इससे राज्य में सुयोग्य नेता भी उपेक्षित किए जाते हैं और एक नेता द्वारा देश के हर कोने पर एकाधिकारी निर्णय करने का संदेश जाता है। यह राष्ट्रीय हित की दृष्टि से अनावश्यक है। ऐसे कदम क्षेत्रीय असंतोष पैदा करते रहते हैं, विशेषकर जब कोई राज्य और केंद्र में सत्ता के दौरान अंतर्विरोधी नीतियां अपनाता दिखे। जैसे राज्यसभा में किसी राज्य की सीटों पर पर उसी राज्य के व्यक्ति जाएं या किसी भी राज्य के व्यक्ति जा सकते हैं? अथवा क्या नेताओं के लिए रिटायरमेंट की कोई आयु है? ऐसी बातों पर जब जैसा तब तैसा से क्षेत्रवाद या भेदभाव की सुगबुगाहट होती है। उसी तरह भाषा, शिक्षा, सांस्कृतिक, सामाजिक/राष्ट्रीय त्योहारों पर केंद्र से सब कुछ तय करना अनुपयुक्त है। वस्तुतः राजनीतिक केंद्रीयकरण भारतीय मिजाज और परंपरा के विपरीत है।

देश की सामरिक एवं विदेश नीति में केंद्र का महत्व होना उचित है। काफी हद तक मुद्रा और विदेश-व्यापार में भी। शेष सभी विषय-भाषा, शिक्षा, संस्कृति, कराधान और स्थानीय प्रशासन आदि में क्षेत्रीय रुचियों और क्षमताओं को प्रमुखता देना ही अच्छा है। वह देशवासियों के बीच सहयोग, सौहार्द और अपनी-अपनी प्रतिभाओं के मुक्त विकास में भी सहायक हो सकता है। हर चीज का केंद्रीयकरण करने से अंततः अधिकांश क्षेत्रों में दक्षता गिरती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति या समिति विविध प्रकार के नियमित मामलों, समस्याओं, शिकायतों और सुझावों आदि को स्वयं देख ही नहीं सकते, जो केरल से असम तक से आती रहती हैं। सो अंततः यह सब केंद्रीय संस्थानों के मातहत मामूली कर्मचारी ही देखते हैं, जो सीमित समझ रखते हैं। इस प्रकार असंख्य विषयों में जो कार्य स्थानीय जानकार और अनुभवी अधिक अच्छे से करते, वह केंद्रीय स्तर से होने पर प्रायः जैसे-तैसे और दिखावटी होकर रह जाते हैं।

केंद्र स्तर पर कम से कम विषयों पर अधिकार रखना ही उचित है। इसलिए हमारे नेताओं को राजनीतिक ही नहीं, शैक्षिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक विषयों पर भी केंद्र और राज्यों के बीच उदार संबंध बनाने की पहल करनी चाहिए। यह दलबंदी से ऊपर उठकर ही संभव है। यह सच्ची इच्छाशक्ति और सद्भावना की मांग करता है। शेष सभी उपाय स्वतः मिल जाएंगे।

(लेखक राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

निरंतरता के साथ बदलाव भी जरूरी

राजीव सचान

मोदी सरकार और भाजपा की रीति-नीति में कुछ परिवर्तन अपेक्षित ही नहीं, आवश्यक हो गए हैं

बदलने होंगे सरकार-संगठन के तौर-तरीके। प्रेट्र

मोदी सरकार की तीसरी पारी शुरू हो गई। केंद्रीय मंत्रिपरिषद का गठन होने के साथ ही मंत्रियों के विभागों का बंटवारा भी हो गया। इसी के साथ नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार के स्थायित्व को लेकर जो सवाल उठे थे अथवा उठाए जा रहे थे, वे सहयोगी दलों और विशेष रूप से एनसीपी और शिवसेना की ओर से मंत्री पदों को लेकर शिकवा-शिकायत के बाद भी खास अहमियत नहीं पा रहे हैं। इसी तरह यह जो कयास लगाए जा रहे थे कि प्रधानमंत्री मोदी को अपने मंत्रियों के चयन और उनके विभागों के बंटवारे में सहयोगी दलों और विशेष रूप से टीडीपी और जेडीयू के दबाव का सामना करना पड़ेगा, वे हवा-हवाई ही अधिक साबित हुए, क्योंकि अधिकांश महत्वपूर्ण विभाग भाजपा नेताओं के पास ही गए। इसी तरह अनेक प्रमुख केंद्रीय मंत्रियों को उनके पुराने विभाग भी फिर से मिल गए। इससे यही संदेश निकला कि मोदी सरकार अपने तीसरे कार्यकाल में पहले की तरह कार्य करेगी और एक तरह की निरंतरता बनी रहेगी। यह एक हद तक ठीक भी है, लेकिन कुछ बदलाव भी होने चाहिए। जैसे कि जिन मंत्रियों का कामकाज आशा के अनुरूप नहीं रहा, उनके विभाग बदले जाने चाहिए थे। किसी मंत्रालय का उदाहरण देना हो तो शिक्षा मंत्रालय। मोदी सरकार शिक्षा के मोर्चे पर कुछ खास नहीं कर सकी है। देर-बहुत देर से आई नई शिक्षा नीति पर अमल धीमी रफ्तार से हो रहा है। केंद्रीय विश्वविद्यालयों तक में कुलपतियों और शिक्षकों के पद रिक्त हैं। इसके अतिरिक्त जो नियुक्तियां हो रही हैं, उन्हें लेकर सवाल उठते रहे हैं। एक निराशाजनक तथ्य यह भी है कि दस साल बाद भी पाठ्यक्रम परिवर्तन का काम न के बराबर हुआ है और वह भी तब, जब सरकार के लोग ही यह शिकायत करते रहे कि भावी पीढ़ी को गलत इतिहास पढ़ाया जा रहा है। जब सत्ता में आप ही हैं तो फिर शिकायत किससे और क्यों?

बदलाव की आवश्यकता केवल सरकार के रंग-ढंग और रीति-नीति में ही नहीं, बल्कि संगठन में भी है। इसलिए है, क्योंकि यदि भाजपा ने सबसे बड़े दल के रूप में उभरने के बाद भी 2019 के मुकाबले 2024 में 63 सीटें गंवा दीं तो उसके पीछे सरकार की कार्यशैली भी जिम्मेदार है और संगठन अर्थात भाजपा के तौर-तरीके भी। चुनाव परिणाम सामने आने के बाद इन नतीजों पर पहुंचने के पर्याप्त कारण हैं कि यदि इस बार भाजपा सिमट गई तो इसीलिए कि प्रत्याशियों का चयन सही तरीके से नहीं किया गया। बाहरी या दूसरे दलों के नेताओं को प्रत्याशी तो बनाया ही गया, उन सांसदों को फिर से चुनाव मैदान में उतार दिया गया, जिनके कामकाज से जनता नाखुश थी। इसमें भी संशय नहीं कि भाजपा वैसी सोशल इंजीनियरिंग नहीं कर सकी, जैसी उसके विरोधी दलों ने की। इसके अतिरिक्त मोदी सरकार ऐसा कोई विमर्श नहीं खड़ा कर पाई, जो देश की जनता के बीच अपना व्यापक प्रभाव छोड़ता। सरकार और संगठन उस विमर्श की काट भी नहीं कर पाए,जो विपक्षी दलों ने उसके खिलाफ खड़ा किया। रही-सही कसर भाजपा कार्यकर्ताओं की बेरुखी ने पूरी कर दी। इस बेरुखी के कई कारण थे और इनमें से प्रमुख था प्रत्याशियों का चयन ठोक-बजाकर न किया जाना।

भाजपा ने कैसे-कैसे नेताओं को चुनाव मैदान में उतारा, इसका एक उदाहरण हैं उत्तर प्रदेश में जौनपुर से चुनाव लड़े कृपाशंकर सिंह। वही कृपाशंकर सिंह, जिन्होंने दिग्विजय सिंह और महेश भट्ट संग उस पुस्तक का लोकार्पण किया था, जिसका शीर्षक था 'मुंबई हमला-आरएसएस की साजिश।' जिन भोजपुरी गायक पवन सिंह को भाजपा का प्रतिबद्ध सिपाही मानकर बंगाल में आसनसोल से चुनाव मैदान में उतारा गया, उन्हें अपने विवादित गानों के लिए चुनाव लड़ने से मना करना पड़ा। इसके बाद जब उन्हें अन्य कहीं से प्रत्याशी नहीं बनाया गया तो वह बिहार में काराकाट से निर्दलीय प्रत्याशी के तौर पर चुनाव मैदान में उतर गए। वहां उन्होंने राजग के प्रत्याशी को हराने का काम किया। इसके अलावा उन्होंने कुछ अन्य सीटों पर भी भाजपा को नुकसान पहुंचाया। आखिर ऐसे प्रत्याशियों के चयन के लिए कौन जिम्मेदार है? यह वह प्रश्न है, जिसका कोई उत्तर देने वाला दिखाई नहीं दे रहा है। क्या इसलिए कि उत्तर प्रधानमंत्री मोदी और अमित शाह के अलावा अन्य किसी के पास नहीं है।

भाजपा को जिन चार प्रमुख राज्यों में जोर का झटका लगा, उनमें उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बंगाल और राजस्थान हैं। महाराष्ट्र में झटके का एक कारण एनसीपी और शिवसेना में तोड़-फोड़ को भी माना जा रहा है। प्रश्न यह है कि क्या एनसीपी और शिवसेना से टूटकर निकले दल बिना शीर्ष नेतृत्व की सहमति और समर्थन से भाजपा के पाले में आए और महाराष्ट्र सरकार की सत्ता में साझीदार बने? वास्तव में ऐसे एक नहीं अनेक प्रश्न हैं और उनके उत्तर शीर्ष नेतृत्व अर्थात नरेन्द्र मोदी और अमित शाह को तलाशने होंगे, क्योंकि सरकार और संगठन में उनकी मर्जी के बगैर कोई बड़े फैसले संभव नहीं थे। भाजपा के कमजोर प्रदर्शन का एक कारण यह भी रहा कि इस बार भी यह मान लिया गया कि मोदी नाम के सहारे सबका बेड़ा पार हो जाएगा, लेकिन जनता अक्षम और अपेक्षाओं पर खरे न उतरने वाले सांसदों से आजिज आ गई थी। उसे लगा कि उसे हल्के में लिया जा रहा है और उसने अपनी नाराजगी जता दी। माना कि कांग्रेस ऐसे व्यवहार कर रही है जैसे 99 सीटें 240 से ज्यादा हैं और वह इस पर विचार करने का संकेत भी नहीं दे रही कि उसे करीब एक दर्जन राज्यों में एक भी सीट क्यों नहीं मिली, लेकिन भाजपा को तो अपनी 63 सीटें कम हो जाने पर गहन मंथन करना ही चाहिए।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

मस्तिष्क की शक्तियां

हमारा मस्तिष्क सबसे बड़ा इच्छापूर्ति वृक्ष है। इससे आप जो भी मांगें, वह उसकी पूर्ति में लग जाएगा। इसलिए इससे कभी भी नकारात्मक न मांगें और मन में सदैव अच्छे विचार और सकारात्मकता को स्थान दें। यूं तो विचार स्वतंत्र रूप में कोई शक्ति नहीं रखते, लेकिन जब हम सक्रिय रूप से अपना ध्यान उन पर लगाते हैं तब वे वास्तविक नजर आने लगते हैं। इसलिए ध्यान रखें कि हम क्या सोचते हैं।

हमारे मन में एक दिन में इतने सारे विचार आते हैं कि कभी-कभी ऐसा महसूस होता है जैसे वे हमारे मस्तिष्क पर हावी हो गए हैं। यदि हम अपने विचारों को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करते हैं तो हमारे अवांछित विचार हमारे समग्र कल्याण पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। कोई भी चीज हमें उतना नुकसान नहीं पहुंचा सकती जितने कि अनियंत्रित विचार। इसलिए मन के बगीचे में समय-समय पर खरपतवार हटाते रहें और स्वस्थ विचार बोएं, जिससे हमारे जीवन का निर्माण हरा-भरा बना रहे। याद रहे कि मस्तिष्क की शक्तियां सूर्य की किरणों के समान हैं। जब ये शक्तियां केंद्रित होती हैं तो चमक उठती हैं।

हमारा मस्तिष्क सृजनात्मक होना चाहिए ताकि वह मानव की भलाई में उत्तम कार्य कर सके और अपने जीवन के उद्देश्य को सार्थक कर सके। ऐसे मस्तिष्क विचारों पर चर्चा करते हैं जबकि औसत मस्तिष्क घटनाओं और छोटा सोच वाले मस्तिष्क लोगों के विषय में चर्चा करते हैं। मस्तिष्क में विचारों का ट्रैफिक जितना कम होगा, जीवन की यात्रा उतनी ही सुगम एवं सुखद होगी। ठंडा दिमाग और ऊर्जा से भरा हुआ हृदय जीवन की सभी उलझनें मिटा देता है, लेकिन जब मस्तिष्क कमजोर होता है तब परिस्थितियां समस्या बन जाती हैं। जब मस्तिष्क स्थिर होता है, तब परिस्थितियां अनुकूल बन जाती हैं। जब मस्तिष्क मजबूत होता है, परिस्थितियां अवसर बन पाती हैं।

डा. निर्मल जैन

समाज के लिए कलंक है बाल श्रम

योगेश कुमार गोयल

यह चिंता की ही बात है कि दुनियाभर में बाल श्रम निषेध दिवस मनाते हुए दो दशक बीत जाने के बाद भी इस पर अंकुश नहीं लगाया जा सका है

प्रतिवर्ष 12 जून को बाल श्रम के प्रति विरोध तथा लोगों को जागरूक करने के उद्देश्य से दुनियाभर में एक खास विषय के साथ 'बाल श्रम निषेध दिवस' मनाया जाता है, जो इस वर्ष 'आइए अपनी प्रतिबद्धताओं पर कार्य करें : बाल श्रम को समाप्त करें' विषय के साथ मनाया जा रहा है। यह दिवस मनाने की शुरुआत अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आइएलओ) द्वारा वर्ष 2002 में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को बाल श्रम से बाहर निकालकर शिक्षित करने के उद्देश्य से की गई थी। दरअसल बाल श्रम की समस्या पूरी दुनिया के लिए एक गंभीर चुनौती बनी है। भारत में भी यह समस्या काफी गंभीर है, जो सही मायनों में सभ्य समाज के लिए कलंक है। हाल में दो अलग-अलग मामलों में कुल 33 बच्चों को बाल श्रम से मुक्त कराया गया है। हालांकि बाल श्रम पर प्रतिबंध लगाने के लिए भारत सहित कई देशों द्वारा कानून बनाए गए हैं, लेकिन बाल श्रम को लेकर स्थिति फिर भी काफी चिंतनीय है। यह चिंता की ही बात है कि दुनियाभर में बाल श्रम निषेध दिवस मनाते हुए 22 वर्ष बीत जाने के बाद भी इस पर अंकुश नहीं लगाया जा सका है।

बढ़ती जनसंख्या, निर्धनता, अशिक्षा, बेरोजगारी, खाद्य असुरक्षा, अनाथ, सस्ता श्रम, मौजूदा कानूनों का दृढ़ता से लागू न होना इत्यादि बाल श्रम के अहम कारण हैं। बाल श्रम के कारण बच्चे शिक्षा से वंचित हो जाते हैं, उनके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है, बाल अपराध बढ़ते हैं और भिक्षावृत्ति, मानव अंगों के कारोबार तथा यौन शोषण के लिए उनकी गैरकानूनी खरीद-फरोख्त होती है। आइएलओ के मुताबिक विश्वभर में 16 करोड़ से भी ज्यादा बच्चे बाल मजदूरी करने को विवश हैं, जिनमें से करीब 7.3 करोड़ बच्चे बहुत बदतर परिस्थितियों में खतरनाक कार्य कर रहे हैं, जिनमें सफाई, निर्माण, कृषि कार्य, खदानों, कारखानों में तथा फेरी वाले एवं घरेलू सहायक इत्यादि के रूप में कार्य करना शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित सतत विकास लक्ष्य के तहत वर्ष 2025 तक बाल मजदूरी को पूरी तरह से खत्म करने का संकल्प लिया गया है, लेकिन फिलहाल ऐसा होता संभव नहीं दिखता।

भारतीय संविधान के अनुसार किसी उद्योग, कारखाने या कंपनी में शारीरिक अथवा मानसिक श्रम करने वाले पांच से 14 वर्ष आयु वाले बच्चों को बाल श्रमिक कहा जाता है। दुनियाभर के कुल बाल मजदूरों में 12 प्रतिशत हिस्सेदारी अकेले भारत की है। हालांकि बच्चों से बाल श्रमिक के रूप से काम कराने वालों के लिए बाल श्रम (निषेध एवं नियमन) अधिनियम, 1986 में दंड का प्रविधान है, लेकिन इस दिशा में प्रशासनिक सक्रियता के अभाव के कारण इस समस्या पर अंकुश नहीं लग पा रहा है।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

राजनीतिक परिदृश्य का विश्लेषण

'निरंतरता का संदेश देती नई सरकार' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में राहुल वर्मा ने प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में गठित राजग सरकार के साथ ही देश की राजनीति ने जो नई करवट ली, उसे बखूबी रेखांकित किया है। बहुमत के आंकड़े से पीछे रह गई भाजपा की गाड़ी को लेकर जो कुछ अनिश्चितताएं-अटकलें लगाई जा रही थीं वे तो मंत्रिपरिषद के गठन एवं विभागों के बंटवारे के बाद दूर हो जानी चाहिए। इसके माध्यम से प्रधानमंत्री मोदी ने निरंतरता और यथास्थिति को ही प्राथमिकता दी है। रक्षा से लेकर रेल मंत्रालय जैसे तमाम विभागों में पिछले कुछ समय से जिन सुधारों का सूत्रपात हुआ है, उन्हें अपेक्षित स्तर तक पहुंचाने के लिए उनका यह कदम सराहनीय रहा कि पिछले मंत्रियों को ही इन महकमों की कमान सौंपी। लेखक ने यह आकलन भी बढ़िया किया है कि चुनाव नतीजों से भाजपा की आंतरिक राजनीति से लेकर संघ के साथ उसके संबंध और सहयोगियों के साथ समीकरणों में निश्चित ही परिवर्तन आएगा। वहीं, विपक्षी नजरिये से यह देखना होगा कि कांग्रेस इस संजीवनी से खुद को और ताकतवर बनाने पर ध्यान देगी या फिर पुराने ढर्रे पर ही चलती रहेगी।

गुंजन शर्मा, कमला नगर-नई दिल्ली

नए भारत का निर्माण

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में केंद्र सरकार अब नई दिशा में अग्रसर होती दिख रही है। देश की अर्थव्यवस्था में सुधार और वित्तीय स्थिरता का संकेत मिल रहा है। इस संदर्भ में हाल ही में किए गए सुधार और नई योजनाओं की घोषणा ने जनता में विश्वास बढ़ाया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत की विकास दर में अपेक्षित वृद्धि ने निवेशकों और अंतरराष्ट्रीय बाजारों का ध्यान आकर्षित किया है। यह खुशी की बात है कि बीएसई में सूचीबद्ध कंपनियों का कुल बाजार पूंजीकरण पांच लाख करोड़ डालर के पार पहुंच गया है। इससे स्पष्ट होता है कि निवेशकों का भारतीय बाजार में भरोसा बढ़ा है। सरकार ने रोजगार और आर्थिक असमानता को दूर करने के लिए भी महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। नए रोजगार के अवसर सृजित करने के लिए उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। विशेष रूप से युवा वर्ग के लिए नई योजनाओं का संचालन किया जा रहा है, जिससे उन्हें रोजगार के बेहतर अवसर मिल सकें। आर्थिक सुधारों के बावजूद हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि चुनौतियां अभी भी बरकरार हैं। महंगाई, बेरोजगारी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की स्थिति को सुधारने के लिए और अधिक प्रयास करने की जरूरत है। सरकार को चाहिए कि वह कृषि क्षेत्र में भी सुधार लाए और किसानों की समस्याओं को प्राथमिकता दे। इसके साथ ही, शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र में भी निवेश बढ़ाना होगा ताकि समाज का हर वर्ग आर्थिक विकास का लाभ उठा सके। हमें यह समझना होगा कि आर्थिक सुधार एक सतत प्रक्रिया है और इसके परिणाम धीरे-धीरे देखने को मिलेंगे। जनता का विश्वास और सहयोग बनाए रखना सरकार की जिम्मेदारी है। हमें उम्मीद है कि आने वाले समय में भारत की अर्थव्यवस्था और भी सशक्त बनेगी और हर वर्ग को इसका लाभ मिलेगा।

अवनीश कुमार गुप्ता, नई दिल्ली

मेलबाक्स

रिश्वत की पेशकश

राहुल गांधी ने 'नारी न्याय' के नामपर आश्वासन दिया था कि चार जून के पश्चात प्रत्येक गरीब महिला को प्रतिमाह 8,500 रुपये खटाखट खटाखट मिलेंगे। राहुल की इसी गारंटी को भुनाने के लिए महिलाएं कांग्रेस के दफ्तर पहुंची रही हैं। किसी भी मतदाता को भय या प्रलोभन से मत देने के लिए कहना गैर कानूनी है। मतदाता को एक लाख रुपये देने की घोषणा को 'रिश्वत देने की पेशकश' क्यों न माना जाए? आश्चर्य है कि इसपर न चुनाव आयोग का ध्यान गया, न ही कोर्ट ने संज्ञान लिया। निस्संदेह कांग्रेसी प्रत्याशियों की जीत में इस प्रलोभन का असर भी है और यह प्रलोभन राष्ट्रव्यापी था, अतः सभी 99 कांग्रेसी सांसदों को कदाचार का दोषी करार देकर उनका निर्वाचन रद करना ही न्यायोचित होगा।

धर्मेंद्र नाथ रस्तोगी, गाजियाबाद

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :

दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए; नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

संपादकीय जागरण

(12) बुधवार, 12 जून, 2024 : ज्येष्ठ शुक्ल - 6 वि. 2081

प्रत्येक परिवर्तन नए अवसरों की राह खोलता है

काम पर सरकार

प्रधानमंत्री और उनके सहयोगियों के रूप में केंद्रीय मंत्रियों के शपथ ग्रहण के बाद जिस तरह बिना किसी देरी के उनके विभागों का बंटवारा हो गया और इस क्रम में कई प्रमुख मंत्रियों को उनके पुराने विभाग मिल गए, उससे यदि कुछ स्पष्ट हो रहा है तो यही कि भले ही नई सरकार गठबंधन सरकार हो, लेकिन उसमें प्रधानमंत्री मोदी की पूरी छाप है। विभागों के बंटवारे से यह भी साफ हुआ कि उन चर्चाओं में कोई तत्व नहीं था कि भाजपा को सहयोगी दलों के दबाव का सामना करना पड़ेगा। इसका अर्थ है कि गठबंधन सरकार होते हुए भी मोदी के नेतृत्व वाली नई सरकार अतीत की उन मिली-जुली सरकारों से अलग होगी, जिन्हें सौदेबाजी की राजनीति का न केवल सामना करना पड़ता था, बल्कि अपने एजेंडे को लागू करने के मामले में समझौते भी करने पड़ते थे। दबाव और सौदेबाजी की राजनीति गठबंधन सरकारों का एक नकारात्मक पक्ष है। इससे बेहतर और कुछ नहीं कि मोदी सरकार गठबंधन राजनीति के इस नकारात्मक पहलू से मुक्त रहेगी। शासन के बेहतर तरीके से संचालन और देश की अपेक्षाओं को पूरा करने की दृष्टि से यही उचित है कि गठबंधन सरकार सहयोगी दलों के अनुचित दबाव से मुक्त रहे। यह केवल गठबंधन सरकार का नेतृत्व करने वाले दल के ही हित में नहीं होता, बल्कि सहयोगी दलों के भी हित में होता है, क्योंकि वे राष्ट्र निर्माण में सहभागी के रूप में देखे जाते हैं और क्षेत्रीय दल होते हुए भी देश भर में उनकी विश्वसनीयता बढ़ती है। अधिकांश प्रमुख केंद्रीय मंत्रियों को उनके पुराने मंत्रालय मिलने का मतलब है कि प्रधानमंत्री मोदी सौ दिन के अपने उस एजेंडे को कहीं अधिक आसानी से पूरा करने में समर्थ होंगे, जिस पर उन्होंने चुनाव परिणाम आने के पहले ही विचार-विमर्श करना शुरू कर दिया था और यह कहा था कि उनकी सरकार तीसरे कार्यकाल में पहले की तरह ही काम करती रहेगी। यह अच्छा है कि केंद्रीय मंत्रियों ने अपना कार्यभार संभालते ही अपनी प्राथमिकताओं को रेखांकित करना प्रारंभ कर दिया है। चूंकि वे इससे भली तरह अवगत हैं कि देश की जनता को उनसे क्या अपेक्षाएं हैं, इसलिए यही आशा की जाती है कि नई सरकार लोगों की उम्मीदों को पूरा करने में आसानी से सक्षम होगी। ऐसा होना भी चाहिए, लेकिन यह तब अधिक सुगमता से संभव हो पाएगा, जब जनाकांक्षाओं से परिचित होने के साथ ही यह भी देखा जाएगा कि सभी सरकारी नीतियां और योजनाएं जमीन पर प्रभावी ढंग से लागू हो रही हैं या नहीं? यह कहना सही नहीं होगा कि विभिन्न मंत्रालयों के सभी एजेंडे सही तरह पूरे हो रहे हैं। वास्तव में नई सरकार के कामकाज में निरंतरता के साथ ही यह भी आवश्यक है कि उसकी गति एवं गुणवत्ता बढ़े और यदि कहीं पर आवश्यक हो तो उसमें बिना किसी देरी के संशोधन-परिवर्तन भी किया जाए।

समन्वय जरूरी

सूरज की बढ़ती तपिश ने बुरी तरह से आम जनजीवन को प्रभावित किया है। लोग-बाग क्या, पशु-पक्षी भी बेहोश होकर चलते-उड़ते गिर रहे हैं। ऐसे लू के थपेड़ों के बीच स्कूली बच्चों की समस्याएं बढ़ी हुई हैं। 10 जून को स्कूल खुलने के साथ ही बिहार के विभिन्न जिलों में 50 से अधिक बच्चे व शिक्षक स्कूल में ही बेहोश होकर गिर गए। उपचार के बाद इनके होश में आने तक स्कूल प्रबंधन की सांसें अटकी रहीं। सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले अधिसंख्य बच्चे आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों से आते हैं। इनके अभिभावक इनकी शिक्षा के प्रति उस स्तर तक सजग नहीं रहते हैं, जिस स्तर तक प्राइवेट स्कूलों के छात्रों के मां-पिता। मई में भी बच्चों के स्कूलों में बेहोश होने की सूचनाएं आई थीं। इन स्कूलों में जाने वाले अधिसंख्य बच्चों के पास पानी की बोतल तक नहीं होती। गर्मी की छुट्टियों के बाद 10 जून को बच्चों के लिए फिर स्कूल खुले तो लू के थपेड़ों ने उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डाला। ऐसे में आनन-फानन शिक्षा विभाग ने 11 से 15 जून तक स्कूलों को बंद रखने का निर्देश जारी किया। 16 को रविवार है। ऐसे में 17 जून से बच्चों को फिर स्कूल जाना होगा। स्कूली बच्चों को भी अक्सर जाम लगने की स्थिति में एक-दो घंटे तक बीच सड़क पर कड़ी धूप में वाहनों में फंसे रहना होता है। स्कूल बसों की तुलना में छोटे चारपहिया वाहन या आटो सड़क पर खड़े-खड़े काफी गर्म हो जाते हैं। इस स्थिति में छोटे बच्चों का स्वास्थ्य बुरी तरह से बिगड़ जाता है। ऐसे में शिक्षा विभाग की यह जिम्मेदारी बनती है कि मौसम विभाग से समन्वय स्थापित कर बच्चों के स्कूल खुलने की समयसीमा का निर्धारण करे।

यह जरूरी है कि मौसम विभाग से समन्वय स्थापित कर स्कूल अवधि का निर्धारण किया जाए।

कह के रहेंगे

माधव जोशी

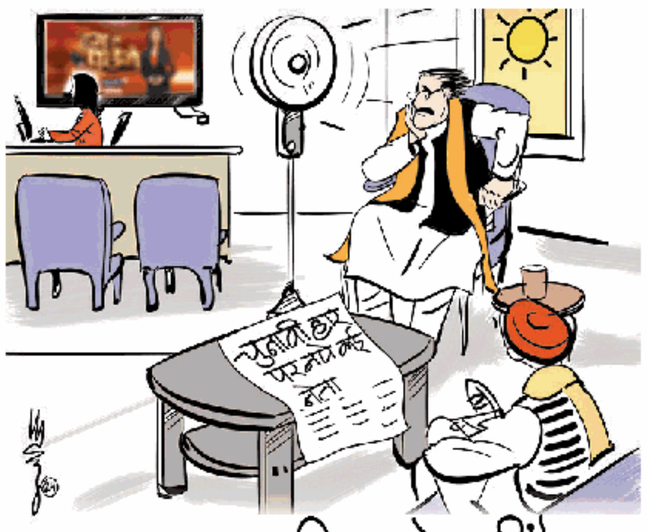

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या रियासी में हुआ आतंकी हमला जम्मू संभाग में आतंकी तत्वों के बेलगाम होने का संकेत है?

आज का सवाल
क्या विभागों के बंटवारे से स्पष्ट है कि मोदी सरकार सहयोगी दलों के दबाव से मुक्त है?

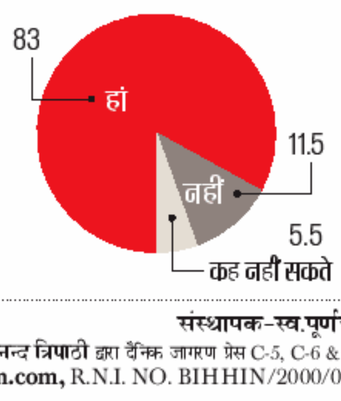

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

संघवाद पर राष्ट्रीय सहमति बने

शंकर शरण

हमारे नेताओं को राजनीतिक ही नहीं, शैक्षिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक विषयों पर भी केंद्र-राज्यों के बीच उदार संबंध बनाने की पहल करनी चाहिए

चुनाव नतीजों और सरकार गठन के बाद कुछ विषयों पर दलगत राजनीति से ऊपर उठकर विचार आवश्यक हो गया है। अन्यथा धर्म-संस्कृति ही नहीं, बल्कि उन्नति, एकता और विकास आदि की बातें बेमानी हो जाती हैं। ये विषय दलीय सीमाओं से बाहर हैं। इन्हें दलीय संकीर्णता में तय करने की कोशिशें अहितकारी भी हैं। स्वतंत्र भारत में संघीय और क्षेत्रीय अस्मिता का सामंजस्य ऐसा ही विषय है। आश्चर्य कि स्वतंत्रता के 75 वर्ष बाद भी हमारे नेताओं ने इस पर राष्ट्रीय सहमति बनाने की चिंता नहीं दिखाई है, बल्कि हालिया चुनाव में की गईं बयानबाजियां तो उलटा दिखा रही थीं। अनेक नेता क्षेत्रीय विद्वेष, असंतोष या अहंकार उभारने में लगे थे। इसमें वे भी थे, जिन्हें राष्ट्रीय दल का दर्जा मिला हुआ है। महाराष्ट्र में गुजराती बनाम मराठी भी एक मुद्दा बना। फिर बिहार के एक नेता ने कहा कि कम सांसदों वाले राज्य के नेता पूरे देश पर शासन करते हैं, जबकि अधिक सांसदों वाले राज्य के लोग केवल मजदूरी करने हर कहीं भटकते हैं। यह कहकर उन्होंने असमान विकास के मुद्दे को पक्षपात से जोड़ा। एक राष्ट्रीय नेता ने पुरी के जगन्नाथ मंदिर की चाबी दक्षिण चली गई कहकर अनजाने ही दक्षिण भारत को कठघरे में कर दिया। यद्यपि उनका निशाना एक स्थानीय नेता थे। तब एक तमिल नेता ने उन पर अनुचित दोष लगाने का आरोप लगाया। इसी तरह जब किसी राज्य और केंद्र की सत्ता भिन्न-भिन्न दलों के हाथ रहती है, तो केंद्रीय अनुदान में या एजेंसियों के उपयोग में भी भेदभाव की बातें उठती हैं। फिर एक ही नेता चेन्नई, दिल्ली और भुवनेश्वर में अंतर्विरोधी बातें कहते हैं। इससे बचा जा सकता है, यदि नेता कुछ विषयों को दलबंदी से अलग रखें, पर विचित्र बात है कि दिखाने के लिए जो लोग 'वसुधैव कुटुंबकम्' की बात करते हैं, वे व्यवहार में देश में, बल्कि एक राज्य, समुदाय और दल में भी ईर्ष्या-द्वेष और अविश्वास को हवा देते हैं। मानो देश तो क्या ये अपने समुदाय के भी सभी लोगों को अपना नहीं मानते।

राष्ट्रीय दलों के अंदर भी कभी-कभी उत्तर-दक्षिण गुट झलकता है। सो स्वतंत्र भारत में केंद्रीय बनाम क्षेत्रीय संबंध पर पेंडुलम सी स्थिति रही है। कभी अतिकेंद्रीयता, तो कभी बिखराव सा दिखता है। जब किसी राष्ट्रीय दल की ताकत बहुत बढ़ जाती है, तो केंद्रीयकरण प्रवृत्ति बढ़ती लगती है। जब केंद्र में किसी को बहुमत न मिले तो कई नीतियों में टाल-मटोल, अस्पष्टता दिखती है। यह सब संघ और राज्य के अधिकार और कर्तव्य पर सहमति के अभाव का ही संकेत है। मजे की बात है कि अंग्रेजों ने देश भर में विशिष्ट क्षेत्रों, शासकों, समूहों को स्वायत्त रहने दिया, जबकि वे

अवधेश राजपूत

असंख्य छोटी-बड़ी रियासतों को खत्म करने में समर्थ थे। त्रावणकोर से कश्मीर और राजपूताना से मैसूर तक सैकड़ों छोटे-बड़े क्षेत्रों पर अंग्रेजों ने केवल औपचारिक अधिकार रखा था। वास्तविक सत्ता रियासतों के पास थी। यह भी ब्रिटिश राज के लंबे समय तक चलने का एक कारण रहा। सैकड़ों सशक्त भारतीय राजा और नवाब अंग्रेजों के प्रति सामान्य या मैत्री भाव रखे हुए थे, जिससे ब्रिटिश राज अधिक सबल, समृद्ध और दीर्घकालिक बना। स्वतंत्र भारत के शासक अभी तक वह संतुलित प्रणाली नहीं बना सके हैं।

कभी केंद्र अत्यधिक हस्तक्षेपकारी हो जाता है, तो कभी एकदम ढुलमुल। एक समय तो केंद्र में भारी बहुमत से आई सरकार मनमाने तौर पर राज्य सरकारों को बर्खास्त कर देती थी, ताकि राज्यों में भी केंद्रीय सत्ताधारी दल के लोगों की सत्ता बन जाए। राज्यपालों के माध्यम से राज्य में दखलंदाजी पर भी सवाल उठते थे। क्षेत्रीय भावनाओं पर चोट का तीसरा रूप केंद्रीय नेताओं द्वारा उन राज्यों के मुख्यमंत्रियों को मनमाने तरीके से नियुक्त करना, बदलना रहा है, जहां उनके दल की सरकार हो। इसमें राज्य के जन-गण और विधायकों की इच्छा को भी दरकिनार कर केंद्रीय नेता अपनी पसंद थोपते हैं। इससे राज्य में सुयोग्य नेता भी उपेक्षित किए जाते हैं और एक नेता द्वारा देश के हर कोने पर एकाधिकारी निर्णय करने का संदेश जाता है। यह राष्ट्रीय हित की दृष्टि से अनावश्यक है। ऐसे कदम क्षेत्रीय असंतोष पैदा करते रहते हैं, विशेषकर जब कोई राज्य और केंद्र में सत्ता के दौरान अंतर्विरोधी नीतियां अपनाता दिखे। जैसे राज्यसभा में किसी राज्य की सीटों पर पर उसी राज्य के व्यक्ति जाएं या किसी भी राज्य के व्यक्ति जा सकते हैं? अथवा क्या नेताओं के लिए रिटायरमेंट की कोई आयु है? ऐसी बातों पर जब जैसा तब तैसा से क्षेत्रवाद या भेदभाव की सुगबुगाहट होती है। उसी तरह भाषा, शिक्षा, सांस्कृतिक, सामाजिक/राष्ट्रीय त्योहारों पर केंद्र से सब कुछ तय करना अनुपयुक्त है। वस्तुतः राजनीतिक केंद्रीयकरण भारतीय मिजाज और परंपरा के विपरीत है।

देश की सामरिक एवं विदेश नीति में केंद्र का महत्व होना उचित है। काफी हद तक मुद्रा और विदेश-व्यापार में भी। शेष सभी विषय-भाषा, शिक्षा, संस्कृति, कराधान और स्थानीय प्रशासन आदि में क्षेत्रीय रुचियों और क्षमताओं को प्रमुखता देना ही अच्छा है। वह देशवासियों के बीच सहयोग, सौहार्द और अपनी-अपनी प्रतिभाओं के मुक्त विकास में भी सहायक हो सकता है। हर चीज का केंद्रीयकरण करने से अंततः अधिकांश क्षेत्रों में दक्षता गिरती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति या समिति विविध प्रकार के नियमित मामलों, समस्याओं, शिकायतों और सुझावों आदि को स्वयं देख ही नहीं सकते, जो केरल से असम तक से आती रहती हैं। सो अंततः यह सब केंद्रीय संस्थानों के मातहत मामूली कर्मचारी ही देखते हैं, जो सीमित समझ रखते हैं। इस प्रकार असंख्य विषयों में जो कार्य स्थानीय जानकार और अनुभवी अधिक अच्छे से करते, वह केंद्रीय स्तर से होने पर प्रायः जैसे-तैसे और दिखावटी होकर रह जाते हैं।

केंद्र स्तर पर कम से कम विषयों पर अधिकार रखना ही उचित है। यह देश की सांस्कृतिक एकता के लिए भी उपयुक्त है। इसलिए हमारे नेताओं को राजनीतिक ही नहीं, शैक्षिक, सांस्कृतिक और व्यापारिक विषयों पर भी केंद्र और राज्यों के बीच उदार संबंध बनाने की पहल करनी चाहिए। यह दलबंदी से ऊपर उठकर ही संभव है। यह सच्ची इच्छाशक्ति और सद्भावना की मांग करता है। शेष सभी उपाय स्वतः मिल जाएंगे।

(लेखक राजनीतिशास्त्र के प्राध्यापक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

निरंतरता के साथ बदलाव भी जरूरी

मोदी सरकार की तीसरी पारी शुरू हो गई। केंद्रीय मंत्रिपरिषद का गठन होने के साथ ही मंत्रियों के विभागों का बंटवारा भी हो गया। इसी के साथ नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व वाली गठबंधन सरकार के स्थायित्व को लेकर जो सवाल उठे थे अथवा उठाए जा रहे थे, वे सहयोगी दलों और विशेष रूप से एनसीपी और शिवसेना की ओर से मंत्री पदों को लेकर शिकवा-शिकायत के बाद भी खास अहमियत नहीं पा रहे हैं। इसी तरह यह जो कयास लगाए जा रहे थे कि प्रधानमंत्री मोदी को अपने मंत्रियों के चयन और उनके विभागों के बंटवारे में सहयोगी दलों और विशेष रूप से टीडीपी और जेडीयू के दबाव का सामना करना पड़ेगा, वे हवा-हवाई ही अधिक साबित हुए, क्योंकि अधिकांश महत्वपूर्ण विभाग भाजपा नेताओं के पास ही गए। इसी तरह अनेक प्रमुख केंद्रीय मंत्रियों को उनके पुराने विभाग भी फिर से मिल गए। इससे यही संदेश निकला कि मोदी सरकार अपने तीसरे कार्यकाल में पहले की तरह कार्य करेगी और एक तरह की निरंतरता बनी रहेगी। यह एक हद तक ठीक भी है, लेकिन कुछ बदलाव भी होने चाहिए। जैसे कि जिन मंत्रियों का कामकाज आशा के अनुरूप नहीं रहा, उनके विभाग बदले जाने चाहिए थे। किसी मंत्रालय का उदाहरण देना हो तो शिक्षा मंत्रालय। मोदी सरकार शिक्षा के मोर्चे पर कुछ खास नहीं कर सकी है। देर-बहुत देर से आई नई शिक्षा नीति पर अमल धीमी रफ्तार से हो रहा है। केंद्रीय विश्वविद्यालयों तक में कुलपतियों और शिक्षकों के पद रिक्त हैं। इसके अतिरिक्त जो नियुक्तियां हो रही हैं, उन्हें लेकर सवाल उठते रहे हैं। एक निराशाजनक तथ्य यह भी है कि दस साल बाद भी पाठ्यक्रम परिवर्तन का काम न के बराबर हुआ है और वह भी तब, जब सरकार के लोग ही यह शिकायत करते रहे कि भावी पीढ़ी को गलत इतिहास पढ़ाया जा रहा है। जब सत्ता में आप ही हैं तो फिर शिकायत किससे और क्यों?

बदलाव की आवश्यकता केवल सरकार के रंग-ढंग और रीति-नीति में ही नहीं, बल्कि संगठन में भी है। इसलिए है, क्योंकि यदि भाजपा ने सबसे बड़े दल के रूप में उभरने के बाद भी 2019 के मुकाबले 2024 में 63 सीटें गंवा दीं तो उसके पीछे सरकार की कार्यशैली भी जिम्मेदार है और संगठन अर्थात भाजपा के तौर-तरीके भी। चुनाव परिणाम

राजीव सचान

मोदी सरकार और भाजपा की रीति-नीति में कुछ परिवर्तन अपेक्षित ही नहीं, आवश्यक हो गए हैं

बदलने होंगे सरकार-संगठन के तौर-तरीके ● प्रेट

सामने आने के बाद इन नतीजों पर पहुंचने के पर्याप्त कारण हैं कि यदि इस बार भाजपा सिमट गई तो इसीलिए कि प्रत्याशियों का चयन सही तरीके से नहीं किया गया। बाहरी या दूसरे दलों के नेताओं को प्रत्याशी तो बनाया ही गया, उन सांसदों को फिर से चुनाव मैदान में उतार दिया गया, जिनके कामकाज से जनता नाखुश थी। इसमें भी संशय नहीं कि भाजपा वैसी सोशल इंजीनियरिंग नहीं कर सकी, जैसी उसके विरोधी दलों ने की। इसके अतिरिक्त मोदी सरकार ऐसा कोई विमर्श नहीं खड़ा कर पाई, जो देश की जनता के बीच अपना व्यापक प्रभाव छोड़ता। सरकार और संगठन उस विमर्श की काट भी नहीं कर पाए, जो विपक्षी दलों ने उसके खिलाफ खड़ा किया। रही-सही कसर भाजपा कार्यकर्ताओं की बेरुखी ने पूरी कर दी। इस बेरुखी के कई कारण थे और इनमें से प्रमुख था प्रत्याशियों का चयन ठोक-बजाकर न किया जाना।

भाजपा ने कैसे-कैसे नेताओं को चुनाव मैदान में उतारा, इसका एक उदाहरण हैं उत्तर प्रदेश में जौनपुर से चुनाव लड़े कृपाशंकर सिंह। वही कृपाशंकर सिंह, जिन्होंने दिग्विजय सिंह और महेश भट्ट संग उस पुस्तक का लोकार्पण किया था, जिसका शीर्षक था 'मुंबई हमला-आरएसएस की साजिश।' जिन भोजपुरी गायक पवन सिंह को भाजपा का प्रतिबद्ध सिपाही मानकर बंगाल में आसनसोल से चुनाव मैदान में उतारा गया, उन्हें अपने विवादित गानों के लिए चुनाव लड़ने से मना करना पड़ा। इसके बाद जब उन्हें अन्य कहीं से प्रत्याशी नहीं बनाया गया तो वह बिहार में काराकाट से निर्दलीय प्रत्याशी के तौर पर चुनाव मैदान में उतर गए। वहां उन्होंने राजग के प्रत्याशी को हराने का काम किया। इसके अलावा उन्होंने कुछ अन्य सीटों पर भी भाजपा को नुकसान पहुंचाया। आखिर ऐसे प्रत्याशियों के चयन के लिए कौन जिम्मेदार है? यह वह प्रश्न है, जिसका कोई उत्तर देने वाला दिखाई नहीं दे रहा है। क्या इसलिए कि उत्तर प्रधानमंत्री मोदी और अमित शाह के अलावा अन्य किसी के पास नहीं है।

भाजपा को जिन चार प्रमुख राज्यों में जोर का झटका लगा, उनमें उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बंगाल और राजस्थान हैं। महाराष्ट्र में झटके का एक कारण एनसीपी और शिवसेना में तोड़-फोड़ को भी माना जा रहा है। प्रश्न यह है कि क्या एनसीपी और शिवसेना से टूटकर निकले दल बिना शीर्ष नेतृत्व की सहमति और समर्थन से भाजपा के पाले में आए और महाराष्ट्र सरकार की सत्ता में साझीदार बने? वास्तव में ऐसे एक नहीं अनेक प्रश्न हैं और उनके उत्तर शीर्ष नेतृत्व अर्थात नरेन्द्र मोदी और अमित शाह को तलाशने होंगे, क्योंकि सरकार और संगठन में उनकी मर्जी के बगैर कोई बड़े फैसले संभव नहीं थे। भाजपा के कमजोर प्रदर्शन का एक कारण यह भी रहा कि इस बार भी यह मान लिया गया कि मोदी नाम के सहारे सबका बेड़ा पार हो जाएगा, लेकिन जनता अक्षम और अपेक्षाओं पर खरे न उतरने वाले सांसदों से आजिज आ गई थी। उसे लगा कि उसे हल्के में लिया जा रहा है और उसने अपनी नाराजगी जता दी। माना कि कांग्रेस ऐसे व्यवहार कर रही है जैसे 99 सीटें 240 से ज्यादा हैं और वह इस पर विचार करने का संकेत भी नहीं दे रही कि उसे करीब एक दर्जन राज्यों में एक भी सीट क्यों नहीं मिली, लेकिन भाजपा को तो अपनी 63 सीटें कम हो जाने पर गहन मंथन करना ही चाहिए।

(लेखक दैनिक जागरण में एसोसिएट एडिटर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

मस्तिष्क की शक्तियां

हमारा मस्तिष्क सबसे बड़ा इच्छापूर्ति वृक्ष है। इससे आप जो भी मांगें, वह उसकी पूर्ति में लग जाएगा। इसलिए इससे कभी भी नकारात्मक न मांगें और मन में सदैव अच्छे विचार और सकारात्मकता को स्थान दें। यूं तो विचार स्वतंत्र रूप में कोई शक्ति नहीं रखते, लेकिन जब हम सक्रिय रूप से अपना ध्यान उन पर लगाते हैं तब वे वास्तविक नजर आने लगते हैं। इसलिए ध्यान रखें कि हम क्या सोचते हैं। लेखक अर्ल नाइटिंगेल के अनुसार 'हम वही बनते हैं, जो हम सोचते हैं।'

हमारे मन में एक दिन में इतने सारे विचार आते हैं कि कभी-कभी ऐसा महसूस होता है जैसे वे हमारे मस्तिष्क पर हावी हो गए हैं। यदि हम अपने विचारों को नियंत्रित करने का प्रयास नहीं करते हैं तो हमारे अवांछित विचार हमारे समग्र कल्याण पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। कोई भी चीज हमें उतना नुकसान नहीं पहुंचा सकती जितने कि अनियंत्रित विचार। इसलिए मन के बगीचे में समय-समय पर खरपतवार हटाते रहें और स्वस्थ विचार बोएं, जिससे हमारे जीवन का निर्माण हरा-भरा बना रहे। याद रहे कि मस्तिष्क की शक्तियां सूर्य की किरणों के समान हैं। जब ये शक्तियां केंद्रित होती हैं तो चमक उठती हैं।

हमारा मस्तिष्क सृजनात्मक होना चाहिए ताकि वह मानव की भलाई में उत्तम कार्य कर सके और अपने जीवन के उद्देश्य को सार्थक कर सके। ऐसे मस्तिष्क विचारों पर चर्चा करते हैं जबकि औसत मस्तिष्क घटनाओं और छोटा सोच वाले मस्तिष्क लोगों के विषय में चर्चा करते हैं। मस्तिष्क में विचारों का ट्रैफिक जितना कम होगा, जीवन की यात्रा उतनी ही सुगम एवं सुखद होगी। ठंडा दिमाग और ऊर्जा से भरा हुआ हृदय जीवन की सभी उलझनें मिटा देता है, लेकिन जब मस्तिष्क कमजोर होता है तब परिस्थितियां समस्या बन जाती हैं। जब मस्तिष्क स्थिर होता है, तब परिस्थितियां अनुकूल एवं आसान बन जाती हैं। जब मस्तिष्क मजबूत होता है, तभी परिस्थितियां अवसर बन पाती हैं।

डा. निर्मल जैन

पाठकनामा

pathaknama@pat.jagran.com

राजनीतिक परिदृश्य का विश्लेषण

'निरंतरता का संदेश देती नई सरकार' शीर्षक से प्रकाशित आलेख में राहुल वर्मा ने प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में गठित राजग सरकार के साथ ही देश की राजनीति ने जो नई करवट ली, उसे बखूबी रेखांकित किया है। बहुमत के आंकड़े से पीछे रह गई भाजपा की गाड़ी को लेकर जो कुछ अनिश्चितताएं-अटकलें लगाई जा रही थीं वे तो मंत्रिपरिषद के गठन एवं विभागों के बंटवारे के बाद दूर हो जानी चाहिए। इसके माध्यम से प्रधानमंत्री मोदी ने निरंतरता और यथास्थिति को ही प्राथमिकता दी है। रक्षा से लेकर रेल मंत्रालय जैसे तमाम विभागों में पिछले कुछ समय से जिन सुधारों का सूत्रपात हुआ है, उन्हें अपेक्षित स्तर तक पहुंचाने के लिए उनका यह कदम सराहनीय रहा कि पिछले मंत्रियों को ही इन महकमों की कमान सौंपी। लेखक ने यह आकलन भी बढ़िया किया है कि चुनाव नतीजों से भाजपा की आंतरिक राजनीति से लेकर संघ के साथ उसके संबंध और सहयोगियों के साथ समीकरणों में निश्चित ही परिवर्तन आएगा। वहीं, विपक्षी नजरिये से यह देखना होगा कि कांग्रेस इस संजीवनी से खुद को और ताकतवर बनाने पर ध्यान देगी या फिर पुराने ढर्रे पर ही चलती रहेगी।

गुंजन शर्मा, कमला नगर-नई दिल्ली

देश में वित्तीय स्थिरता के संकेत

मोदी के नेतृत्व में कई राज्य सरकारें अब नई दिशा में अग्रसर होती दिख रही हैं। देश की अर्थव्यवस्था में सुधार और वित्तीय स्थिरता का संकेत मिल रहा है। इस संदर्भ में हाल ही में किए गए सुधार और नई योजनाओं की घोषणा ने जनता में विश्वास बढ़ाया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत की विकास दर में अपेक्षित वृद्धि ने निवेशकों और अंतरराष्ट्रीय बाजारों का ध्यान आकर्षित किया है। यह खुशी की बात है कि बीएसई में सूचीबद्ध कंपनियों का कुल बाजार पूंजीकरण पांच लाख करोड़ डालर के पार पहुंच गया है। इससे स्पष्ट होता है कि निवेशकों का भारतीय बाजार में भरोसा बढ़ा है। सरकार ने रोजगार और आर्थिक असमानता को दूर करने के लिए भी महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। नए रोजगार के अवसर सृजित करने के लिए उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। विशेष रूप से युवा वर्ग के लिए नई योजनाओं का संचालन किया जा रहा है, जिससे उन्हें रोजगार के बेहतर अवसर मिल सकें। आर्थिक सुधारों के बावजूद हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि चुनौतियां अभी भी बरकरार हैं। महंगाई, बेरोजगारी और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की स्थिति को सुधारने के लिए और अधिक प्रयास करने की आवश्यकता है। सरकार को चाहिए कि वह कृषि क्षेत्र में भी सुधार लाए और किसानों की समस्याओं के निदान को प्राथमिकता दे। शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र में भी निवेश बढ़ाना होगा ताकि समाज का हर वर्ग आर्थिक विकास का लाभ उठा सके। हमें यह भी समझना होगा कि आर्थिक सुधार एक सतत प्रक्रिया है और इसके परिणाम धीरे-धीरे देखने को मिलेंगे। जनता का विश्वास और सहयोग बनाए रखना सरकार की जिम्मेदारी है। इस बार संसद में मजबूत हुए प्रतिपक्ष को भी सकारात्मक भूमिका निभानी चाहिए। हमें उम्मीद है कि आने वाले समय में भारत की अर्थव्यवस्था और भी सशक्त बनेगी और हर वर्ग को इसका लाभ मिलेगा। इससे आर्थिक असमानता भी घटनी चाहिए।

अवनीश कुमार गुप्ता, पटना

विकास को प्रभावित करने की कोशिश

'आतंकियों का दुस्साहस' शीर्षक आलेख पढ़ा। इसे पढ़ने व समझने के बाद हम इस नतीजे पर पहुंचे कि सीमा पार से आए आतंकवादी जम्मू-कश्मीर के बदलते परिवेश में हो रहे विकास को प्रभावित करने एवं देश में तीसरी बार बनी भाजपा सरकार को चुनौती देने की कोशिश कर रहे हैं। पहले अधिकतर हमले कश्मीर प्रक्षेत्र में हुआ करते थे और जम्मू प्रक्षेत्र इस मामले में अपेक्षाकृत सुरक्षित हुआ करता था, परंतु जम्मू संभाग के रियासी जिले में श्रद्धालुओं की बस पर हुए आतंकी हमले ने देश को गंभीर चिंता में डाल दिया है। हिंदुओं के प्रसिद्ध धार्मिक व दर्शनीय स्थलों में एक श्री माता वैष्णो देवी जी का मंदिर भी इसी संभाग में पड़ता है, यहां प्रतिदिन हजारों श्रद्धालु दर्शन के लिए आते हैं। जिससे यहां के लोगों को रोजगार मिलता है, आर्थिक विकास होता है। इस स्थान के प्रति हिंदुओं की गहरी आस्था है, जिसे ठेस पहुंचाने एवं देश में धार्मिक उन्माद फैलाने का प्रयास पाक समर्थित आतंकवादी संगठन ने किया है। जब मोदी सरकार 3.0 का शपथ ग्रहण समारोह चल रहा था, ठीक उसी समय किया गया यह हमला कहीं न कहीं मोदी सरकार को खुली चुनौती देने की कोशिश है। केंद्र सरकार ने इस घटना के जांच के आदेश जारी कर दिए हैं और सेना इस घटना में शामिल आतंकवादियों की तलाश कर रही है। मोदी सरकार 3.0 ने देश से आतंकवाद एवं नक्सलवाद को जड़ से खत्म करने के प्रण के साथ कार्य करना प्रारंभ कर दिया है।

डा. विकाश कुमार, सरकारी बाजार, छपरा, बिहार

पोस्ट

यह कितनी बड़ी विडंबना है कि आप जिसे हराने के लिए लामबंद होकर वोट करते हैं, बाद में उसी से मंत्रिपरिषद में हिस्सेदारी की मांग करते हैं।

अमिताभ अग्निहोत्री@Aamitabh2

विभागों के आवंटन से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री मोदी अपने तरीके से ही सरकार चलाएंगे। बहुमत से कुछ पीछे रहने के बावजूद शासन-संचालन की राह में कुछ बदलाव नहीं दिखेगा।

निधि राजदान@Nidhi

जो लोग मान रहे हैं कि चंद्रबाबू नायडू और नीतीश कुमार थोड़े में संतुष्ट होकर रह जाएंगे, वे यह न भूलें कि ये दोनों नेता सौदेबाजी में काफी सख्त हैं। अभी आने वाले वक्त की प्रतीक्षा कीजिए कि उनके लिए पिटारे से क्या निकलता है। अभिषेक सिंघवी@DrAMSinghvi

तमाम मोदी समर्थक भी यह मानते हैं कि उनके नेता के राजनीतिक सितारे कुछ गड़बड़ हुए हैं, लेकिन राहुल गांधी के प्रशंसक 99 सीटों की खुमारी में यह नहीं देख पा रहे कि यह अभी भी चुनावी इतिहास में कांग्रेस का तीसरा सबसे खराब प्रदर्शन है। यकीनन यह पिछली बार की 52 सीटों से बेहतर प्रदर्शन है, लेकिन कांग्रेसी ऐसे जश्न मना रहे हैं मानो पार्टी ने 300 सीटें जीत ली हों।

सदानंद धूमे@dhume

जनपथ

यूपी में मन लग गया सीट जीतकर सात,
यात्रा करने जा रहे राहुल जोड़े हाथ।
राहुल जोड़े हाथ अगर घूमेंगे दर-दर,
तोड़ेंगे तब आप 'साइकिल' वाला ही घर!
फिर तो श्री अखिलेश बनेंगे पहले दुश्मन,
मिलकर जिनके साथ लगाया यूपी में मन।

- ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व.पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान सम्पादक- स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन- महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान सम्पादक -संजय गुप्त

जागरण प्रकाशन लिमिटेड के लिये आनन्द त्रिपाठी द्वारा दैनिक जागरण प्रेस C-5, C-6 & 15 इंडस्ट्रियल एरिया, पाटलिपुत्रा, पटना - 800013 से प्रकाशित एवं मुद्रित, सम्पादक (बिहार/प. बंगाल)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी, स्थानीय सम्पादक - आलोक मिश्रा * दूरभाष : 0612-2277071, 2277072, 2277073
E.mail : patna@pat.jagran.com, R.N.I. NO. BIHHIN/2000/03097* इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं सम्पादन हेतु पी.आर.बी.एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी पटना जीपीओ रजि.नं. R-10/NP-18/14-16 समस्त विवाद पटना न्यायालय के अधीन ही होंगे। वर्ष 25 अंक 61

****

हो सकता है मैं आपके विचारों से सहमत न हो पाऊं फिर भी विचार प्रकट करने के आपके अधिकारों की रक्षा करूंगा। –वाल्तेयर

डेटा लीक के खतरे हजार, सतर्कता जरूरी

किसी भी व्यक्ति या संस्था का नाम-पता, मोबाइल नंबर व लोकेशन आदि की जानकारी किसी दूसरे के हाथ लग जाए तो खतरे हजार हैं। साइबर सुरक्षा शोधकर्ताओं की ओर से जब यह जानकारी सामने आती है कि फेसबुक (मेटा) से करीब एक लाख यूजर्स के पर्सनल डेटा लीक हो गए हैं तो ऐसे खतरों को लेकर चिंता बढ़ना स्वाभाविक है। लीक हुआ यह डेटा ब्रीच फोरम पर भी उपलब्ध बताया जा रहा है। जाहिर है, किसी भी प्लेटफार्म के माध्यम से व्यक्तिगत जानकारी सार्वजनिक होने पर साइबर अपराधियों की सक्रियता बढ़ सकती है और प्रभावित लोग आसानी से साइबर क्राइम के शिकार भी हो सकते हैं।

यह कोई पहली बार नहीं है जब सोशल मीडिया प्लेटफार्म के जरिए लोगों की निजी जानकारी लीक होने के मामले सामने आए हैं। सूचना प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया के दौर में व्यक्तियों और कंपनियों के डेटा बेशकीमती होते जा रहे हैं। इसलिए इन्हें सुरक्षित रखने के जितने उपाय किए जा रहे हैं उससे ज्यादा तकनीक का गलत इस्तेमाल इन्हें लीक करने में हो रहा है। हालांकि अभी यह सामने आना बाकी है कि यह किसी साइबर अपराधी समूह की कारगुजारी है अथवा इसके पीछे हैकर्स या फिर अन्य कोई संस्था है। लेकिन जिन फेसबुक यूजर्स की निजी जानकारी इस तरह से लीक हुई है, वे फिशिंग हमले के आसान शिकार बन ही सकते हैं। दुनियाभर में बढ़ते साइबर हमलों के कारण इंटरनेट पर मौजूद निजी जानकारी के लीक होने या उसका दुरुपयोग किए जाने की चिंता अकेले भारत की ही हो, ऐसा नहीं है। दुनिया के तमाम देश डेटा लीक के खतरों से आए दिन दो-चार होते हैं। इंटरनेट के बढ़ते इस्तेमाल की कोई एक वजह नहीं है। आज के दौर में हर सुविधा के इस्तेमाल के लिए तकनीक का उपयोग जरूरी हो गया है। ऐसे में लोगों के डेटा सुरक्षित नहीं हो तो चिंता स्वाभाविक है। डेटा चोरी के साथ-साथ साइबर अपराध जिस तरह से चुनौती बनते जा रहे हैं, उसमें यह जरूरी हो गया है कि इनकी रोकथाम के उपाय भी मजबूती से हों। डिजिटल स्पेस में आज सबसे बड़ा सवाल यही है कि यूजर्स का डेटा कितना सुरक्षित है?

हर बार डेटा लीक की ऐसी खबरें आती हैं तो एकाध दिन शोर मच कर रह जाता है। खबरों के खण्डन का दौर संबंधित प्लेटफार्म की तरफ से भी कम नहीं होता। ज्यादा ही शोर मचे तो जांच की खानापूर्ति होकर रह जाती है। जाहिर है सरकारों को तो ठोस कानूनी उपाय तो करने ही होंगे, साथ ही साथ सोशल मीडिया का इस्तेमाल करने वालों को खुद भी सतर्क रहना होगा।

उच्च शिक्षा: जब पर्याप्त शिक्षक और बुनियादी ढांचा ही नहीं हैं, तो शोध कार्य कैसे हो सकता है

विश्वविद्यालय बेशुमार, शोध क्षेत्र में बुरा हाल

प्रो. सीएस बरला
अर्थशास्त्री और कई पुस्तकों के लेखक
@patrika.com

गत कुछ दशकों में देशभर में निजी महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। इनके पास पर्याप्त संख्या में क्लास रूम और फैकल्टी तक नहीं है।

हाल के दशकों में भारत में ही नहीं अपितु विश्व के सभी देशों में उच्च शिक्षा से संबंधित संस्थाओं की संख्या बहुत तेजी से बढ़ी है। एक अनुमान के अनुसार जहां स्वतंत्रता के समय भारत में 12 विश्वविद्यालय थे, आज उनकी संख्या 7, 627 हो गई है। 2022 में भारत में 2500 इंजीनियरिंग कॉलेज 113 प्रबंध शिक्षण संस्थान तथा 1400 पॉलिटेक्निक संस्थान थे। राजस्थान राज्य में ही 2022 तक 52 विश्वविद्यालय कार्यरत थे। इनके अतिरिक्त कई तकनीकी संस्थान भी अस्तित्व में आ चुके हैं। इन संस्थाओं की बढ़ती हुई संख्या जहां एक तरफ हमारी नीतियों की प्रगति का एक उदाहरण है, वहीं इससे युवाओं के समक्ष एक बड़ा प्रश्न खड़ा हो रहा है कि किस संस्था में प्रवेश लिया जाए।

वस्तुतः पूरे विश्व में दसवीं या 12वीं कक्षा उत्तीर्ण करने के बाद विद्यार्थियों को अपने करियर के बारे में निर्णय लेना होता है। उनको यह तय करना होता है कि वे आगामी जीवन में क्या करने वाले हैं। उनका रास्ता सुगम करने के लिए पिछले कुछ वर्षों से विश्वविद्यालय, महाविद्यालय तथा तकनीकी संस्थानों की रैंकिंग तय करने के काम में अनेक संस्थाएं लगी हुई हैं। इस रैंकिंग में प्रत्येक संस्था के पाठ्यक्रम इसकी उपादेयता, शोध के स्तर, शोध की उपादेयता तथा संस्था विशेष की आर्थिक या वैज्ञानिक उत्कृष्टता के आधार पर उसकी स्थिति की समीक्षा की जाती है और रैंकिंग की जाती है।

वर्ष 2024 में क्यू एस रैंकिंग : एक वर्ष पूर्व तक भारत में विद्यमान विश्वविद्यालयों तथा संस्थाओं में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, भारतीय विज्ञान संस्थान बेंगलूरु, भारतीय प्रबंध संस्थान अहमदाबाद, आइआइटी खड़गपुर को विश्व की प्रथम 200 संस्थानों में जगह मिलती थी। 2024 की इस रैंकिंग के अनुसार भारत की संस्थाओं तथा विश्वविद्यालय की रैंकिंग में एक अप्रत्याशित उछाल देखा गया। आइआइटी बॉम्बे की रैंक वैश्विक स्तर पर 118 की गई जबकि आइआइटी दिल्ली की वैश्विक रैंक 150 रही। अन्य संस्थाओं की रैंक में भी काफी सुधार हुआ। भारतीय विज्ञान संस्थान बेंगलूरु की वैश्विक रैंकिंग 211 है, जबकि आइआइटी मद्रास की रैंक 227 रही। ऐसी मान्यता है कि भारत में गत दो वर्षों में जिस प्रकार व्यापक स्तर पर नई शिक्षा नीति लागू की गई, उसके कारण हमारे शिक्षण संस्थानों की रैंक में अप्रत्याशित रूप से सुधार हुआ है। इसके बावजूद क्यू एस रैंकिंग संस्था की प्रमुख जेसिका टर्नर भारतीय उच्च शिक्षा संस्थानों की प्रगति को संतोषप्रद मानते हुए इसमें सुधार के लिए अनेक सुझाव देती हैं।

भारत की उच्च शिक्षण संस्थानों को शोध के क्षेत्र में ज्यादा गंभीरता से काम करना चाहिए। वस्तुतः इन संस्थाओं के शोध को वैश्विक स्तर पर जितनी व्यापक मान्यता मिलनी चाहिए, वह नहीं मिली है। भारत के उद्योगों तथा व्यवसायों से संबद्ध इकाइयों में शिक्षण संस्थानों द्वारा की जा रही शोध की संबद्धता भी काफी कम है। अर्थव्यवस्था की प्रगति के लिए यह सुनिश्चित करना जरूरी है कि इन संस्थाओं का शोध उद्योगों तथा कृषि के लिए उपयोगी हो। आइआइटी और आइआइएम जैसी संस्थाओं का अनुपात उच्च शिक्षण संस्थाओं में बहुत कम है। वहां पाठ्यक्रम शुद्ध एवं व्यापक है तथा फैकल्टी भी आवश्यकता अनुसार पर्याप्त है। लेकिन देश के हजारों सरकारी महाविद्यालयों एवं बड़ी संख्या में पंजीकृत निजी महाविद्यालयों में फैकल्टी अपर्याप्त है और उन्हें दिया जाने वाला मानदेय भी बहुत कम है। अपर्याप्त फैकल्टी तथा कम मानदेय के चलते निजी संस्थानों में पाठ्यक्रम से संबद्ध दायित्व पूरा नहीं हो पाता।

गत कुछ दशकों में देशभर में निजी महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। इन संस्थाओं के पास पर्याप्त संख्या में क्लास रूम नहीं हैं, न ही इन संस्थाओं के पास पर्याप्त सुविधाएं तथा पुस्तकें हैं। जहां पाठ्यक्रम पूरा करना ही कठिन है, वहां फैकल्टी से शोध कार्य के लिए समय की अपेक्षा करना भी व्यर्थ है। वस्तुतः यह दायित्व सरकार का भी है कि वह महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय की स्वीकृति देने के साथ यह भी सुनिश्चित करे कि इन संस्थाओं के पास पर्याप्त क्लासरूम तथा फैकल्टी हो तथा उनको योग्यता के अनुरूप मानदेय दिया जाए। शिक्षकों तथा शोध की गुणवत्ता में सुधार के लिए बहुत कुछ करना होगा।

फैक्ट फ्रंट

इंदिरा गांधी दोषी करार निर्वाचन अमान्य

इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 12 जून 1975 के दिन भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को चुनाव में सरकारी मशीनरी के इस्तेमाल का दोषी ठहराया और उनके निर्वाचन को अमान्य करार दिया। इससे राजनीतिक भूचाल सा आ गया। अदालत ने इंदिरा गांधी को चुनाव में अनुमति से ज्यादा धन व्यय करने और सरकारी संसाधनों के दुरुपयोग का दोषी पाया और उनके किसी भी राजनीतिक पद ग्रहण करने पर रोक लगा दी गई। इसके बाद का घटनाक्रम आपातकाल के काले अध्याय के लिए जाना जाता है।

विश्व बालश्रम निषेध दिवस आज

महज कानून नहीं, सामाजिक संवेदनशीलता है समाधान

बालश्रम किसी भी सभ्य समाज की विफलता मानी जा सकती है। अगर हम यह सोच रहे हैं कि इसकी कैद में विकासशील देशों के बच्चे ही हैं तो यह सोच मिथक है। अमरीका, यूरोप और ब्रिटेन जैसे विकसित देश भी बालश्रम को मिटाने में विफल रहे हैं। दुनिया भर में हर 10 में से एक बच्चा यह दंश झेलने के लिए विवश है। 'बालश्रम' शब्द को अक्सर ऐसे काम के रूप में परिभाषित किया जाता है जो बच्चों को उनके बचपन, उनकी क्षमता और गरिमा से वंचित करता है तथा उनके शारीरिक और मानसिक विकास के लिए हानिकारक है। उपलब्ध आंकड़ों के मुताबिक दुनिया भर में 16 करोड़ से अधिक बच्चे बालश्रम में लिप्त हैं। भारत में बालश्रम से संबंधित आधिकारिक आंकड़े बताते हैं कि देश में एक करोड़ बच्चे काम कर रहे हैं।

ऋतु सारस्वत
समाजशास्त्री और स्तंभकार
@patrika.com

बालश्रम का समूल समापन एक चुनौती भरा पथ है और यह बिना सामाजिक संवेदनशीलता के संभव नहीं है।

बीते वर्ष दिसंबर 2023 को 'बाल श्रम पर राष्ट्रीय नीति एक आकलन' पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए श्रम कपड़ा और कौशल विकास संबंधी स्थाई समिति ने टिप्पणी की कि विभिन्न मंत्रालय बाल श्रमिकों की संख्या का अनुमान लगाने के लिए समय-समय पर सर्वेक्षण करने के लिए समन्वय करें। समिति के विचारानुसार सामाजिक न्याय मंत्रालय को बाल श्रम को समाप्त करने में अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए और मौजूदा योजनाओं की क्रियान्वित में सजगता एवं सुदृढ़ता बरतनी चाहिए। समिति ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट कहा है कि बाल श्रम को रोकने का कारगर उपाय 'आर्थिक उत्थान' है। 1979 में बाल श्रम की समस्या के विश्लेषण एवं उससे निपटने के लिए उपाय सुझाने के लिए गठित 'गुरुपादस्वामी समिति' ने अपनी रिपोर्ट में कहा था कि 'जब तक गरीबी रहेगी तब तक बालश्रम को पूरी तरह मिटाना मुश्किल हो सकता है और इसीलिए किसी कानूनी उपाय के माध्यम से इसे समूल मिटाने का प्रयास व्यावहारिक प्रस्ताव नहीं होगा।' समिति ने सिफारिश की थी कि कामकाजी बच्चों की समस्याओं से निपटने के लिए विधि-नीतिगत दृष्टिकोण आवश्यक है। समिति की सिफारिश के आधार पर 1986 में बालश्रम (निषेध एवं रोकथाम) अधिनियम लागू किया गया। यह अधिनियम कुछ निर्दिष्ट खतरनाक व्यवसायों और प्रक्रिया में बच्चों के रोजगार पर प्रतिबंध लगाता है और अन्य स्थलों पर कामकाजी परिस्थितियों को नियंत्रित करता है।

बालश्रम मुक्त समाज के निर्माण के प्रयास में एक ऐतिहासिक कदम अगस्त 2016 में बालश्रम (निषेध तथा रोकथाम) संशोधन अधिनियम था। इसमें सभी व्यवसायों और प्रक्रियाओं में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों की सलंग्नता पर पूर्ण प्रतिबंध लगाने का प्रावधान है तथा खतरनाक व्यवसायों और प्रक्रिया में किशोरों (14-18) के नियोजन पर प्रतिबंध लगाया गया है। बालश्रम उन्मूलन दुनिया भर के देशों के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती बनकर खड़ा हुआ है, जिससे निपटने के लिए तमाम तरह के वैधानिक एवं सामाजिक स्तर पर प्रयास राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगठनों द्वारा निरंतर किए जा रहे हैं। विश्व बालश्रम निषेध दिवस 2024 'आइए अपनी प्रतिबद्धताओं पर काम करें बाल श्रम को समाप्त करें' की थीम पर आधारित है जो कि बालश्रम को समाप्त करने के लिए व्यापक सामाजिक न्याय उपायों की आवश्यकता पर बल देती है। साथ ही यह सुनिश्चित करती है कि सभी बच्चे सुरक्षा, शिक्षा और शोषण से मुक्त बचपन के अपने अधिकारों का आनंद ले सकें। बालश्रम का समूल समापन एक चुनौती भरा पथ है और यह बिना सामाजिक संवेदनशीलता के संभव नहीं है।

चीन के शॉपिंग मॉल: हो रहा रचनात्मक उपयोग, ताकि न छा जाए वीरानी

बड़े चमकदार शॉपिंग मॉल चीन की शानदार आर्थिक वृद्धि का प्रतीक रहे हैं। अब अमरीका की तरह यहां भी कई मॉल मुश्किल दौर से गुजर रहे हैं। इनकी उपयोगिता बनाए रखने के लिए इन स्थानों का लुक बदला गया है और इनका रचनात्मक उपयोग किया जा रहा है। चित्र में बीजिंग के एक आउटडोर लग्जरी शॉपिंग मॉल में इंस्टॉलेशन आर्ट के साथ एक महिला कॉफी का कप पकड़े हुए एक स्मारिका तस्वीर के लिए पोज देती नजर आ रही है।

प्रसंगवश

अतिक्रमणों को देख आंख मूंदने वालों पर भी सख्ती जरूरी

सरकारी संपत्तियों पर कब्जा करने की घटनाएं जब होती हैं, तब जिम्मेदारों को आखिर क्या हो जाता है?

पिछले दिनों यूपी की तरह राजस्थान में भी ऐसे दर्जनों मामले सामने आए हैं जब हत्या, लूटपाट, परीक्षाओं में नकल समेत दूसरे कई अपराधों में लिप्त लोगों की मकान, दुकान जैसी संपत्तियों पर बुलडोजर चलाकर ध्वस्त करने की कार्रवाइयां हुई हैं। जिन संपत्तियों पर बुलडोजर चला है वे अवैध निर्माण की श्रेणी में आती हैं। अपराधियों की कमर तोड़ने के लिए पुलिस-प्रशासन का यह कदम सराहनीय कहा जाएगा। जयपुर, जोधपुर, नागौर, भरतपुर, कोटा, बीकानेर व ताजा घटना में बूंदी में बुलडोजर चले हैं। यह भी एक तथ्य है कि समाजकंटक गलत तरीकों से पैसा कमाकर इनका इस्तेमाल अपराध जगत में खौफ कायम करने के लिए करते रहे हैं।

बूंदी के हिण्डोली क्षेत्र में दबिश देने आई पुलिस पर फायरिंग करके चोरी का आरोपी भाग गया था। वारदात के बाद पुलिस ने उसका रेकॉर्ड खंगाला तो पता चला कि उसने डेढ़ सौ बीघा से ज्यादा सरकारी जमीन पर कब्जा करके दो मकान और फार्म हाउस बना रखे थे। इतना ही नहीं, उसने सिंचाई के लिए लम्बा चौड़ा तालाब भी बना रखा था। स्थानीय प्रशासन और पुलिस ने सोमवार को तड़के लवाजमे के साथ मौके पर पहुंचकर इसे ध्वस्त कर दिया। यह तय है कि इस तरह की कार्रवाई से अपराधियों के मन में खौफ भी बैठेगा, लेकिन सवाल यह भी है कि ऐसे अपराधी तब ही सामने आते हैं जब वे कोई बड़ी वारदात कर देते हैं। सरकारी जमीन पर अतिक्रमण, कमजोर वर्ग को डरा-धमका कर उनकी संपत्तियों पर कब्जा करने जैसी घटनाएं जब होती हैं, तब जिम्मेदारों को आखिर क्या हो जाता है? सरकारी मुलाजिमों को ऐसे अतिक्रमणों की शिकायत नहीं मिलती हो ऐसा नहीं है। अफसर इन अवैध निर्माणों की अनदेखी कर आखिर क्यों निकल जाते हैं? जाहिर है चांदी की खनक के आगे सब चुप्पी साध लेते हैं। अपराधी तत्वों की सचमुच कमर तोड़नी हो तो उन्हें इस तरह से मजबूत होने से रोकना होगा। अपराधियों में भय और आमजन में विश्वास के पुलिस के ध्येय वाक्य की जरूरत भी ऐसे ही मौके पर होती है। ऐसे में भला कोई बड़ी आपराधिक वारदात होने का इंतजार क्यों किया जाए? अवैध निर्माण व अतिक्रमणों को चिह्नित कर उन्हें ध्वस्त करने की प्रक्रिया नियमित जारी रहे तो अपराधियों के हौसले स्वतः ही पस्त हो जाएंगे। उन सरकारी कारिंदों को भी चिह्नित करना होगा जो समाजकंटकों को शह देते हैं।

-जयप्रकाश सिंह
jaiprakash.singh@epatrika.com

अर्थव्यवस्था: भारत में शुद्ध घरेलू बचत 47 साल के निचले स्तर पर है तो यह वाकई एक चिंता की बात है

घातक साबित हो सकती है कर्ज लेकर घी पीने की प्रवृत्ति

एक बड़ा तथ्य यह है कि भारतीय परिवार सबसे अधिक निवेश प्रॉपर्टी यानी जमीन-जायदाद में करते हैं, जो कुल निवेश का 40 प्रतिशत से अधिक है। यानी भारतीय परिवारों में सबसे बड़ी तमन्ना अपने घर का मालिक बनने की रहती है। इसी तमन्ना में के चलते घरेलू कर्ज में वृद्धि दर्ज हो रही है। लोग फ्लैट या मकान के लिए कर्ज ले रहे हैं। इसके अलावा, बैंकों में जमा राशि, पेंशन फंड, जीवन बीमा, इक्विटी या म्यूचुअल फंड में भी भारतीय परिवार बचत का पैसा निवेश कर रहे हैं। पिछले कुछ दशकों में भारतीय परिवारों की मार्केट में वित्तीय पहुंच भी बढ़ी है और उनके सामने निवेश के तमाम विकल्प खुल गए हैं। अब यह भी देखने में आया है कि अपनी बचत का पैसा भारतीय परिवार शेयर मार्केट में भी लगाने से नहीं हिचक रहे हैं और वे जोखिम भी ले रहे हैं। प्रॉपर्टी के बाद भारतीय परिवार सोना, चांदी और जेवरात में निवेश करते हैं। यही कारण है कि देश का बुलियन मार्केट तेजी से आगे बढ़ रहा है। सोना और चांदी इन दिनों अपने उच्चतम स्तर पर नजर आ रहे हैं।

थोड़ा भारत सरकार के बचत को बढ़ावा देने के प्रयासों पर नजर डालते हैं। देश 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र हुआ था। तब भारत सरकार ने भारतीय परिवारों की बचत को कैसे देश की प्रगति में लगाया जाए, इस सवाल पर गंभीरता से विचार किया और इसके लिए कदम उठाने शुरू किए। वर्ष 1948 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय बचत संगठन, जिसे अब राष्ट्रीय बचत संस्थान कहते हैं, का गठन किया। डाकघर बचत बैंक को संविधान में सूचीबद्ध किया गया। वर्ष 1959 में संसद में पारित सरकारी बचत प्रमाण पत्र अधिनियम और वर्ष 1968 में सार्वजनिक भविष्य निधि अधिनियम ने भारतीय लघु बचत योजनाओं की रूपरेखा तैयार की। भारत में लघु बचत का मूल विचार यह है कि बचत और निवेश समावेशी होने चाहिए, यानी गांव के स्तर तक बचत होनी चाहिए। सबसे अहम बात, जब भी कोई प्राकृतिक आपदा आती है, तब देश को बचत योजनाओं में लगाए पैसे ही काम आते हैं। ऐसा हम कोविड महामारी के दौरान देख चुके हैं। तब न केवल लोगों के लिए बचत किए हुए पैसे संबल बने, बल्कि सरकार को भी बचत योजनाओं में लगाए गए धन से बहुत संबल मिला था। म्यूचुअल फंड्स स्कीम्स की महत्ता को भी भारत सरकार ने बहुत पहले ही भांप लिया था और यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया एक्ट 1963 को लेकर आई। वर्ष 1964 में भारत में पहली म्यूचुअल फंड स्कीम लॉन्च कर दी गई। यह योजना इतनी लोकप्रिय हुई कि यूनिट ट्रस्ट ऑफ इंडिया ने इसके बाद कई म्यूचुअल फंड योजनाएं लॉन्च कीं। वर्ष 1991 में शुरू आर्थिक सुधारों ने देश में वित्तीय बाजार को और बढ़ावा दिया। भारत सरकार ने वर्ष 1992 में भारतीय प्रतिभूति और विनियम बोर्ड यानी सेबी की स्थापना की। सेबी को म्यूचुअल फंड का भी नियामक बनाया गया। यानी सरकार लगातार बचत को बढ़ावा देती रही है। एक तथ्य यह भी है कि भारतीयों को बचत करने वालों में गिना जाता है, लेकिन हम दुनिया में टॉप 10 देशों में नहीं आते हैं। अफ्रीका का छोटा देश जिबूती बचत में बहुत आगे है, जहां वर्ष 2022 में ग्रोस डोमेस्टिक सेविंग रेट 84.9 प्रतिशत थी। इसके बाद कतर, आयरलैंड, अफ्रीकी देश गैबॉन, सिंगापुर जैसे देश आते हैं।

भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआइ) ने हाल में जो आंकड़े जारी किए हैं, वे चौंकाने वाले हैं। ये आंकड़े इस ओर इशारा करते हैं कि भारत में शुद्ध घरेलू बचत 47 साल के निचले स्तर पर है तो यह वाकई एक चिंता की बात है। वर्ष 2023 में बचत घटकर सकल घरेलू उत्पाद यानी जीडीपी का 5.3 प्रतिशत हो गई है, जो वर्ष 2022 में 7.3 प्रतिशत थी। फिर वही सवाल क्या भारतीय परिवार भी पश्चिम के परिवारों की राह पर चल रहे हैं, जो वर्तमान में कर्ज लेकर जीवन को अच्छे से जीना चाहते हैं। यदि ऐसा है तो यह भारत और भारतीय परिवारों के लिए सोच-विचार का विषय है। भारत सरकार को पुनः बचत योजनाओं की ओर ध्यान देना चाहिए। पिछले कुछ वर्षों के दौरान समय-समय पर बचत योजनाओं की ब्याज दरों में कमी की गई है। सरकार को इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। विशेष कर अल्प बचत योजनाओं की ब्याज दरें अच्छी कर दी जाएं तो निम्न और मध्यम आयवर्ग के निवेशकों को फायदा होगा। सरकार के पास पैसा आएगा तो अर्थव्यवस्था की गाड़ी भी पटरी पर तेज दौड़ेगी। भारतीयों का भविष्य भी सुरक्षित रहेगा।

विजय गर्ग
आर्थिक विशेषज्ञ, भारतीय एवं विदेशी कर प्रणाली के जानकार
@patrika.com

पुनः बचत योजनाओं की ओर ध्यान देना चाहिए। विशेष कर अल्प बचत योजनाओं की ब्याज दरें अच्छी कर दी जाएं तो निम्न और मध्यम आय वर्ग के निवेशकों को फायदा होगा। सरकार के पास पैसा आएगा तो अर्थव्यवस्था की गाड़ी भी पटरी पर तेज दौड़ेगी।

आपकी बात

युवाओं को रोजगार मिले

सरकार की पहली प्राथमिकता युवाओं को रोजगार उपलब्ध कराना होना चाहिए। महंगाई को काम किया जाए और महिलाओं की सुरक्षा पर भी ध्यान दिया जाए।
-लता अग्रवाल, चित्तौड़गढ़

आज का सवाल

इंटरनेट पर बढ़ती निर्भरता का क्या असर हो रहा है?

ईमेल करें
edit@epatrika.com

patrika.com पर पढ़ें

पाठकों की प्रतिक्रियाएं

पत्रिकायन का सवाल था, ' केंद्र की नई सरकार की प्राथमिकता क्या होनी चाहिए?' ऑनलाइन भी देखें।
इसे स्कैन करें
rb.gy/vfcaxl

6 | संपादकीय
जनसत्ता | 12 जून, 2024

कल्पमेधा

शास्त्रों के सुंदरतम वर्णन अगर जीवन में न उतरें, तो वे कांच की अलमारी में सजी हुई मिठाई से ज्यादा मूल्यवान नहीं हैं।

– आचार्य चंदनमुनि

मणिपुर की आग

एक वर्ष से अधिक समय बीत गया, मगर अभी तक मणिपुर में खूनी संघर्ष समाप्त नहीं हो पाया है। शुरू से ही वहां शांति बहाली के प्रयास शिथिल नजर आते हैं। प्रशासन और सुरक्षाबलों ने इच्छाशक्ति दिखाई होती, तो बहुत पहले इस समस्या का समाधान निकल गया होता। मगर उनकी भूमिका संदिग्ध बनी हुई है। इसी का नतीजा है कि सोमवार को उपद्रवियों ने घात लगा कर मुख्यमंत्री एन बीरेन सिंह के काफिले पर हमला कर दिया। गनीमत है कि उसमें सिर्फ एक सिपाही घायल हुआ, कोई बड़ा नुकसान नहीं हुआ। इससे वहां के उपद्रवियों के हौसले का अंदाजा लगाया जा सकता है। अब राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रमुख मोहन भागवत ने मणिपुर की स्थिति पर चिंता जाहिर करते हुए कहा है कि इतने लंबे समय से वहां अशांति का वातावरण है, मगर उसे हल करने की कोशिश नहीं की गई। इसे प्रथमिकता में रखते हुए शांति बहाली का प्रयास किया जाना चाहिए। पिछले दस वर्षों से वहां शांति का वातावरण था। हालांकि भागवत ने भी इस मामले में बयान देने में काफी वक्त लगा दिया। इसे लेकर विपक्षी दल लगातार सवाल उठाते रहे हैं। संसद में भी प्रश्न पूछे गए, मगर कोई संतोषजनक उत्तर नहीं मिल सका। अभी तक पूछा जाता है कि मणिपुर पर प्रधानमंत्री क्यों खामोश हैं।

मणिपुर में कुकी और मैतेई समुदाय के बीच संघर्ष, एक भ्रमपूर्ण बयान की वजह से भड़क उठा था। हालांकि अब वहां की अदालत खुद इस संभावना को खारिज कर चुकी है कि मैतेई समुदाय के लोगों को जनजातीय समुदाय का दर्जा दिया जाना चाहिए। मगर न तो राज्य और न केंद्र सरकार मणिपुर के खूनी संघर्ष को रोक पाई है। शुरू में जरूर केंद्रीय गृहमंत्री वहां गए थे, मगर फिर कोई उल्लेखनीय कार्रवाई नहीं हो सकी। बाद में सर्वोच्च न्यायालय ने मामले का संज्ञान लेते हुए जांच और कार्रवाई के लिए समितियां गठित कर दी, मगर उसका भी कोई नतीजा नजर नहीं आ रहा। पिछले वर्ष मई में शुरू हुए इस संघर्ष में अब तक सवा दो सौ से अधिक लोगों के मारे जाने, चार सौ से अधिक लोगों के घायल होने, हजारों घरों के जलाए जाने और साठ हजार से अधिक लोगों के विस्थापित होकर राहत शिविरों में शरण लेने के तथ्य उजागर हैं। सरकारों को अब यह बहाना जरूर मिल गया है कि मणिपुर के संघर्ष को रोकने की कार्रवाई सर्वोच्च अदालत की निगरानी में चल रही है, इसलिए वे इसमें बहुत हस्तक्षेप नहीं कर सकतीं। मगर यह उनका अपनी जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लेने का एक और तरीका है।

यह समझना मुश्किल है कि कैसे कोई भी कल्याणकारी सरकार अपने नागरिकों को इस तरह मारकाट करते देखती रह सकती है। राज्य सरकार तो इस मामले में शुरू से नाकाम साबित हुई है, मगर केंद्र सरकार ने इस पर अपेक्षित गंभीरता क्यों नहीं दिखाई, समझ से परे है। जिस तरह वहां महिलाओं को निर्वस्त्र करके घुमाया गया, उनके साथ सामूहिक बलात्कार किया गया, उससे पूरी दुनिया में देश की छवि खराब हुई। मणिपुर के लोगों का सरकार और प्रशासन पर से भरोसा उठ चुका है। गांव वाले खुद सुरक्षा दल बना कर पहरेदारी करते और उपद्रवियों से बचने की कोशिश करते हैं। यानी वहां के लोगों को एक तरह से उनके हाल पर छोड़ दिया गया है। संघ प्रमुख की मणिपुर को लेकर प्रकट की गई चिंता को केंद्र सरकार कितनी गंभीरता से लेती है, देखने की बात है।

सुविधा का प्रवेश

विद्यार्थियों की सुविधा का ध्यान रखते हुए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने वर्ष में दो बार दाखिले की प्रक्रिया शुरू करने का नियम बना दिया है। इस तरह जो विद्यार्थी बोर्ड नतीजे देर से आने या किन्हीं स्वास्थ्य कारणों से प्रवेश प्रक्रिया में हिस्सा लेने से वंचित रह जाते हैं और उन्हें पूरे एक वर्ष तक इंतजार करना पड़ता है, उन्हें इस नियम से काफी सहूलियत हो जाएगी। यूजीसी ने सभी विश्वविद्यालयों और शैक्षणिक संस्थानों से कहा है कि वे जुलाई-अगस्त के अलावा जनवरी-फरवरी में भी प्रवेश प्रक्रिया शुरू करें। हालांकि यह नियम शैक्षणिक संस्थाओं के लिए बाध्य नहीं है। पर निस्संदेह इस नए नियम से बहुत सारे विद्यार्थियों को लाभ मिल सकता है। नतीजे देर से आने की वजह से बहुत सारे विद्यार्थी शैक्षणिक संस्थानों में नियमित दाखिला नहीं ले पाते और मजबूरी में उन्हें पत्राचार आदि पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेना पड़ता है। मगर यह नियम कितने शैक्षणिक संस्थानों के लिए व्यावहारिक होगा, देखने की बात है।

दरअसल, अधिकतर विश्वविद्यालयों और उच्च शैक्षणिक संस्थानों का सत्र जुलाई-अगस्त से ही शुरू हो जाता है। उनमें से बहुत सारे संस्थानों में सेमेस्टर प्रणाली लागू है। उसी के मुताबिक पाठ्यक्रमों और परीक्षाओं का निर्धारण किया जाता है। इसलिए लगभग हर संस्थान की कोशिश होती है कि वह जुलाई-अगस्त में ही अपनी निर्धारित सीटों पर दाखिला ले ले। ऐसे में जनवरी-फरवरी में सीटें बची रहने की संभावना बहुत कम रहेगी। उन्हीं संस्थानों में सीटें खाली रह सकती हैं, जिनमें कुछ विद्यार्थी दाखिले के बाद संस्थान छोड़ कर चले गए हों। फिर, जनवरी-फरवरी में दाखिला देने के बाद संस्थानों के सामने अड़चन यह आएगी कि नए विद्यार्थियों को पिछले पांच-छह महीनों में पढ़ाए गए पाठ्यक्रम कैसे पढ़ाएं। पहले सेमेस्टर की उनकी परीक्षा कैसे लें। फिर, दाखिले की प्रक्रिया को सुविधाजनक बना देने भर से विद्यार्थियों को कितना लाभ मिलेगा, कहना मुश्किल है, क्योंकि सरकारी संस्थानों में विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या के मुताबिक पर्याप्त सीटें नहीं हैं। जब तक सीटें नहीं बढ़ेंगी, नए संस्थान नहीं खुलेंगे, तब तक सामान्य आय वर्ग के विद्यार्थियों की मुश्किलें आसान नहीं होंगी। प्रवेश संबंधी नए नियमों का फायदा निजी संस्थानों को जरूर मिल सकेगा।

बिगड़ती आबो-हवा के बीच

विश्व की करीब एक चौथाई जमीन बंजर हो चुकी है और यही रफ्तार रही तो सूखा प्रभावित क्षेत्रों की करीब सत्तर फीसद जमीन कुछ सालों में बंजर हो जाएगी। इससे विश्व के सौ देशों की एक अरब से ज्यादा आबादी का जीवन संकट में पड़ जाएगा।

रवि शंकर

आज मानव सभ्यता विकास के चरम पर है। भौतिक और तकनीकी प्रगति ने जीवन को बहुत आसान बना दिया है। मगर भौतिक और तकनीकी प्रगति की इस आपसी प्रतिस्पर्धा ने मानव जीवन को भी खतरे में डाल दिया है। जबकि मानव के लिए यह पृथ्वी ही सबसे सुरक्षित ठिकाना है। विज्ञान आज तक इसका दूसरा विकल्प नहीं खोज पाया है। विभिन्न कार्यों के माध्यम से हमने अपने पर्यावरण को इस कदर दूषित और विषैला बना दिया है कि हमारी सांस ही हमारी दुश्मन बन बैठी है। एक आम धारणा है कि पर्यावरण प्रदूषण, भूमंडलीय ताप, ग्लेशियर के पिघलने से पर्यावरण और पृथ्वी को खतरा है। सबसे बड़ा खतरा मानव जाति को है। आज जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार कोई और नहीं, बल्कि समस्त मानव जाति है।

अगर एक नजर पर्यावरण संकट पर डालें तो स्पष्ट है कि विश्व की करीब एक चौथाई जमीन बंजर हो चुकी है और यही रफ्तार रही तो सूखा प्रभावित क्षेत्रों की करीब सत्तर फीसद जमीन कुछ सालों में बंजर हो जाएगी। यह खतरा इतना भयावह है कि इससे विश्व के सौ देशों की एक अरब से ज्यादा आबादी का जीवन संकट में पड़ जाएगा। पर्वतों से विश्व की आधी आबादी को पानी मिलता है। हिमखंडों के पिघलने, जंगलों की कटाई और भूमि के गलत इस्तेमाल के चलते पर्वतों का पारिस्थितिकी तंत्र खतरे में है। विश्व का आधे से अधिक समुद्र तटीय पारिस्थितिकी तंत्र गड़बड़ा चुका है। यह गड़बड़ी यूरोप में अस्सी फीसद और एशिया में सत्तर फीसद तक पहुंच चुकी है। इतना ही नहीं, पर्यावरण के नष्ट होने से बहुत सारी जीव प्रजातियां विलुप्त हो चुकी हैं। यही स्थिति रही तो करीब ग्यारह हजार प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा बढ़ जाएगा।

विगत कुछ दशकों में पर्यावरण पर बहुत बातचीत हुई है, मगर स्थिति यह है कि विषमता की खाईं और चौड़ी हो गई है। आक्सफेम और अन्य संस्थाओं के आकलन के मुताबिक, दुनिया में सबसे अमीर और सबसे गरीब आदमी की आय में लगभग ढाई सौ फीसद का अंतर है। विकसित या अमीर देशों के लगभग तेईस फीसद लोगों के पास विश्व की आय का पचासी फीसद हिस्सा है। जबकि विकासशील देशों में लगभग सतहत्तर फीसद लोग रहते हैं, जिनके पास विश्व की आय का पंद्रह फीसद हिस्सा ही है। पर्यावरण सुरक्षा को लेकर बातचीत और बैठकों का दौर तो खूब चला है, मगर धरातल पर सार्थक परिणाम के बजाय विषमता और बढ़ती जा रही है। यों कहें कि मानवीय सोच और विचारधारा में इतना अधिक बदलाव आ गया है कि भविष्य की जैसे मानव को कोई चिंता ही नहीं है।

पर्यावरण असंतुलन के चलते भूमंडलीय ताप, ओजोन क्षरण, अम्लीय वर्षा, बर्फीली चोटियों का पिघलना, सागर के जल-स्तर का बढ़ना, मैदानी नदियों का सूखना, उपजाऊ भूमि का घटना और रेगिस्तानों का बढ़ना आदि विकट परिस्थितियां उत्पन्न होने लगी हैं। यह सारा किया-कराया मनुष्य का है और आज विचलित, चिंतित भी स्वयं मनुष्य हो रहा है। बहरहाल, भूमंडलीय तापमान में वृद्धि का सिलसिला जारी है। बीते दो

दशक में यह स्पष्ट हुआ है कि वैश्वीकरण की नवउदारवादी और निजीकरण की नीति ने हमारे सामने बहुत-सी चुनौतियां खड़ी कर दी हैं। इससे आर्थिक विकास के माडल लड़खड़ाने लगे हैं। भूख, खाद्य असुरक्षा और गरीबी ने न केवल गरीब देशों पर असर डाला है, बल्कि पूर्व के

> **पर्यावरण असंतुलन के चलते भूमंडलीय ताप, ओजोन क्षरण, अम्लीय वर्षा, बर्फीली चोटियों का पिघलना, सागर के जल-स्तर का बढ़ना, मैदानी नदियों का सूखना, उपजाऊ भूमि का घटना और रेगिस्तानों का बढ़ना आदि विकट परिस्थितियां उत्पन्न होने लगी हैं। यह सारा किया-कराया मनुष्य का है और आज विचलित, चिंतित भी स्वयं मनुष्य हो रहा है। बीते दो दशक में यह स्पष्ट हुआ है कि वैश्वीकरण की नवउदारवादी और निजीकरण की नीति ने हमारे सामने बहुत-सी चुनौतियां खड़ी कर दी हैं। इससे आर्थिक विकास के माडल लड़खड़ाने लगे हैं।**

धनी देशों को भी परेशानी में डाल दिया है।

प्रकृति के बगैर जीवन असंभव है। शुद्ध पानी, पृथ्वी, हवा हमारे स्वस्थ जीवन की प्राथमिक शर्तें हैं। मानव और प्रकृति का संतुलित सहअस्तित्व जरूरी है, लेकिन अफसोस कि आज दोनों का अस्तित्व संकट में है। सन 2050 तक विश्व की जनसंख्या में और वृद्धि हो जाएगी, तब धरती पर भार और बढ़ जाएगा। इसको लेकर कई तरह की भविष्यवाणियां की जा चुकी हैं। ज्यादातर ऐसा शोर पश्चिमी देशों से ही उठता रहा है, जिन्होंने अपने विकास के लिए न जाने प्रकृति के विरुद्ध कितने ही कदम उठाए हैं और ये लगातार उठ रहे हैं। आज भी कार्बन उत्सर्जन करने वाले देशों में सत्तर फीसद हिस्सा पश्चिमी देशों का है, जो विकास की अंधी दौड़ का परिणाम है। मगर विकासशील और अविकसित देशों को भूमंडलीय ताप का भय दिखाकर उन्हें ऐसा करने से रोकने का प्रयास किया जा रहा है। हालांकि हर वर्ष इस गंभीर समस्या को लेकर विश्व स्तर पर शिखर सम्मेलन का आयोजन किया जाता है, लेकिन परिणाम ढाक के तीन पात ही रहते हैं।

कार्बन उत्सर्जन में सबसे ज्यादा योगदान विकसित देशों का है, मगर वे इसमें जरा भी कटौती नहीं करना चाहते। कहीं कारखानों का गंदा जल हमारे पीने के पानी में मिलाया जा रहा है, तो कहीं गाड़ियों से निकलता धुंआ हमारे जीवन में जहर घोल रहा है। जिस पृथ्वी को मां का दर्जा देते हैं उसे हम खुद अपने ही हाथों दूषित करने में लगे रहते हैं। जलवायु परिवर्तन आज पृथ्वी के लिए सबसे बड़ा संकट बन गया है। दरअसल, वैश्वीकरण से उपजे उपभोक्तावाद ने मनुष्य की संवेदना को सोखकर उसे निर्मम भोगवादी बना दिया है। धरती को बचाने के लिए गुहार लगानी पड़ रही है, क्योंकि प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुध दोहन के परिणामस्वरूप आज उसके सामने अस्तित्व का संकट उत्पन्न हो गया है। इस विषम स्थिति में अपने जीवन की रक्षा के लिए हमें धरती को बचाने का संकल्प लेना होगा। मगर दुखद स्थिति यह है कि न तो विश्व स्तर पर कोई जागरूकता दिखाई दे रही है और न राजनीतिक स्तर पर कोई ठोस पहल।

आज विश्व के सामने पर्यावरण को बचाने की कड़ी चुनौतियां हैं। वायु प्रदूषण के साथ समुद्री तल कार्बन से भर चुका है। अगर हम अब भी नहीं समझे तो विनाश से कोई नहीं बचा सकता। पर्यावरण को बचाने के लिए पौधारोपण, जंगल सुरक्षा की मुहिम चलानी होगी। हर व्यक्ति को पर्यावरण मित्र बनना होगा, तभी हम स्वच्छ वातावरण में सांस ले सकेंगे। संयुक्त राष्ट्र की संस्था यूएन पर्यावरण तथा यूएनईए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न समझौतों के जरिए जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए एक प्रभावी मंच प्रदान कर रहे हैं। मगर मौजूदा प्रयास इन चुनौतियों को दूर करने में कारगर साबित नहीं हो रहे हैं। फिनलैंड ने विभिन्न देशों और समझौतों से आगे बढ़ कर वर्ष 2035 तक स्वयं को 'कार्बन न्यूट्रल' करने का निर्णय किया है। अन्य देशों को भी फिनलैंड से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। देशों को आर्थिक विकास को ही एकमात्र उद्देश्य बनाने के बजाय विकास की धारणीयता पर भी विचार करना आवश्यक है। यह भी सही है कि कोई देश अपने बल पर वैश्विक चुनौती से पार नहीं पा सकता इसलिए सभी देशों को मिलकर प्रयास करने होंगे। इन देशों के मध्य बेहतर तालमेल तथा समन्वय के लिए पर्यावरण से संबंधित निकायों को एक मंच पर लाना होगा, साथ ही संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था को भी पर्यावरण उन्मुख बनाना होगा।

अहं का विसर्जन

राकेश सोहम्

दुनिया मेरे आगे

दुनिया तेजी से बदल रही है। इस बदलाव के बीच कुछ समय पहले के भी बहुत से आविष्कार और साधन पुराने लगने लगे हैं। महज दो दशक में कई साधन या सामान बाजारों से गायब हो चुके हैं या फिर बहुत मुश्किल से मिलते हैं। दृश्य और सुनने के प्रसंगों को बांध कर तथा उसमें खो जाने के पलों को देने वाले आडियो-वीडियो कैसेट और सीडी इतिहास होते दिखाई देते हैं। बंगलुरु के एक संग्रहालय में गीत-संगीत की दुनिया में समय के साथ उतरते और गायब होते संसाधनों को बड़े रोचक तरीके से संभाल कर रखा गया है। न केवल इन्हें, बल्कि अनेक भारतीय वाद्ययंत्रों को भी बड़ी ही खूबसूरती से संजोकर रखा गया है। ये वाद्ययंत्र हमारी गौरवशाली संस्कृति की धरोहर हैं। आज की नई पीढ़ी बड़े आश्चर्य से इन्हें देखती है। यह अविष्कारों को लेकर एक उदाहरण मात्र है। पत्र और चिट्ठियां तो पहले ही इतिहास के पन्नों में दर्ज हो चुकी हैं। ऐसी कई चीजें, जिनके साथ कुछ समय पहले तक अपना वक्त गुजारते थे, वे हमारा सहारा होती थीं, वे अब खोजे नहीं मिलतीं। हालांकि हमारी रफ्तार भी थोड़ी बढ़ गई है, इसलिए वे चीजें तभी याद आती हैं, जब हम किसी वक्त खाली होते हैं या फिर हमें उनकी जरूरत महसूस होती है।

चिट्ठियों को देखे मानो जमाना हो गया है। चिट्ठियों का यों इतिहास हो जाना दुखद है। इनका कोई संग्रहालय भी शायद ही देश में कहीं हो। आधुनिक पीढ़ी चिट्ठियों से पूरी तरह अनभिज्ञ जान पड़ती है। जिस पीढ़ी ने चिट्ठियों का समय देखा है, वह चिट्ठियों के इंतजार की कसक को जानती है। उसकी खुशबू और स्पर्श को पहचानती है। शब्दों के सहारे वाक्यों में पिरोई गई भावनाओं को महसूस कर सकती है। हां, यह जरूर है कि वक्त के साथ बदलते स्वरूप में वह पीढ़ी भी चिट्ठियों के मौजूदा स्वरूप के साथ जीने की अभ्यस्त हो चली है और अब उसे ही स्वीकार करना उसकी मजबूरी हो गई। चिट्ठियों के पुराने दौर को याद करना ही उसकी नियति रह गई है।

आमतौर पर चिट्ठियों का प्रथम वाक्य कुशल क्षेम पूछने और बताने से शुरू हुआ करता था। इसकी भाषा और वाक्य विन्यास सभी चिट्ठियों में लगभग एक-सा होता था। प्रथम वाक्य कुछ इस प्रकार हुआ करता था- 'आप लोगों के आशीर्वाद से मैं यहां ठीक हूं। उम्मीद है, आप लोग भी वहां पर अच्छी तरह से होंगे।' अगर चिट्ठी लिखने वाले को अपने घर के सभी सदस्यों की कुशल-क्षेम बताना हो तो वह 'हम यहां ठीक हैं' लिखता था। एक से अधिक के लिए 'मैं' के संबोधन की जगह बातचीत में 'हम' का प्रयोग किया जाता है। कई हिंदीभाषी क्षेत्रों में एक के लिए भी, 'मैं' की जगह 'हम' का प्रयोग होता है। जैसे 'मैंने यह कार्य किया है' की जगह लोग कहते हैं 'हमने यह कार्य किया है'।

ऐसा माना जाता है कि 'मैं' ज्यादा व्यक्तिपरक संबोधन है, जबकि 'हम' में नजाकत जान पड़ती है। हालांकि ऐसा कहने में 'हम' भी व्यक्तिपरक तो है, मगर इसमें सामूहिकताबोध भी छिपा है। जब कोई व्यक्ति अपनी बातों को रखते हुए बार-बार 'हम' शब्द का प्रयोग करता है तो वह अनजाने ही भाषा के तकाजों से दूर चला जाता है, मगर सामूहिकता का एक रूपक रचता है। यों जरूरी यह है कि भाषा के दायरे का विस्तार हो, न कि क्लिष्टता के प्रति सम्मोहन के बीच दायरे निरंतर छोटे होते जाएं।

बहरहाल, चिंतक मानते हैं कि व्यक्ति स्वभावतः स्वार्थी होता है। वह बिना स्वार्थ के कोई भी कार्य नहीं करता। यहां तक कि एक दानदाता भी दान देते समय उससे मिलने वाले सुख के लोभ में पड़ जाता है। उसे दान का सुख प्रतिष्ठा, प्रसिद्धि, सम्मान जैसे कई रूप में दिखाई देता है। इसलिए शास्त्रों में निस्वार्थ दान की महत्ता बताई गई है। धार्मिक और सामाजिक कार्यों में 'गुप्त दान' को निस्वार्थ दान की श्रेणी में माना जा सकता है। हित के कार्य भी निस्वार्थ भाव से किए जाने चाहिए। अगर दानदाता पर अहंकार हावी हो जाए तब ऐसा दान, दान नहीं रह जाता, स्वार्थ बन जाता है। दान में निस्वार्थ तटस्थता होना चाहिए। अपनी आवश्यकताओं से अतिरिक्त दान तो अच्छा है ही, लेकिन आवश्यकताओं को सीमित करके किया गया दान सर्वश्रेष्ठ होता है। ऐसे दान से अहं का क्षरण होता है।

> **चिंतक मानते हैं कि व्यक्ति स्वभावतः स्वार्थी होता है। वह बिना स्वार्थ के कोई भी कार्य नहीं करता। यहां तक कि एक दानदाता भी दान देते समय उससे मिलने वाले सुख के लोभ में पड़ जाता है। उसे दान का सुख प्रतिष्ठा, प्रसिद्धि, सम्मान जैसे कई रूप में दिखाई देता है।**

अहं यानी अहंकार। किसी महकमे के दफ्तरों में कितने ही अधिकारी अपने अधीनस्थ से कठिन कार्य की जटिल गुत्थी को उन पर दबाव बनाकर सुलझवा लेते हैं, लेकिन ऊपर वाले अधिकारी के सामने संपन्न किए गए कार्य को ऐसे प्रस्तुत करते हैं कि अभीष्ट कार्य को उन्होंने खुद ही सफलतापूर्वक संपन्न किया है। वे कहते हैं, 'यह कार्य मैंने किया है।' ऐसा करके वे अपने अहं की तुष्टि करते हैं और अहंकारी बन बैठते हैं। अपने अधीनस्थ द्वारा की गई मेहनत को गौण करार देते हैं।

आमतौर पर जब व्यक्ति का अहं जागता है तब स्वयं को 'मैं' से संबोधित करने वाला व्यक्ति सब कुछ का स्रोत खुद को मानने लगता है। हालांकि सभी कार्यों का श्रेय लेने के भाव में 'मैं' का प्रयोग करना भी अहंकार है, लेकिन इसके लिए 'मैं' को जरा दंभ के साथ बोलना पड़ता है। रोजमर्रा के जीवन में यह देखा जा सकता है। व्यक्ति आवेश में आकर कहता है, 'किसी को क्या मालूम, वह हम ही हैं, जिसने पूरी जिम्मेदारी उठाई हुई है। हक तो हमारा ही सबसे अधिक बनता है।' वहीं कुछ लोग संस्था या समूह के किए गए कार्यों के बारे में भी 'मैंने कराया' का भाव परोसते हैं। बहरहाल, जान लेना जरूरी है कि शब्दों का प्रयोग और भाषा का इस्तेमाल ही व्यक्ति को समझदार ठहराता है।

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

पर्यटन की प्रतिष्ठा

हाल में विश्व आर्थिक मंच ने यात्रा और पर्यटन विकास सूचकांक (टीटीडीआइ) 2024 जारी किया है, इसमें शामिल कुल 119 देशों में भारत 39वें स्थान पर है। 2019 के मुकाबले भारत की श्रेणी में सुधार हुआ है। मगर कुछ कमियां हैं भारत में, जिन्हें सुधारे बगैर इस श्रेणी को बनाए रखना मुश्किल है। पहली कमी विदेशी पर्यटकों की सुरक्षा का है। आए दिन विदेशी महिला पर्यटकों से बदसलूकी की घटनाएं सुनने को मिलती हैं। इनमें शामिल ज्यादातर वे लोग होते हैं, जो उस विदेशी पर्यटक को जानते हैं। उनकी जान-पहचान किसी न किसी कार्य-व्यापार के कारण होती है। विदेशी पर्यटकों से धोखाधड़ी, चोरी, लूट भी बहुत होती है। वहीं जब भारत के लोग विदेश जाते हैं तो वहां से बहुत कुछ सीख कर आते हैं। सफाई के मामले में यूरोप और अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि हमसे बहुत आगे हैं। ये सब बातें विदेशी पर्यटक को भारत आने से पहले ही परेशान कर देती हैं। पहले लोगों के अंदर बदलाव लाना होगा, तभी बाहर की, समाज की स्थिति बदलेगी।

– वेद सिंह यादव, लखनऊ

साख पर सवाल

अब देश की प्रतिष्ठित परीक्षाओं में भी गड़बड़ी होने लगी है। यह बेहद चिंताजनक है। छोटी-मोटी परीक्षाओं में गड़बड़ी को लोग आम चलन मान कर संतोष कर लेते हैं या इन पर प्रतिरोध को लंबे समय तक ठंडे बस्ते में डाल दिया जाता है। 'नीट' जैसी परीक्षा में गड़बड़ी मानव जीवन के साथ खिलवाड़ होगी। इस तरह संपन्न लोगों के बच्चे सरकारी मेडिकल कालेजों में दाखिला करवाने में सफल हो जाएंगे तथा मेधावी छात्र वंचित रहेंगे। नीट में धांधली पर एनटीए ने कहा कि यह समस्या केवल छह केंद्रों तक सीमित थी। पूरी परीक्षा प्रक्रिया में पारदर्शिता बरती गई। इस बार 'नीट यूजी' परीक्षा में करीब चौबीस लाख बच्चे बैठे थे, जिनमें से सिर्फ 1563 को समय का नुकसान होने की वजह से कृपांक दिए गए हैं। नीट की जांच समिति से उम्मीद की जाती है कि वह सच्चाई को सामने लाकर उचित कदम उठाएगी।

– प्रसिद्ध यादव, बाबूचक, पटना

बदलता ऋतु चक्र

बढ़ते वैश्विक ताप यानी ग्लोबल वार्मिंग के कारण हर वर्ष गर्मी का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। वैश्विक स्तर पर ठंडे देशों में भी तापमान में बढ़ोतरी हो रही है। हालात यही रहे तो आने वाले वर्षों में तापमान जीवधारियों की सहनशक्ति के पार पहुंच सकता है। ऐसी स्थिति में पृथ्वी पर जीवन कैसा होगा, इसकी सिर्फ कल्पना की जा सकती है। पृथ्वी का बढ़ता तापमान हमारे लिए आपदा का सबब बनता जा रहा है। ऋतु चक्र में परिवर्तन, असमय बारिश और आंधी का आना भी पर्यावरण के असंतुलन को दर्शाता है। मानव जाति ने अपनी सुख-सुविधा के लिए प्रकृति चक्र को विनाश के गर्त में धकेल दिया है। हम सब इसका दुष्परिणाम भुगतने को विवश हैं। छोटे-छोटे प्रयासों से पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में हम अपना योगदान दे सकते हैं। वृक्षों को सहेज-संरक्षित करके, नदियों को प्रदूषण से बचाकर, वर्षा जल को सहेजकर और सौर ऊर्जा को बढ़ावा देकर हम पर्यावरणीय संकट को एक हद तक कम कर सकते हैं।

– ललित महालकरी, इंदौर

दक्षिणपंथी उभार

यूरोपीय संसदीय चुनाव के नतीजों ने, मध्यमार्गी और समाजवादियों को चिंतित कर दिया है। इस चुनाव में दक्षिणपंथी पार्टियों ने बड़ी बढ़त हासिल की है, जिसमें जर्मन चांसलर ओलाफ स्कोल्ज, फ्रांसीसी राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों और आस्ट्रियाई चांसलर कार्ल नेहमर को अपमानजनक हार का सामना करना पड़ा है। मैक्रों ही एक ऐसे अकेले नेता हैं, जो इस विचारधारा के पनपने से सबसे ज्यादा व्यथित थे। उन्होंने मौजूदा संसद को भंग करते हुए इस महीने के अंत में संसदीय चुनावों की घोषणा की है। जर्मनी में एएफडी पार्टी को भारी बढ़त से ऐसा लग रहा है कि वहां नाजीवाद का पुनरागमन शुरू हो गया है। इटली की प्रधानमंत्री जियोर्जिया मेलोनी ने अपनी स्थिति मजबूत कर ली है। कहीं इसी का अनुसरण एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका के देश भी करने लगे तो क्या होगा?

– जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

https://t.me/AllNewsPaperPaid

महोत्सव विश्वास का 75
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

बाजार के उतार-चढ़ाव आपके मित्र हैं, न कि शत्रु। भागने के बजाय, इनका लाभ उठाएं। -वारेन बफे

मेडिकल परीक्षाओं की पुरानी प्रक्रिया में निहित दोषों को दूर करने के लिए लाई गई एनटीए की व्यवस्था खुद आरोपों के घेरे में है। ऐसे में, कथित गलतियों को ढकने के बजाय लाखों युवाओं के भविष्य से जुड़ी परीक्षा की निष्पक्ष जांच और इसकी प्रणाली को दोषमुक्त बनाने पर जोर होना चाहिए।

परीक्षा की शुचिता

मेडिकल कॉलेजों में प्रवेश के लिए राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (एनटीए) द्वारा आयोजित राष्ट्रीय पात्रता-सह-प्रवेश परीक्षा, स्नातक (नीट यूजी) में कथित गड़बड़ियों को लेकर सर्वोच्च न्यायालय ने बेशक एनटीए को नोटिस जारी कर दिया है, लेकिन इसे लेकर पूरे देश में चल रहा विवाद थमता नहीं दिख रहा। देश भर से बीस हजार से ज्यादा युवाओं ने इस मामले में याचिकाएं दायर की हैं, तो यह उनके रोष को ही प्रकट करता है। इस वर्ष पांच मई को हुई नीट यूजी परीक्षा में करीब चौबीस लाख परीक्षार्थी सम्मिलित हुए थे। लेकिन लोकसभा चुनाव के नतीजों वाले दिन यानी चार जून को जब एनटीए ने परीक्षा के नतीजे घोषित किए, तो कोहराम मच गया। इसमें करीब 67 परीक्षार्थियों को पूर्णांक 720 में से पूरे 720 अंक मिलने पर सवाल उठे, तो एक ही परीक्षा केंद्र से कई टॉपर्स निकलने के भी आरोप लगे। नीट यूजी परीक्षा की मूल्यांकन पद्धति ऐसी है, जिसमें विद्यार्थियों को पूर्णांक 720 में से 718 या 719 अंक मिल ही नहीं सकते, लेकिन कई परीक्षार्थियों को इतने अंक मिलने से भी परीक्षा में धांधली होने का संदेह गहराता है। हालांकि एनटीए इसकी वजह करीब 1,500 विद्यार्थियों को मिले अनुग्रह अंकों को बता रही है, जो इसलिए दिए गए थे, क्योंकि तकनीकी वजहों से उक्त केंद्रों के विद्यार्थियों को परीक्षा के लिए पूरा समय नहीं मिल सका। लेकिन जब चौबीस लाख विद्यार्थियों का भविष्य दांव पर लगा हो, तब अनुग्रह अंकों का बंटवारा जाहिर है कि मनमाना नहीं हो सकता। अनुग्रह अंकों को कथित तौर पर 2018 की क्लैट परीक्षा के फॉर्मूले पर बांटने की बात तो और भी ज्यादा आपत्तिजनक है। क्लैट की ऑनलाइन परीक्षा की तुलना में नीट ऑफलाइन तो थी ही, दोनों परीक्षाओं के पैटर्न में भी खासा फर्क है। इसके अतिरिक्त, अगर किसी परीक्षा केंद्र के परीक्षार्थियों के समय का नुकसान हुआ था, तो उसी वक्त उन्हें अतिरिक्त समय दिया जा सकता था। यही नहीं, इस मामले की जांच की जिम्मेदारी नीट द्वारा अपने ही गवर्निंग बॉडी के प्रमुख की

अध्यक्षता में गठित समिति को सौंपे जाने से उसकी मंशा पर ही सवाल उठते हैं। यह बेहद दुखद है कि मेडिकल परीक्षाओं की पुरानी प्रक्रिया में निहित दोषों को दूर करने के लिए ही लाई गई एनटीए की व्यवस्था खुद ही आरोपों से घिर गई है। नीट परीक्षा सालाना आयोजित होने वाली देश की सबसे बड़ी परीक्षाओं में से एक है व इस पैमाने पर होने वाली परीक्षा का पूरी तरह से त्रुटि मुक्त होना संभव नहीं है। इसके बावजूद परीक्षा की भी एक शुचिता होती है। ऐसे में, अपनी गलतियों को ढकने की कोशिशों के बजाय पूरे मामले की गंभीर जांच होनी चाहिए, ताकि लाखों युवाओं के भविष्य से जुड़ी परीक्षा की प्रक्रिया को दोषमुक्त किया जा सके।

बाजार तो ऐसे ही चलता है

निवेशकों के लिए महत्वपूर्ण यह है कि वे बाजार के दीर्घकालीन दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर निवेश करना जारी रखें। अल्पावधि में उतार-चढ़ाव तो होंगे, लेकिन ये सभी निवेश का हिस्सा हैं। शेयर बाजार न केवल चार जून की गिरावट से उबर गया है, बल्कि यह तीन जून के उच्चतम स्तर को भी पार कर गया है।

शेयर बाजारों में निवेश करना कमजोर दिलवालों का काम नहीं है, खासकर तब, जब बाजार अस्थिर हो। जब बाजार एक ही दिन या छोटी अवधि में ऊपर-नीचे होता रहता है, तो इसका मतलब है कि बाजार अस्थिर है।

जाहिर है, एक आम निवेशक इस अस्थिरता को चिंता का कारण मान सकता है, लेकिन ऐसा होना नहीं चाहिए, क्योंकि जिस तरह हमारे दिल की धड़कन ऊपर-नीचे होती रहती है, जो हमें जीवित रखती है, उसी तरह शेयर बाजार के सूचकांक शेयर बाजार को गतिमान रखने के लिए ऊपर-नीचे होते रहते हैं। इस अर्थ में, यदि बाजार का सूचकांक सपाट यानी स्थिर है, तो इसका मतलब है कि यह यानी बाजार मरा हुआ है, ठीक उसी तरह, जैसे दिल की धड़कन रुकने पर कोई व्यक्ति मर जाता है।

नारायण कृष्णमूर्ति
वरिष्ठ पत्रकार

शेयर बाजार में उतार-चढ़ाव के कई कारक होते हैं, जिनमें स्थानीय एवं वैश्विक समाचार से लेकर राजनीतिक नतीजे, व्यापार चक्र और डर इत्यादि शामिल रहते हैं। फिर भी कुछ ऐसी घटनाएं होती हैं, जिनके कारण शेयर बाजार चरम स्थिति में पहुंच जाता है।

विगत चार जून को जब लोकसभा चुनाव के परिणाम आने शुरू हुए थे, तब जिस तरह की चरम स्थितियां देखी गई थीं, वैसी घटना हाल के समय में वर्ष 2021 में कोविड लॉकडाउन की घोषणा के समय देखी गई थी। उस दिन यानी चार जून को, एस एंड पी बीएसई सेंसेक्स में 4,000 से अधिक अंकों और लगभग छह फीसदी की भारी गिरावट देखी गई, जो अभूतपूर्व थी। ऐसा लग रहा था, मानो घरेलू और विदेशी, दोनों निवेशक भारतीय बाजारों से बाहर निकलना चाहते थे।

चुनाव परिणाम के दिन भारतीय शेयर बाजार में आई गिरावट पर बात करने से पहले हमें विगत 19 मई की ओर लौटना चाहिए, जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक टेलीविजन चैनल से बात करते हुए कहा

था कि चार जून को शेयर बाजार रिकॉर्ड तोड़ देगा। ऐसा नहीं है कि सिर्फ उन्होंने ही ऐसा कहा था, बल्कि लोकसभा चुनाव के विभिन्न चरणों के दौरान उनके मंत्रिमंडल के कई प्रमुख सदस्यों ने इस तरह की टिप्पणी की थी। सत्तारूढ़ पार्टी के इस आत्मविश्वास को निवेशकों ने बाजार में निवेश करने के संकेत के रूप में समझा। नतीजतन मई के अधिकांश दिनों में, चुनावों के अंतिम चरण तक बीएसई सेंसेक्स ज्यादातर दिनों में बढ़ता ही रहा।

इसे इस बात का संकेत माना गया कि बाजार सरकार की वापसी और उसकी नीतियों की निरंतरता में यकीन रखती है। बाजार के लिए जनता के मूड से संकेत लेना और भी दिलचस्प हो गया, क्योंकि एक जून को आए एग्जिट पोल में भाजपा की स्पष्ट और बड़ी जीत की भविष्यवाणी की गई थी। स्वाभाविक रूप से तीन जून को बाजार खुले, तो बाजार में भारी खरीदारी देखी गई। एग्जिट पोल के नतीजों के बाद सेंसेक्स में 2,600 अंकों की बढ़ोतरी देखी गई।

दरअसल, तीन जून को विदेशी संस्थागत निवेशकों ने 6,851 करोड़ रुपये के शेयर खरीदे, जबकि घरेलू संस्थागत निवेशकों ने, जिनमें बैंक, बीमा कंपनियां, म्यूचुअल फंड और अन्य भारतीय संस्थान शामिल हैं, 1,914 करोड़ रुपये के शेयर खरीदे। हालांकि अगले ही दिन जब मतगणना शुरू हुई, तो चीजें उम्मीद के मुताबिक नहीं हुईं, खासकर शुरुआती रुझानों में। सरकार गठन को लेकर निवेशकों की चिंता के कारण शेयर बाजार के सेंसेक्स में दिन भर उतार-चढ़ाव देखा गया और यह 4,300 अंक से अधिक की गिरावट के साथ बंद हुआ। विदेशी निवेशकों ने करीब 1.5 अरब डॉलर के भारतीय शेयर बेचे, जबकि घरेलू निवेशकों ने भी 3,300 करोड़ रुपये से अधिक की बिकवाली की।

बहुत से ऐसे सट्टेबाज थे, जिन्होंने सिर्फ ट्रेंड्स और सुनी गई खबरों के आधार पर ही बाजार में अपना पैसा लगाया था। यह भी संभव है कि इनमें कुछ नए निवेशक भी हों, जो बाजार के जोखिमों को नहीं समझते हों और सिर्फ अटकलों पर ही भरोसा करते हों। उन्होंने भी पैसे गंवाए, क्योंकि उन्होंने बाजार में गिरावट शुरू होते ही डर के मारे अपने पैसे निकाल लिए। अब एक ही दिन में 30 लाख करोड़ रुपये के नुकसान का आंकड़ा बताया जा रहा है। यह जरूरी नहीं कि इनमें से सारा पैसा निवेशकों का ही हो, क्योंकि नुकसान उठाने वालों में कई व्यापारी भी थे, जो बाजार के खिलाफ दांव लगाकर पैसे बनाने के लिए जाने जाते हैं।

अन्य चर्चाओं के विपरीत, शेयर बाजार हर दिन को अलग-अलग तरह से देखता है, लेकिन यह भविष्य की संभावनाओं पर भी निगाहें रखता है। इसलिए बाजार की चाल से अवगत होने के कुछ ही दिनों के भीतर सेंसेक्स न केवल चार जून की गिरावट से उबर गया है, बल्कि यह तीन जून के उच्चतम स्तर को भी पार कर गया है। असल में इसने 10 जून को एक नई ऊंचाई को छुआ और उम्मीद है कि भविष्य में यह और आगे जाएगा। निवेशकों के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे बाजार के दीर्घकालीन दृष्टिकोण को ध्यान में रखें और बाजार में निवेश करना जारी रखें। शेयर बाजार में अल्पावधि में उतार-चढ़ाव तो होंगे, लेकिन ये सभी निवेश का हिस्सा हैं।

एक निवेशक के तौर पर आपको इस बात का पता होना चाहिए कि अल्पावधि में बाजार कैसे काम करता है और दीर्घकाल में यह निवेशकों को कैसे फायदा पहुंचाता है। जिस तरह से गर्मी से बचने की तैयारी के लिए बाहर के तापमान के बारे में जानकारी होनी चाहिए, उसी तरह से निवेश करने वाले व्यक्ति या संस्थाओं के लिए बाजार की चाल से अवगत होना जरूरी है। आपको उन कारकों के बारे में पता होना चाहिए, जो शेयर बाजार की चाल को प्रभावित कर सकते हैं। साथ ही ऐसे निवेशों पर अपना भरोसा बनाए रखकर दांव लगाना चाहिए, जो अस्थायी उतार-चढ़ाव के बावजूद बेहतर प्रदर्शन कर सकते हैं।

edit@amarujala.com

https://t.me/AllNewsPaperPaid

जीवन धारा

जग्गी वासुदेव

जो लोग आगे बढ़ना नहीं चाहते, उनके जीवन में ठहराव आने लगता है। जो व्यक्ति अपने विकास के लिए निरंतर कोशिश करता है, उसके जीवन में उथल-पुथल होगी और ऐसा होना जरूरी भी है।

विकास के लिए जीवन में उथल-पुथल होती ही है

इन्सान और हिमालय में काफी समानताएं हैं। सबसे बड़ी समानता तो यही कि दोनों के भीतर अपने को चरम पर पाने की ललक अनवरत मौजूद रहती है। और इसी की जद्दोजहद इनके जीवन में तमाम तरह की उथल-पुथल लाती है। फिर भी दोनों रुकते नहीं हैं। दोनों की यही खूबी इन्हें एक-दूसरे के करीब भी लाती है और जोड़ती भी है। जैसे ही आप हिमालय के नजदीक पहुंचते हैं, वैसे ही इस धरती के सबसे युवा प्राणी यानी आप और सबसे युवा पर्वत श्रृंखला हिमालय के बीच एक रूमानियत की शुरुआत होने लगती है। दोनों ही अभी विकसित होने की प्रक्रिया में हैं, इसलिए दोनों ही अब भी बढ़ रहे हैं। अपने चरम को पाने की कोशिश में दोनों की यात्रा जारी है और यह चक्र कभी थमने वाला नहीं है। हालांकि हिमालय के लिए अपनी चोटी या चरम को छूना आसान नहीं है। अपने विकास के इस प्रयास में यह विशाल पर्वत रोज टूटता है और इससे बड़े-बड़े हिमस्खलन होते हैं, हिमनद बनते-टूटते हैं, लेकिन इन तमाम घटनाओं और अवरोधों के बावजूद इसकी यात्रा में ठहराव नहीं है। प्रत्यक्ष रूप से दिखने वाली यह सारी अफरा-तफरी इस पर्वत श्रृंखला के बढ़ने और अपने चरम को छूने की कोशिशों का ही परिणाम है। यही बात मनुष्य के साथ भी देखने को मिलती है, जब भी कोई व्यक्ति आगे बढ़ने का प्रयास करता है, तो उसके जीवन में भी मुश्किलें आती हैं। यह बेहद सांकेतिक है। पर्वत श्रृंखला के बढ़ने से हर रोज भूचाल, भूस्खलन और अन्य प्राकृतिक घटनाएं देखने को मिलती हैं। ठीक ऐसा ही हाल इन्सान के जीवन का भी है, जब भी आप बढ़ना चाहेंगे, तो आपके जीवन में भूचाल आते रहेंगे और मुश्किलें आपका पीछा करती दिखेंगी। जो लोग निष्क्रिय होते हैं और बढ़ना नहीं चाहते, उनके जीवन में ठहराव और स्थायित्व आने लगता है। वैसे तो देखने में उनका जीवन औरों से बेहतर नजर आता है, लेकिन वास्तविकता कुछ और ही है। निष्क्रियता या कुछ नहीं करने की ललक जीवन को नीरस बना देती है। जीवन बेजान-सा हो जाता है। जो व्यक्ति अपने विकास के लिए निरंतर कोशिश करता है, उसके जीवन में उथल-पुथल तो होगी ही। और ऐसा होना जरूरी भी है, तभी इन्सान विकास के लिए प्रेरित होता है। हिमालय में पहला बड़ा हिम-स्खलन कोई पांच करोड़ साल पहले हुआ था। तब से अब तक यह पांच मिलीमीटर की रफ्तार से धीरे-धीरे हर साल उठ रहा है। हालांकि महाद्वीप पर इसका विस्तार चौड़ाई में भले ही पांच सेंटीमीटर प्रति वर्ष हो, लेकिन ऊंचाई के मामले में यह पांच मिलीमीटर की सालाना दर से ही बढ़ रहा है। जीवन के साथ भी हमेशा यही होता है। आप धरातल पर कितना भी कुछ कर लीजिए, लेकिन इससे ऊंचाई तो थोड़ी ही बढ़ेगी। यह सिद्धांत सब पर लागू होता है, फिर चाहे आप भौतिक सुख या कल्याण की खोज में जुटे हों या आध्यात्मिक कल्याण की तलाश में।

प्रखर बुद्धि और संघर्ष

सूत्र

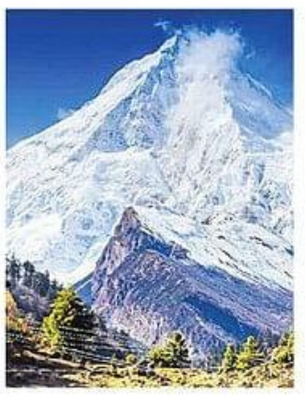

बिना संघर्ष विकास करने के लिए इन्सान के अंदर प्रखर बुद्धि की आवश्यकता होती है, लेकिन ज्यादातर लोग संघर्ष कर के ही विकसित होते हैं। इसके लिए आपके अंदर या तो प्रखर बुद्धि की आवश्यकता होगी या फिर भरपूर भरोसे की। सिर्फ यही दोनों बातें हैं, जो संघर्ष के बिना विकास करवा सकती हैं, अन्यथा आपको जूझना ही होगा। पर्वत के बड़े-बड़े टुकड़े टूटकर उसी के पास गिरते रहते हैं, क्योंकि वह बढ़ना चाहता है।

दूसरा पहलू

अल्जाइमर से पीड़ित 60 लाख से अधिक अमेरिकियों में से कई का अनुभव अपेक्षाकृत सहनीय है। उन्हें 'रोगी' नहीं कहना चाहिए।

बीमारी का पता चलने से जीवन रुक नहीं जाता

मेरी मां ने अपने आखिरी तीन दशक अल्जाइमर के कारण होने वाली स्मृतिहीनता और नियंत्रण की कमी में बिताए। मुझे याद है कि वह रात में घबराकर बहुत पहले मर चुकी अपनी मां को खोजने के लिए मेरे पिता को तीन बजे सुबह जगा देती थीं। पिछली शरद ऋतु में जब मुझे इस बीमारी से खुद के भी ग्रस्त होने का पता चला, तो मैं हर सुबह जल्दी उठकर उन दृश्यों को याद कर अपनी दयनीय स्थिति की कल्पना करता रहता था। अपने व्यक्तिगत अनुभव से मैं जानता हूं कि बीमारी का पता चलने से जीवन रुक नहीं जाता। वह हमारे जीवन के अंत की घोषणा नहीं करता, बल्कि यह जीवन के नए चरण के लिए आमंत्रित करता है।

स्टीफन गेर्टिंजर

यादद्दाश्त खोने के बीच मेरी मां को कई खुशियां मिलीं। उनके जीवन भर का अवसाद अंतिम वर्षों में धीरे-धीरे दूर हो गया, क्योंकि वह अपने अंतर्ज्ञान के पलों को जीने लगी थीं।

बीमारी का पता चलने पर मैं हिल गया था। अपने अंतिम संस्कार की योजना बनानी शुरु कर दी। जैसे-जैसे मैं न्यूरोलॉजिस्ट के व्यावहारिक सुझावों और अपनी पत्नी के आग्रहों को मानने लगा, मुझमें सुधार दिखने लगे।

अगस्त, 1999 में मैंने लिखा था कि याददाश्त खोने के बीच मेरी मां को अनेक तरह की खुशियां मिलीं। उनके जीवन भर का अवसाद अंतिम वर्षों में धीरे-धीरे दूर हो गया, क्योंकि वह अपने अंतर्ज्ञान के पलों को जीने लगी थीं। जो भी उनकी तरफ देखकर मुस्कराता था, उसके लिए वह फ्लाइंग किस उछालती थीं। कुल मिलाकर वह खुश थीं। अपनी मां को देखकर और याददाश्त खोने वाले अन्य लोगों की जीवनियां लिखते हुए मैंने पाया कि अल्जाइमर से पीड़ित 60 लाख से अधिक अमेरिकियों में से कई का अनुभव अपेक्षाकृत सहनीय है। उन्हें 'पीड़ित' या 'रोगी' नहीं कहना चाहिए। वे अब भी खुशी की तलाश में रहने वाले लोग हैं।

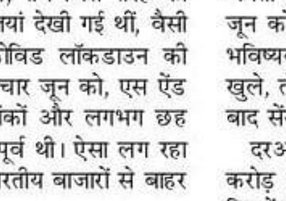

जैसे-जैसे मेरी पीढ़ी की उम्र बढ़ेगी, ये संख्याएं बढ़ेंगी। पर जैसा कि मैंने सीखा है, हमें डरना नहीं चाहिए। शुरुआती पहचान के साथ लक्षणों में अब भी सुधार संभव है, नई चिकित्सा खोजों का लाभ उठाना संभव है। हालांकि बीमारी का पता चलने पर मैं हिल गया था। मैंने अपने अंतिम संस्कार की योजना बनानी शुरू कर दी। मेरी पत्नी मुझसे बात करने की कोशिश करती, लेकिन मैं बात नहीं करता था। मैं सोचता था कि मेरे पास सकारात्मक कुछ भी नहीं है और नकारात्मक विचार उसके दुख को बढ़ाएंगे। लेकिन फिर चीजें बदलने लगीं। जैसे-जैसे मैं न्यूरोलॉजिस्ट के व्यावहारिक सुझावों और पत्नी के आग्रहों को मानने लगा, मुझमें सुधार दिखने लगे। मेरा मिजाज बेहतर हो गया और इसका श्रेय दवाओं को बंद करने को दिया जा सकता है, जो मेरे डोपामाइन स्तर को दबा रही थी। मैं अपनी पत्नी से फिर बात करने लगा हूं। मुझे लगता है कि शायद कुछ मायनों में मैं अपनी मां से ज्यादा भाग्यशाली हूं। पर मैं मां की इस क्षमता से भी प्रेरित हूं कि वे बीमारी के बावजूद परिचित चीजों को देखकर रोमांचित हो जाती थीं। अब अगर कोई मुझे मेरी मां जैसा ही ऑफर दे-89 साल तक याददाश्त खोते हुए जीना, नींद में डूबे रहना, फिर भी जिंदगी का मजा लेना तथा दूसरों को खुशी देना, तो मैं तुरंत उसे लपक लूंगा।

©The New York Times 2024

आंकड़े

केंद्रीय सहायता

केंद्र सरकार ने वर्ष 2023-24 में यूपी को सबसे ज्यादा ऋण दिया। सबसे बड़ी आबादी वाले इस राज्य का जीडीपी में योगदान दूसरे नंबर पर है।

राज्य	राशि
उत्तर प्रदेश	19,345.5
मध्य प्रदेश	14,007.8
तमिलनाडु	10,047.4
राजस्थान	8,466.9
महाराष्ट्र	8,100.8
गुजरात	7,092.1
पश्चिम बंगाल	7,004.6

नोट : राशि करोड़ रुपये में है। | स्रोत : RBI

धौम्य ऋषि अपने शिष्य आरुणि से बोले-खेत की मेड़ बांध आओ, ताकि बारिश का पानी बाहर न जाए। पानी जब नहीं रुका, तो आरुणि खुद मेड़ के बीच लेट गए।

आरुणि से बने उद्दालक

अंतर्यात्रा
संकलित

धौम्य नाम के ऋषि के यहां आरुणि, उपमन्यु और वेद नाम के तीन विद्यार्थी पढ़ते थे। ऋषि बड़े परिश्रमी थे और विद्यार्थियों से भी काम करवाते थे। एक दिन खूब बारिश हो रही थी। गुरु ने आरुणि से कहा कि बेटा, जाओ और खेत की मेड़ बांध आओ, जिससे वर्षा का पानी खेत में ही बना रहेगा। इससे फसल अच्छी होगी।

गुरु आज्ञा से आरुणि खेत पर पहुंचे, तो पानी के वेग से मेड़ का एक हिस्सा टूट गया था। वह उसको बांधने लगे, लेकिन पानी के बहाव से मिट्टी टिक नहीं रही थी। काफी जतन के बाद भी जब पानी रोकना संभव नहीं हुआ, तो गुरु आज्ञा का पालन करने के लिए आरुणि खुद फावड़ा लगाकर कटी हुई मेड़ के हिस्से में लेट गए। इससे पानी रुक गया। कुछ देर बाद बारिश भी बंद हो गई। अब समस्या यह थी कि आरुणि यदि उस जगह से हटते हैं, तो खेत का पानी बाहर निकल जाता। वह उसी जगह पर लेटे रहे।

शाम को जब गुरुजी ने सभी शिष्यों को बुलाया, तो आरुणि नहीं थे। दूसरे शिष्यों से पूछा, तो उन्होंने कहा कि गुरुदेव आपने ही तो उसे मेड़ बांधने के लिए खेत पर भेजा है। गुरुजी ढूंढते हुए खेत पर पहुंचे और देखा कि आरुणि पानी रोककर मेड़ के बीच में लेटे हुए हैं। आरुणि की गुरुभक्ति देख धौम्य ऋषि करुणा से भर उठे। उन्होंने आशीर्वाद दिया कि तुम जगत में यशस्वी और भगवान के भक्त होगे। आज से तुम्हारा नाम उद्दालक हुआ। उपनिषदों में भी उद्दालक का संवाद है।

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 02 मार्च, 1955

मिस्र और इस्राइली सेनाओं में गाजा के निकट मुठभेड़

मिश्र व इसरायली सेनाओं में गाजा के निकट अचानक मुठभेड़
मिश्री सेना का १ अफसर व ३५ सैनिक मारे गये

मिस्र और इस्राइल की सीमा के क्षेत्र गाजा के निकट दोनों देशों की सेनाओं की टुकड़ियों में टक्कर हो गई, जिसमें मिस्र सेना का एक अफसर व 35 अन्य सैनिक मारे गए। इस मुठभेड़ में 30 लोग घायल हैं।

ऑनलाइन हिंसा की जद में मासूम

सोशल मीडिया और मैसेजिंग व गेमिंग प्लेटफॉर्म पर साइबर बुलिंग की घटनाएं बाल मानस पर विपरीत असर डाल रही हैं।

वीरेंद्र बहादुर सिंह | साइबर खतरा

अमेरिका के फ्लोरिडा में 14 साल से कम उम्र के बच्चों के सोशल मीडिया अकाउंट पर प्रतिबंध लगाने का बिल लाया गया है। इस बिल के अनुसार, सोशल मीडिया से बच्चे साइबर बुलिंग का शिकार हो रहे हैं। बिल के अनुसार, बच्चों को सोशल मीडिया के उपयोग के लिए माता-पिता की स्वीकृति जरूरी होगी। यह कदम बच्चों को अवसाद, आत्महत्या जैसे मानसिक स्वास्थ्य की वजह से ऑनलाइन खतरों से बचाने के लिए उठाया गया है। सोशल मीडिया अपनी बात कहने की स्वतंत्रता के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

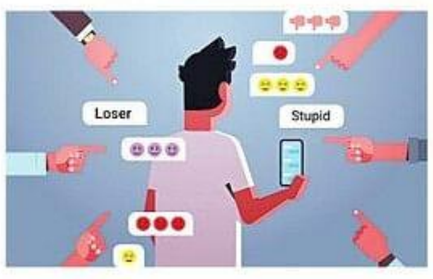

अमेरिका के इतिहास में सोशल मीडिया पर यह सब से बड़ी कार्रवाई है। साइबर बुलिंग एक तरह की ऑनलाइन बदमाशी है, जो डिजिटल माध्यमों से होती है। सोशल मीडिया और मैसेजिंग व गेमिंग प्लेटफॉर्म पर साइबर बुलिंग की घटनाएं बाल मानस पर विपरीत असर डाल रही हैं। सोशल मीडिया पर खास नियंत्रण

न होने से झूठ फैलाना, शर्मनाक तस्वीरें, वीडियो, मैसेजिंग प्लेटफॉर्म से हल्के मैसेज और फोटो की मार चलती है। ऑनलाइन वीडियो गेम के दुरुपयोग के मामले बहुत बढ़ रहे हैं। ऑनलाइन गेमर्स के पास चैट करने के लिए एक माइक्रोफोन के उपयोग के माध्यम से अन्य उपयोगकर्ता से बात करने की सुविधा होती है। इसका उपयोग टीमवर्क को प्रोत्साहित करने, दोस्ती निभाने और सामान्य रूप से गेमिंग के समग्र अनुभव को बेहतर बनाना होता है। कुछ लोग इस तकनीक का गलत फायदा उठाकर इसका लाभ मौखिक दुर्व्यवहार या टेक्स्ट मैसेजिंग के माध्यम से करते हैं। सुविधा के नाम पर या देखादेखी बच्चों को फोन देने के बजाय माता-पिता को यह जानना चाहिए कि फोन की जरूरत क्या है?

विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) की ओर से यूरोप के संदर्भ में कहा गया है कि ऑनलाइन की दुनिया बच्चों के लिए बहुत ही असुरक्षित बन रही है। बच्चे 24 घंटे में लगभग छह घंटे ऑनलाइन रहने लगे हैं। दुनिया का हर छठा बच्चा ऑनलाइन हिंसा का शिकार हो रहा है। इसके लिए यूरोप, पश्चिमी एशिया और उत्तरी अमेरिका के 44 देशों के 11 से 15 साल के 27,900 बच्चों के डाटा का अध्ययन किया गया है, जिससे पता चला है कि 16 प्रतिशत बच्चे साइबर बुलिंग का शिकार हुए थे। चार साल पहले बच्चों में साइबर बुलिंग की मात्रा 12 प्रतिशत थी। कोरोना महामारी के लंबे लॉकडाउन के बाद किशोरों और किशोरियों की दुनिया तेजी से वर्चुअल बन गई। परिणामस्वरूप वर्चुअल हिंसा भी बढ़ी। एक समय घर, स्कूल और समुदायों में बच्चे हिंसा का सामना करते थे। अब एसएमएस, फोटो, वीडियो और ईमेल चैट से साइबर बुलिंग का शिकार बनाया जाता है।

डब्ल्यूएचओ के अनुसार, बच्चों के साथ सब से अधिक साइबर बुलिंग बुल्गारिया, लिथुआनिया, मोल्डोवा और पोलैंड में देखने को मिलती है। साइबर बुलिंग के शिकार बच्चे अपनी रुचि के विषयों पर ध्यान केंद्रित नहीं कर पाते हैं। डिप्रेशन, बेचैनी और गुस्से जैसे मानसिक लक्षण जब शारीरिक लक्षणों थकान, नींद न आना, सिर और पेट में दर्द देखने को मिलता है। माता-पिता को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे अपनी व्यक्तिगत जानकारी नाम, पता और फोन नंबर आदि शेयर न करें। बच्चों को स्क्रीनशॉट, ईमेल और टेक्स्ट मैसेज जैसे साइबर बुलिंग के सबूत इकट्ठा करने की समझ देनी चाहिए।

साल 2022 में अमेरिका की एक कंप्यूटर सिक्योरिटी कंपनी ने जानकारी दी थी कि भारत के बच्चों में साइबर बुलिंग अधिक देखने को मिलती है। 45 प्रतिशत भारतीय बच्चों ने माना था कि कभी न कभी किसी अनजान व्यक्ति की धमकी मिली थी, जिसमें 42 प्रतिशत नस्लवादी, 35 प्रतिशत यौन उत्पीड़न और 23 प्रतिशत जानकारी लीक करने की धमकी थी। अन्य देशों की अपेक्षा भारतीय बच्चे कम उम्र में ही मोबाइल का उपयोग सीख जाते हैं।

भारतीय माता-पिता साइबर अपराध के बारे में बच्चों से कम बात करते हैं। बच्चे डाटा लिमिट खत्म होने तक ऑनलाइन सक्रिय रहते हैं। गर्मी की छुट्टियों में बच्चे पढ़ाई के नाम पर ज्यादा मोबाइल पर सक्रिय रहते हैं। कोविड के दौरान ऑनलाइन पढ़ाई शुरू हुई तो उसी के बाद बच्चों में मोबाइल के प्रति रुचि बढ़ गई, जो अब भी यथावत है। जो बच्चे इंटरनेट पर अधिक रहते हैं, वे साइबर बुलिंग का शिकार अधिक होते हैं।

चिंतन

मोदी 3.0 की टीम के सामने विकास को गति देने की चुनौती

टीम मोदी 3.0 के अधिकांश मंत्रियों ने अपना कार्यभार संभाल लिया। खुद पीएम नरेन्द्र मोदी शपथ के बाद पहली कैबिनेट बैठक में पीएम आवास योजना के तहत 3 करोड़ घरों के निर्माण कार्य को मंजूरी दी, किसान निधि की किश्त भी जारी की। मंत्रियों के विभाग बंटवारे के बाद राजग सरकार एक्शन में आने लगी है। पीएम मोदी ने अपने कैबिनेट के चयन में जहां सोशल इंजीनियरिंग का ध्यान रखा है, वहीं निकट भविष्य के चुनावी राज्यों को भी महत्व दिया है, इसके साथ ही सहयोगियों की आकांक्षाओं को भी पूरा किया है। विभाग बंटवारे में भी प्रमुख दस विभाग भाजपा के ही खाते में हैं, पीएम ने सहयोगी टीडीपी, जदयू, एलजेपी (आर), शिवसेना, हम, रालोद आदि को भी साइज के हिसाब से महत्वपूर्ण मंत्रालय देकर संतुलन साधा है। विभागों के दायित्व में पीएम ने अनुभव, योग्यता और कार्यकुशलता को ध्यान में रखा है। पीएम ने जिस तरह रक्षा, गृह, वित्त, विदेश, रेल, कॉमर्स एंड इंडस्ट्री, शिक्षा, पर्यावरण आदि मंत्रालय के मंत्री को नहीं बदला है, सभी वर्ष 2019 के कार्यकाल से ही संभाल रहे हैं, इससे साफ है कि मोदी 3.0 सरकार भी मोदी 2.0 की तरह अपना मोमेंटम बनाए रखेगी। टॉप टेन में मनोहर लाल, शिवराज सिंह चौहान, जेपी नड्डा और सीआर पाटिल को महत्वपूर्ण मंत्रालय सौंपा गया है, इनके प्रदर्शन पर मोदी 3.0 की सफलता निर्भर करेगी। राजनाथ, शाह, गडकरी, सीतारमण व जयशंकर टेस्टेड हैं। मोदी की राजग सरकार को जहां भाजपा के चुनावी वादे पूरे करने हैं, वहीं घटक दलों की घोषणाओं को भी पूरा करना है, इसके लिए जरूरी है कि सभी मंत्री एक्टिव होकर कार्य करें। भारतीय दंड संहिता, कानून संहिता और साक्ष्य संहिता लागू होने है, विदेशी निवेश को आकर्षित करने और घरेलू अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए आर्थिक सुधार का अगला चरण किया जाना है, एफडीआई नियमों को और उदार बनाया जाना है, मेक इंडिया को बढ़ावा दिया जाना है, आतंकवाद व नक्सलवाद के खिलाफ निर्णायक अभियान चलाया जाना है, सोशल वेलफेयर स्कीम्स की समीक्षा होनी है, सब्सिडी को तर्कसंगत बनाया जाना है, ग्रीन तकनीक, डिजिटल इकोनॉमी, इलेक्ट्रिकल ऑटो क्षेत्र, सेमीकंडक्टर व हरित हाइड्रोजन उद्योग को आगे बढ़ाया जाना है, ऐसे में जरूरी है कि टीम मोदी जल्द से जल्द अपना काम शुरू करें। कार्यभार संभालते ही केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने कहा है कि सरकार आतंकवाद के खिलाफ एक्शन तेज करेगी। शपथग्रहण के दिन हुए जम्मू-कश्मीर में हुए आतंकी हमले में शामिल आतंकवादियों के तार पाकिस्तान से जुड़ रहे हैं। अविभाजित जेएंडके के पूर्व सीएम उमर अब्दुल्ला ने पाक सीमा एलओसी को अभेद्य बनाने की बात कही है। सरकार को इस ओर ध्यान देना होगा, साथ ही पाकिस्तान को कड़ा संदेश देना होगा। विदेश मंत्री एस जयशंकर ने इरादा जता दिया है कि भारत की विदेश नीति के दो मार्गदर्शक सिद्धांत होंगे, भारत प्रथम व वसुधैव कुटुम्बकम। शहरी विकास के क्षेत्र में अनेक सुधारात्मक कदम उठाए जाने हैं, स्मार्ट सिटी के लक्ष्य अधूरे हैं, केन्द्रीय मंत्री मनोहर लाल पर शहरी विकास के साथ ऊर्जा क्षेत्र में सुधार की जिम्मेदारी होगी। जुलाई में नई सरकार का बजट आएगा, जिसमें भाजपा व सहयोगियों के घोषणा पत्र के साथ आत्मनिर्भर भारत, गरीबी उन्मूलन व विकसित भारत के लक्ष्य प्रतिबिंबित होंगे। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण पर राजग सरकार का बजट लाने की चुनौती होगी।

इन थप्पड़ों को वाहवाही क्यों?

विचार
डॉ. संजय शुक्ला

फिल्म अभिनेत्री और हिमाचल प्रदेश के मंडी लोकसभा क्षेत्र से नवनिर्वाचित सांसद कंगना रनौत को चंडीगढ़ एयरपोर्ट पर सीआईएसएफ के एक महिला जवान कुलविंदर कौर द्वारा थप्पड़ जड़े जाने पर सोशल मीडिया में इस घटना के समर्थन और विरोध में व्यापक प्रतिक्रिया देखी जा रही है। सियासत और सिने जगत से जुड़े लोग भी इस थप्पड़ कांड पर अपनी दलीय और वैचारिक प्रतिबद्धता अनुसार टिप्पणियां कर रहे हैं। इस वारदात को अंजाम देने वाली महिला जवान के मुताबिक कंगना ने किसान आंदोलन में शामिल महिलाओं को सौ-सौ रुपए लेकर धरने पर बैठने वाली औरतें बताया था जिससे वह व्यथित थी क्योंकि इस आंदोलन में उनकी मां भी शामिल थी। बहरहाल इस आलेख का उद्देश्य कंगना की हिमायत नहीं है बल्कि इस घटना से उपजे विवाद के दूरगामी प्रभाव से है। कंगना रनौत स्वयं अपने अनेक बयानों और टिप्पणियों के चलते विवादास्पद रहीं हैं। किसान आंदोलन में शामिल महिलाओं के बारे में कंगना के बयान को कतई उचित नहीं ठहराया जा सकता लेकिन निज भावना के आहत होने पर किसी सुरक्षा बल द्वारा किए गए हिंसात्मक हरकत को भी जायज नहीं कहा जा सकता। अलबत्ता मामला सिर्फ कंगना की ही नहीं बल्कि इस प्रकार की ही घटना लोकसभा चुनाव के दौरान उत्तर-पूर्वी दिल्ली से कांग्रेस प्रत्याशी कन्हैया कुमार के साथ भी घटित हुई है। इस वारदात में कुछ लोगों ने कन्हैया के ऊपर स्याही फेंकने के बाद उन्हें चांटा मारा था। इस हमले में शामिल दो युवकों के मुताबिक वे लोग बतौर जेएनयू छात्रसंघ अध्यक्ष कन्हैया कुमार और उनके साथियों के उस नारे से नाराज थे जिसमें उन्होंने भारत के टुकड़े-टुकड़े होने का नारा लगाया था। युवकों का कहना था कि हम सनातनियों के रहते कोई भी भारत का टुकड़े-टुकड़े नहीं कर सकता। इस हमले के बाद भी सोशल मीडिया पर दक्षिणपंथी विचारधारा के समर्थक यूजर्स हमले का समर्थन करते हुए युवकों का महिमा मंडन करने में जुट गए। किसी राजनेता पर स्याही फेंकने या उससे हाथापाई करने की यह कोई पहली घटना नहीं है बल्कि कुछ सालों पहले एनसीपी के प्रमुख शरद पवार, दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल पर भी स्याही फेंकने और हाथापाई जैसी घटनाएं घटित हुई है। इन हरकतों के बाद भी उनके विरोधियों ने काफी चटखारे लेते हुए घटना का समर्थन किया था। बिनाशक लोकतंत्र में सभी को विरोध और प्रदर्शन का अधिकार है लेकिन किसी के मान मर्दन के लिए ऐसे हरकत स्वीकार्य नहीं है।

बीते एक दशक की बात करें तो इस दौरान देश में राजनीतिक और धार्मिक असहिष्णुता और नफरत काफी तेजी से बढ़ी है जिसे सोशल मीडिया ने काफी विस्तार दिया है। सूचना क्रांति के वर्तमान दौर में सोशल मीडिया आम आदमी के जीवन का अहम हिस्सा बन चुका है। सोशल मीडिया को आम आदमी का संसद कहा जाता है लेकिन हाल के दिनों में इस माध्यम का नाकारात्मक स्वरूप भी सामने आने लगा है। अब यह मीडिया धार्मिक, राजनीतिक और वैचारिक नफरत फैलाने वालों का अड्डा बन चुका है। वैचारिक असहिष्णुता, धार्मिक नफरत और राजनीतिक वैमनस्यता के चलते लोग किसी भी हद तक जाने के लिए बेताब है जिसे सोशल मीडिया खूब खाद- पानी मुहैया करा रहा है। कंगना रनौत को थप्पड़ पर सोशल मीडिया में जिस तरह से तर्क, वितर्क और कुतर्क चल रहा है उसने महात्मा गांधी, इंदिरा गांधी और राजीव गांधी के हत्या को भी समर्थन और विरोध के कठघरे में खड़ा कर दिया है। एकबारगी तो यही लगता है कि अच्छा हुआ कि जो इन नेताओं के शहादत के समय सोशल मीडिया नहीं था वरन आज जो परिस्थितियां हैं उसमें इन हत्याओं को भी जायज ठहराने वालों की फौज खड़ी हो जाती।

गौरतलब है कि मुल्क में अनेक ऐसे राजनेता, धार्मिक संगठन से जुड़े लोग, सेलिब्रिटी, लेखक, पत्रकार, एक्टिविस्ट और आम नागरिक हैं जो अभिव्यक्ति की आजादी का लाभ लेकर सोशल मीडिया से लेकर सार्वजनिक मंचों पर ऐसी बातें बोलते या लिखते हैं जिससे एक बड़े तबके की राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक और जातिगत भावनाएं आहत होती हैं लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि व्यक्ति और असहमत लोग हिंसा पर उतारू हो जाएं। दरअसल भारत जैसे सबसे बड़े लोकतंत्र में अनेक राजनीतिक विचारधाराएं जिसके प्रति लोगों में सहमति और असहमति तथा पक्ष व विपक्ष दोनों है। इन विचारों की असहमति के चलते राजनेताओं, कार्यकर्ताओं और आम नागरिकों के साथ हो रहे हिंसात्मक घटनाएं निश्चित तौर पर अलोकतांत्रिक, अराजक और निंदनीय ही है। बेहतर होगा कि हर देशवासी अपनी वैचारिक और धार्मिक प्रतिबद्धता को परे रखकर इन घटनाओं की निंदा करें आखिरकार यह लोकतंत्र की सुरक्षा और मजबूती से जुड़ा मसला है। गौरतलब है कि देश के कानून और लोकतांत्रिक व्यवस्था में विरोध और असहमति के अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त व्यवस्थाएं हैं लेकिन हिंसा कदापि स्वीकार्य नहीं है। आखिरकार हिंसा से लोकतंत्र की बुनियाद पर ही हमला होता है जो हर लिहाज से देश और कानून व्यवस्था के लिए उचित नहीं है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राजनीतिक और धार्मिक वजहों से ही इस देश ने महात्मा गांधी, श्रीमती इंदिरा गांधी और राजीव गांधी को हत्या देखी है। इन हत्याओं के भी मूल में एक बड़े समुदाय की भावनाएं ही थी लेकिन यह देश के लिए आज भी काला अध्याय है।

बहरहाल कंगना और कन्हैया के हालिया मामलों पर गौर करें तो हमलावरों को इन दोनों के बयानों या नारों के कारण यदि उनकी भावनाएं आहत हुई थी तब वे अपनी असंतोष या असहमति का इजहार सोशल मीडिया के माध्यम से कर सकते थे अथवा कानून का दरवाजा खटखटा सकते थे लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। अहम सवाल यह कि जिस सुरक्षा बल के जिम्मे एयरपोर्ट और यात्रियों की सुरक्षा की जवाबदेही है यदि वह स्वयं अपने निजी भावनाओं के चलते किसी यात्री पर हमलावर हो जाए तो उसे जायज कैसे माना जा सकता है? शासकीय सेवा करने वाले प्रत्येक व्यक्ति की सेवाएं आचरण नियमों के तहत ही नियंत्रित होती है लिहाजा यदि कोई सरकारी सुरक्षा जवान स्वयं अपनी ड्यूटी के दौरान हिंसात्मक घटना में शामिल हो जाए तो भला उसकी तरफदारी क्यों होनी चाहिए? इस घटना को मामूली घटना बताने वालों को यह समझना होगा कि यदि महिला जवान अपने भावनाओं के ज्वार में कंगना के साथ कुछ और अनहोनी कर जाती तब क्या होता? क्योंकि आज सेना से लेकर पुलिस के हर जवान के पास आग्नेयास्त्र होता है। बहरहाल कंगना और कन्हैया पर हुए हमलों का जो लोग समर्थन कर रहे हैं अथवा इसे मामूली घटना बता रहे हैं उसके मूल में सीधे तौर पर उनका इन व्यक्तियों से राजनीतिक और वैचारिक विरोध ही है।

प्रजातंत्र में सहमति और असहमति दोनों जायज है लेकिन असहमति की अभिव्यक्ति कभी भी हिंसा नहीं हो सकती। हिंसा विवेक शून्यता का परिचायक होता है इसलिए इसका सदैव प्रतिकार करना चाहिए। बिलाशक किसान आंदोलन एक ऐतिहासिक और राष्ट्रव्यापी आंदोलन था जिसके बारे में किसी भी प्रकार के ओछी टिप्पणियों को उचित नहीं माना जा सकता। अलबत्ता किसान आंदोलन के बारे में कंगना का बयान निश्चित तौर पर जनभावनाओं के विपरित था लेकिन यह भी सच है कि कंगना ने यह बयान समग्र रूप में दिया था न कि महिला जवान के मां को ही लक्ष्य करके दिया था।

अलबत्ता यदि संविधान में अभिव्यक्ति की आजादी है तो इसमें समानता, स्वतंत्रता और सहनशीलता जैसे भाव भी निहित है। यदि कंगना की वर्तमान हैसियत को परे रख दें तो एक नागरिक के तौर पर किसी सुरक्षा बल द्वारा निज भावना के आहत होने पर हिंसा करने की घटना को कैसे उचित ठहराया जा सकता है? जबकि सेना और पुलिस की पहली सीख ही अनुशासन, सहनशीलता और धैर्य है। अभिव्यक्ति की आजादी के बीच राजनेताओं और आम नागरिकों को यह भी समझना होगा कि इस अधिकार की भी एक लक्ष्मण रेखा है। सुप्रीम कोर्ट ने इस आजादी के दुरूपयोग पर गौर करते हुए 'हेट स्पीच' यानि नफरती बयान देने वालों के खिलाफ शासन और प्रशासन को स्वप्रेरित मामला दर्ज करने का आदेश दिया है। हालांकि सुप्रीम कोर्ट का यह आदेश महज कागजी ही साबित हो रहा है। हालिया लोकसभा के चुनाव प्रचार अभियान पर गौर करें तो इस दौरान अमूमन सभी राजनेताओं के जुबान से विपक्षी नेताओं के बारे में बदजुबानी के शब्द बरसते रहे तो दूसरी ओर अल्पसंख्यकों को निशाने पर रखकर मजहबी नफरत की खाई को बढ़ाने वाले स्पीच भी दिए गए लेकिन चुनाव आयोग और प्रशासन किंकर्तव्यविमूढ़ बने रहा। बहरहाल कंगना अब लोकतंत्र के सबसे बड़े मंदिर में पहुंच चुकी है लिहाजा उन्हें अब अपने बयानों के प्रति पहले की अपेक्षा ज्यादा सतर्क होने की जरूरत है ताकि ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो। राजनीतिक दलों से जुड़े समर्थकों और सोशल मीडिया यूजर्स से भी अपेक्षा है कि वे देश के लोकतंत्र के मर्यादा की रक्षा हेतु अपनी जवाबदेही सुनिश्चित करते हुए विचारों की अभिव्यक्ति में संयम बरतें।

(यह लेखक के निजी विचार हैं।)

बालश्रम निषेध दिवस

डॉ रमेश ठाकुर

बाल मजदूरी वैश्विक समस्या

वैश्विक समस्या है बाल श्रम? किसी भी मुल्क के माथे पर सामाजिक कलंक भी है, फिर चाहें वह देश विकसित हो या विकासशील? 2002 में इस बुराई के विरुद्ध प्रतिवर्ष 12 जून के दिन 'अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन' की पहल पर 'विश्व बालश्रम निषेध दिवस' मनाना आरंभ हुआ। इस दिवस का मकसद चाइल्ड लेबर के सभी रूपों को रोकने के लिए जनमानस को जागरूकता करना था। जागरूकता को ध्यान में रखकर ही 2024 की थीम 'अपनी प्रतिबद्धताओं पर कार्य करें' बाल श्रम समाप्त करें, निर्धारित की गई है। आंकड़ों की मानें तो बालश्रम एशिया और प्रशांत क्षेत्र में दूसरे स्थान पर काबिज है। यहां कुल 7 फीसदी बच्चे विभिन्न किस्म की मजदूरी में संलिप्त हैं। यही कारण है कि 62 मिलियन बच्चों की बड़ी आबादी आज भी शिक्षा से महरूम है। रोकथाम के लिहाज से प्रयासों किए जाते हैं कि बच्चों को बाल श्रम की धधकती भट्ठियों से आजाद करवाया जाए, लेकिन परिवारों के मध्य संघर्ष, संकट और आर्थिक मजबूरियां उन्हें बाल श्रम करने को विवश करती हैं। बाल श्रम रोकने में सरकारी व सामाजिक दोनों के प्रयास नाकाफी न रहें, सभी को ईमानदारी से इस दायित्व में आहुति देनी चाहिए। कानूनों की कमी नहीं है, कई कानून सक्रिय हैं। बाल श्रम अधिनियम-1986 के तहत ढाबों, घरों, होटलों में बाल श्रम करवाना दंडनीय अपराध है। बावजूद इसके लोग बाल श्रम को बढ़ावा देते हैं। बच्चों को वह अपने प्रतिष्ठानों में इसलिए काम दे देते हैं क्योंकि उन्हें कम मजदूरी देनी पड़ती है।

बाल मजदूरी रोकने के लिए 1979 में बनी गुरुपाद स्वामी समिति ने बेहतरीन काम किया था। उसके बाद अलग मंत्रालय, आयोग, संस्थान और समितियां बनीं, लेकिन बात फिर वहीं आकर रुक जाती है कि जब तक आमजन की सहभागिता नहीं होगी, सरकारी प्रयास नाकाफी साबित होंगे। अंतरराष्ट्रीय समुदाय विगत कई दशकों से बाल श्रम को समाप्त करने में ईमानदारी से प्रतिबद्धता व्यक्त कर रहा है। बावजूद इसके विश्व में आज भी करीब 160 मिलियन बच्चे बाल श्रम की भट्ठी में तप रहे हैं। बाल श्रम से निपटने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर भी बेहताशा प्रयास हो रहे हैं, लेकिन फिर भी बाल श्रम की समस्या थमने के बजाय और बढ़ रही है। हिंदी फिल्म 'बूट पॉलिश' का एक गाना है कि 'नन्हें मुन्ने बच्चे तेरी मुट्ठी में क्या है, मुट्ठी में है तकदीर हमारी' के बोल न सिर्फ बालश्रम की भट्ठियों में धधकते बचपन के प्रति संवेदना जगाते हैं, बल्कि हुकूमतों के लिए बाल समस्याओं पर अंकुश न लगाने व उनसे जुड़े उत्पीड़न और अपराध के प्रति घोर निराशा भी व्यक्त करते हैं। बाल मजदूरी वैश्विक समस्या का रूप ले चुकी है, इसलिए सिर्फ सरकार-सिस्टम पर सवाल उठाने से अब काम नहीं चलने वाला? समाधान के विकल्प सभी को मिलकर खोजने होंगे? सड़कों पर भीख मांगते बच्चे, ईंट भट्ठों पर काम करते नौनिहाल, विभिन्न अपराधों में लिप्त बच्चे व शिक्षा से महरूम बच्चों को देखकर मुंह मोड़ने के बजाय है, हुकूमतों को चेताना होगा। हमारी चुप्पी ही बालश्रम जैसे कृत्य को बढ़ावा देती है। ऐसे बच्चों के बचपन की तुलना थोड़ी देर के लिए हम अपने बच्चों से करें, तो फर्क अपने आप महसूस कर सकेंगे। आंखों के सामने किसी बच्चे का बचपन खो जाना, हमारे लिए सबसे बड़ी शर्म वाली बात है। ये सच है कि समस्या किसी एक के बूते सुलझने वाली नहीं? इसके लिए, सामाजिक चेतना, जनजागरण और जागरूकता की जरूरत है। बाल मजदूरी और बाल अपराध को रोकने के लिए महिला बाल मंत्रालय, श्रम विभाग, समाज कल्याण विभाग व निपसीड सहित इस क्षेत्र में कार्यरत तमाम संस्थाएं कार्यरत हैं। गैर सरकारी संगठन और एनजीओ हमेशा रोकथाम की दिशा में हमेशा तत्पर रहते हैं। इसके लिए सबसे पहले सामाजिक स्तर पर बाल श्रमिकों के प्रति आम लोगों के जेहन में संवेदना जगानी होगी और बाल श्रम के खिलाफ मन में लड़ाई की प्रवृत्ति पैदा करनी होगी। बाल मजदूरी के बढ़ने के कुछ कारण और भी हैं। पिछड़े राज्यों में बाल तस्करी का बड़ा गैंग सक्रिय है, जो मासूम बच्चों को किडनैप करके उन्हें कुछ समय बाद भीख मंगवाने या मजदूरी में लगा देते हैं। नेशनल क्राइम ब्यूरो के आंकड़े बताते हैं कि तस्कर गिरोह समूचे हिंदुस्तान में रोजाना सैकड़ों बच्चे किडनैप करते हैं जिन्हें बाद में भीख मंगवाने, मजदूरी, बाल अपराध और बाल श्रम की आग में झोंकते हैं। आज का दिन खास है, बाल श्रम रोकने के लिए। सभी को संकल्पित होना चाहिए इस लड़ाई में। कहीं कोई बच्चा मजदूरी करता दिखे, कारण जानना चाहिए। अगर लगे कि काम पर लगाया गया है, तो आरोपियों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई भी करवानी चाहिए।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

चरित्र गठन की व्यायामशाला है संसार

संकलित
दर्शन

संसार न तो अच्छा है, न बुरा। प्रत्येक मनुष्य अपने लिए अपना-अपना संसार बना लेता है। हमारी मानसिक अवस्था के अनुसार ही हमें यह संसार भला या बुरा प्रतीत होता है। अग्नि स्वयं में अच्छी है न बुरी। जब यह हमें गर्म रखती है, तो हम कहते हैं यह कितनी अच्छी है, जब हमारी अंगुली जल जाती है, तो हम इसे दोष देते हैं। यही हाल संसार का है। संसार स्वयं पूर्ण है। पूर्ण का अर्थ यह है कि इसमें अपने सभी प्रयोजन पूर्ण करने की क्षमता है। हमें जान लेना चाहिए कि हमारे बिना भी यह संसार बड़े मजे से चलता जाएगा। हमें उसकी सहायता करने के लिए माथापच्ची करने की आवश्यकता नहीं। परंतु फिर भी हमें सदैव परोपकार करते ही रहना चाहिए। यदि हम सदैव यह ध्यान रखें कि दूसरों की सहायता करना एक सौभाग्य है, तो परोपकार करने की इच्छा एक सर्वोत्तम प्रेरणा शक्ति है। एक दाता के ऊंचे आसन पर खड़े होकर अपने हाथ में दो पैसे लेकर यह मत कहो, 'ऐ भिखारी, ले, मैं तुझे यह देता हूं।' तुम स्वयं इस बात के लिए कृतज्ञ होओ कि इस संसार में तुम्हें अपनी दयालुता का प्रयोग करने और इस प्रकार पूर्ण होने का अवसर प्राप्त हुआ। धन्य पाने वाला नहीं, देने वाला होता है। भलाई के सभी कार्य हमें शुद्ध और पूर्ण बनाने में सहायता करते हैं। यह संसार न तो तुम्हारी सहायता का भूखा है और न मेरी। परंतु फिर भी हमें निरंतर कार्य करते रहना चाहिए, परोपकार करते रहना चाहिए। क्योंकि इससे हमारी ही भला है। यही एक साधन है, जिससे हम पूर्ण बन सकते हैं।

धन कमाने के साथ भक्ति भी करें

संकलित
प्रेरणा

एक दिन कबीरदास अपना काम कर रहे थे। काम करते समय वे भगवान का ध्यान भी कर लेते थे। पूरे दिन कबीरदास ऐसा ही करते थे। एक व्यक्ति उन्हें कई दिनों से देख रहा था। उसने कबीरदास से पूछा कि आप भक्त हैं, लेकिन आपको अलग से भक्ति करते हुए मैंने नहीं देखा। कबीर दास जी ने उस व्यक्ति की बात सुनी और कहा कि इस प्रश्न का उत्तर मैं दूंगा, लेकिन अभी तुम मेरे साथ चलो। हम थोड़ा घूम आते हैं। रास्ते में उन्हें एक महिला दिखाई दी। वह महिला पानी भरकर लौट रही थी। उसके सिर पर पानी से भरा मटका रखा था और वह अपनी मस्ती में गीत गाते हुए जा रही थी। उस महिला ने मटके को पकड़ा भी नहीं था। उसके सिर पर मटका स्थिर था और उसका पानी भी नहीं छलक रहा था। कबीर दास जी ने उस व्यक्ति से कहा कि ये महिला पानी लेकर जा रही है। सिर पर मटका रखा है, लेकिन उसने मटके पकड़ा भी नहीं है और गीत गाते हुए जा रही है। इसका ध्यान अपने मटके पर है, गाने पर भी है और रास्ते पर भी है। कबीर जी ने उस व्यक्ति को आगे समझाया कि इस महिला की तरह ही मैं भी काम करते-करते भगवान का ध्यान कर लेता हूं, भक्ति कर लेता हूं। दुनियादारी के काम करते हुए भी मेरा मन भगवान की भक्ति में ही लगा रहता है। मैं ये काम भी कर लेता हूं और भक्ति भी कर लेता हूं। ठीक इसी तरह जीवन में संतुलन बहुत जरूरी है। हमें धन भी कमाना चाहिए और भक्ति भी करते रहना चाहिए।

अंतर्मन

आज की पाती

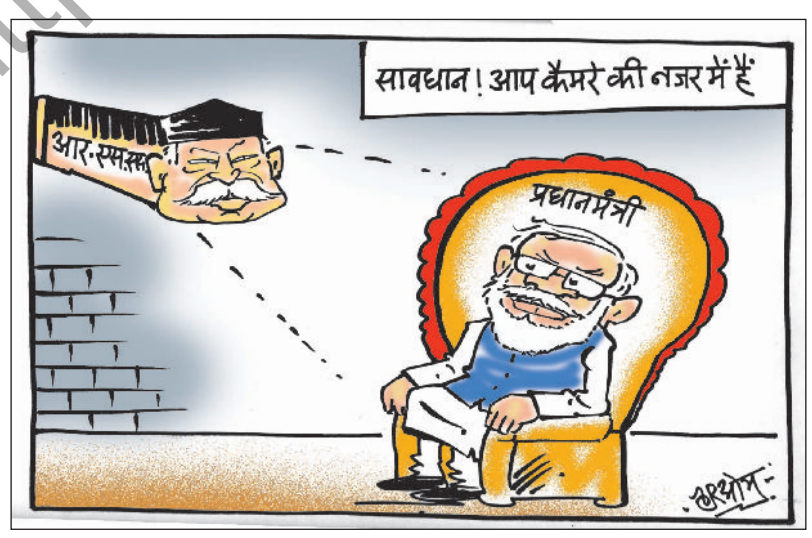

रील्स न बने परेशानी का कारण

दुनिया में डिजिटल दौर चल रहा है। अब लोग सोशल मीडिया का प्रयोग भी खूब कर रहे हैं। सोशल मीडिया मनोरंजन के साथ-साथ जानकारियों का भी बहुत बढ़िया जरिया है, लेकिन कुछ लोग इसे अपनी मशहूरी पाने के लिए भी प्रयोग करते हैं और इस पर अपनी तरह-तरह और विचित्र तरह की सेल्फी और पोस्ट डालते हैं। आजकल रील्स का ट्रेंड चल रहा है और इसमें लगभग हर उम्र के लोग शामिल हैं। लोग अपने दोस्तों और दूसरे लोगों को दिखाने के लिए रील्स बनाकर सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर शेयर कर रहे हैं। कुछ तो जान को जोखिम में डाल कर और कुछ अपनी इज्जत को भी दांव पर लगाकर रील्स बना रहे हैं। महिलाएं और लड़कियां भी इस मामले में पीछे नहीं हैं। रील्स जान पर भारी न पड़े, इसके लिए सरकार, प्रशासन और समाज को एकजुट होकर प्रयास करने चाहिए।

- अशोक साहू, कांकेर

ट्रेंड

विकास मुख्य भूमिका निभाएं

संचार मंत्री के रूप में कार्यभार संभालने पर गौरवान्वित महसूस कर रहा हूं। चलिए, साथ मिलकर एक ऐसे भविष्य का निर्माण करते हैं जहाँ अवसरों की पहुंच कभी भौगोलिक दूरियों पर निर्भर न रहे तथा देश की विकास यात्रा में मुख्य भूमिका निभाएं।

-ज्योतिरादित्य सिंधिया, केंद्रीय मंत्री

शुभ कर्म ही मूल आधार

शुभ व पवित्र कार्यों में कभी विलम्ब न करें। जीवन की महान उपलब्धियां अर्थात उत्कर्ष उन्नयन में सही समय पर उत्साह और सत्यनिष्ठा के साथ किये गये शुभ कर्म ही मूलाधार है

-अवधेशानंद, आध्यात्मिक गुरु

काले कारनामे

एनडीए गठबंधन की सरकार और नरेंद्र मोदी को प्रधानमंत्री बने 24 घंटे भी नहीं हुए कि बीजेपी वालों के काले कारनामे सामने आ गए। संघ परिवार के नेता शांतनु सिन्हा ने बीजेपी आईटी सेल के अमित मालवीय पर यौन शोषण का आरोप लगाया है। जांच होनी चाहिए।

-सुप्रिया श्रीनेत, कांग्रेस नेता

खराब सामग्री हटा दी

नई बोतल में पुरानी शराब। पूर्णता के लिए पुराना, कुछ खराब सामग्री हटा दी गई और आवश्यक सामग्री जोड़ दी गई। कैबिनेट में ताजा रखा गया। खाने का सामान नहीं मिलेगा।

-हर्ष गोयनका, उद्योगपति

करंट अफेयर

पाक मीडिया दो साल से चुप रहने के लिए बाध्य

पाकिस्तान के पूर्व प्रधानमंत्री इमरान खान ने मंगलवार को दावा किया कि पिछले दो साल से सरकार ने मीडिया को चुप रहने के लिए बाध्य कर दिया और असहमति जताने वाले पत्रकारों को दमन का सामना करना पड़ा है। कई मामलों में आरोपी खान को 10 महीने पहले गिरफ्तार किए जाने के बाद से रावलपिंडी की उच्च सुरक्षा वाली अडियाला जेल में रखा गया है। उन्हें कुछ मामलों में दोषी भी ठहराया गया है। इमरान (71) खान ने सोशल मीडिया मंच 'एक्स' पर कहा, पाकिस्तान में मीडिया हमेशा राज्य के नियंत्रण में रहा है, वहीं पत्रकारों को उनके आलोचनात्मक नजरिए के लिए निशाना बनाया गया है। पाकिस्तान में पिछले दो साल में मीडिया को चुप रहने के लिए बाध्य किया गया है और असहमति जताने वाले पत्रकारों को दमन का सामना करना पड़ा है। बेहतर होगा पर बयान ऐसे समय आया है जब खान के प्रतिद्वंद्वी और पूर्व प्रधानमंत्री नवाज शरीफ की बेटी मरयम नवाज की अगुवाई वाली पंजाब सरकार ने हाल ही में 'पंजाब मानहानि अधिनियम 2024' पेश किया है, जो मानहानि से जुड़ा विवादास्पद कानून है और यह फर्जी खबरों के नाम पर प्रेस की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाता है।

ऑफ बीट

हमारा व्यक्तित्व पांच प्राथमिक कारकों से बना

माना जाता है कि हमारा व्यक्तित्व आम तौर पर पांच प्राथमिक कारकों से बना होता है: अनुभव के प्रति खुलापन, कर्तव्यनिष्ठा, बहिर्मुखता, सहमतता और विक्षिप्तता, हममें से प्रत्येक की रैंकिंग निम्न से उच्च तक होती है। जो लोग बहिर्मुखता में उच्च स्थान पर हैं, जिन्हें बहिर्मुखी कहा जाता है, वे आमतौर पर अपनी बाहरी दुनिया पर ध्यान केंद्रित करते हैं। वे अधिक आशावादी होते हैं, मेलजोल से ऊर्जावान होते हैं और सामाजिक मेलजोल का आनंद लेते हैं। स्पेक्ट्रम के दूसरे छोर पर, अंतर्मुखी लोगों के शांत, गहन विचारक होने की अधिक संभावना होती है, जो अकेले रहकर ऊर्जावान होते हैं और अवलोकन करके सीखते हैं (लेकिन जरूरी नहीं कि वे शर्मीले हों)।

लेकिन क्या होगा यदि आप न तो अंतर्मुखी हैं और न ही बहिर्मुखी - या आप दोनों में से कुछ हैं? एक अन्य श्रेणी बेहतर ढंग से फिट हो सकती है: उभयमुखी। वे स्पेक्ट्रम के मध्य में हैं और उन्हें सामाजिक अंतर्मुखी भी कहा जाता है। उभयमुखी वास्तव में क्या है? एम्बिवर्ट या उभयमुखी शब्द 1923 में उभरा। हालांकि शुरुआत में इसे अंतर्मुखी-बहिर्मुखी स्पेक्ट्रम के हिस्से के रूप में नहीं अपनाया गया था, हाल के शोध से पता चलता है कि एम्बिवर्ट एक अलग श्रेणी है।

अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से hbcgpati@gmail.com पर भेज सकते हैं।

https://www.readwhere.com/epaper

https://t.me/AllNewsPaperPaid https://t.me/AllNewsPaperPaid

Want to get these Newspapers Daily at earliest

1. AllNewsPaperPaid
2. आकाशवाणी (AUDIO)
3. Contact I'd:- https://t.me/Sikendra_925bot

Type in Search box of Telegram
@AllNewsPaperPaid And you will find a Channel
Name All News Paper Paid Paper join it and receive
daily editions of these epapers at the earliest

Or you can tap on this link:

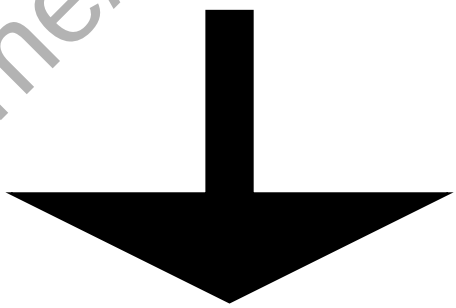

https://t.me/AllNewsPaperPaid

https://t.me/AllNewsPaperPaid https://t.me/AllNewsPaperPaid

https://t.me/AllNewsPaperPaid